Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जड़ से उखड़े हुए

(नारी संवेदनाओं की कहानियाँ)

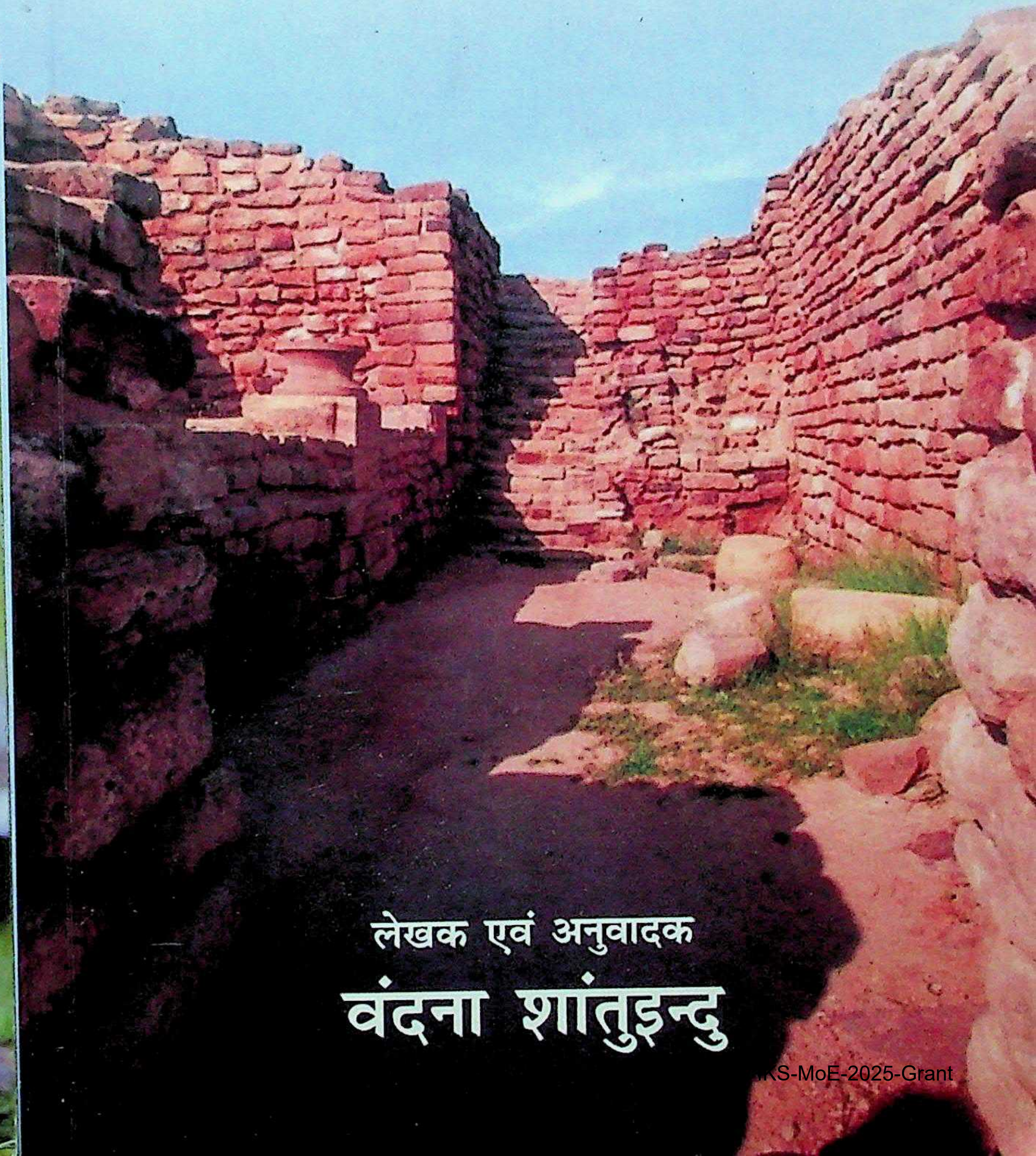

लेखक एवं अनुवादक

वंदना शांतुइन्दु

KS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जड़ से उखड़े हुए

(नारी संवेदनाओं की कहानियाँ)

प्रिय क्षमा जी
एवम अग्निशेखर जी
सादर वंदन सह
सप्रेम
अवलोकनार्थ

लेखक और अनुवादक

वंदना शांतुइन्दु

— वंदना शांतुइन्दु
6.12.20

G.M. College of Education, Bantalab, Raipur, Jammu
Acc. No. ......
Date ......

अग्निशेखर और क्षमा कौल
द्वारा यह
पुस्तक सप्रेम भेंट

डायमंड बुक्स
www.diamondbook.in

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

© लेखकाधीन

प्रकाशक : डायमंड पॉकेट बुक्स (प्रा.) लि.
X-30, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, फेज-II
नई दिल्ली-110020
फोन : 011-40712200
ई-मेल : sales@dpb.in
वेबसाइट : www.diamondbook.in
संस्करण : 2022
मुद्रक : आदर्श प्रिंटर्स, शाहदरा, दिल्ली-110032

Jad se Ukhade Hue **(Naari Sanvednaon ki kahaniyan)**

By : *Vandana Shantuindu*

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अर्पण

भारतीय भाषाओं की जननी
संस्कृत को

G.M. College of Education
Raipur, Bantalab
Jammu
Acc No. 9653
Dated 19.12.2023

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अनिल शर्मा 'जोशी'
उपाध्यक्ष
ANIL SHARMA 'JOSHI'
Vice Chairman

केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल
KENDRIYA HINDI SHIKSHAN MANDAL
शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार
(Ministry of Education, Govt. of India)

शुभकामना संदेश

हाल ही में मुझे वंदना शांतुइंदु के कहानी-संग्रह 'जड़ से उखड़े हुए' पांडुलिपि देखने का मौका मिला। वंदना जी गुजराती मूल की जानी-मानी लेखिका हैं। मूलतः यह कहानी संग्रह गुजराती में है। हिंदी में इसका अनुवाद स्वयं लेखिका ने किया है। कहानी संग्रह का शीर्षक भले ही 'जड़ से उखड़े हुए' हो लेकिन इस संग्रह की लेखिका अपनी जड़ों से जुड़ी हुई हैं, न केवल जुड़ी हुई हैं बल्कि बहुत गहरे तक जुड़ी हुई हैं। अपनी जड़ों से जुड़कर ही कोई लेखक ऐसी संवेदनशील कहानियां लिख सकता है। कहने को तो कहा जा सकता है कि बिना संवेदनशील हुए कोई रचनाकार रचना नहीं कर सकता लेकिन संवेदनशीलता का स्तर ही एक रचनाकार को साधारण और दूसरे को असाधारण या कहें कि कालजयी रचनाकार बनाता है।

वंदना जी के कहानी संग्रह 'जड़ से उखड़े हुए' की कहानियां न केवल दिल को छूती हैं बल्कि दिमाग को भी झकझोरती हैं। इन्हें सिर्फ नारी संवेदनाओं की कहानियां नहीं कहा जा सकता। ये मानवीय संवेदनाओं में रची-बसी ऐसी कहानियां हैं, जो हमारा परिचय एक ऐसी नई दुनिया से करवाती हैं, जो हमें एकबारगी चौंकने पर मजबूर करती हैं। यही इन कहानियों की सफलता भी है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि संग्रह की कहानियों के विषय चिरपरिचित नहीं बल्कि नए हैं। अपने विषयवस्तु, कहन और अपने शिल्प में ये कहानियां एक नएपन और ताजगी का अहसास करवाती हैं। यही इन कहानियों की सबसे बड़ी ताकत है।

मैं इस संग्रह के लिए वंदना जी को बधाई देता हूं और मेरी शुभकमनाएं हैं कि वे गुजराती के साथ-साथ हिन्दी साहित्य जगत में भी अपना यशस्वी स्थान बनाएं।

(अनिल शर्मा 'जोशी')

कार्यालय : केंद्रीय हिंदी संस्थान, दिल्ली केंद्र, बी-26 ए, कुतुब सांस्थानिक क्षेत्र, शहीद जीत सिंह मार्ग, नई दिल्ली-110016
फोन : 011-49786923 E-mail : vicechairmankhs@gmail.com

निवास : फ्लैट नं. 80, डी.डी.ए. फ्लैट्स, पॉकेट-1, सैक्टर-1, द्वारका, नई दिल्ली-110075, मो. 9899552099 E-mail : anilhindi@gmail.com

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पीर पर्वत-सी पिघलनी चाहिए

कथा संग्रह 'जड़ से उखड़े हुए' गुजराती से स्वयं लेखिका 'वंदना शांतुइंदु' द्वारा हिंदी में अनूदित है।

इस संग्रह की सर्वाधिक प्रशंसनीय बात यह है कि जीवन की उन स्थितियों, पलों, लोगों, स्थलों को पात्र बनाया गया है जो सांस्कृतिक और राजनीतिक-आर्थिक संक्रमण से दो चार हैं। उस संक्रमण के दुख से गुजर रहे हैं अथवा तो संक्रमण काल की स्मृतियों से दुख विभोर हैं। किसी न किसी रूप में हर कोई अपने संदर्भ (जड़) से कटा दिख रहा है। इस कटाव के वर्णन से हर कथा के कथानक से एक विरह-वेदना सा स्पंदन उपजता है। पाठक के अंदर ज्ञान, संवेदना, भाव-समय की गतिशील विडंबना से आप्लावित करते हुए कोई न कोई राजनीतिक, कलात्मक या सांस्कृतिक-आध्यात्मिक प्रश्न को उठाता है। कथाकार की आत्मा इसमें झलकती भी है और थिरकती भी है। ऐसा लगता है कि लेखिका पाठकों से कई प्रकार के वार्तालाप हर शब्द या वाक्य के माध्यम से करना चाहती हैं, ताकि अपने भीतर के संवेदन को जगत् में प्रसारित कर सकें, ताकि किसी शुभ निर्णय या निष्कर्ष को निकाला जा सके।

इस संग्रह में कुल पंद्रह कहानियाँ हैं जो विभिन्न प्रकार की स्थितियों में पड़े, उखड़े लोगों की बातें करती हैं, उससे हमारे मन में एक बड़ा परिदृश्य यह बनता है कि कैसे लोगों का एक परिवार मानसिक दु:ख, ताप, वियोग और प्रभाव के कारणों से छटपटा, बिलबिला रहा है। कितना विषम है यह जीवन।

इन कहानियों में समुद्र, पहाड़ियों, ग्रामीण सरल सीधे लोग, आदिवासी, नमकीन हवा, जो हमारा ही भूभाग उसका शत्रुरूप और वहाँ जेलों में गलती से फँसे मछुवारों की मरणांतक यातनाएँ, अंतरधाराओं में घटता, सेक्युलरिज्म में पिसती सहज मनुष्यता आदि का सहज वर्णन है। इसमें झोंपड़ियाँ, धूल, आर्थिक अभाव से उत्पन्न वैभवहीनता, जाले, चिड़ियें, घोंसले ...इत्यादि के

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जीवन गंध और वैविध्य से भर देता है। यहाँ जीवन के ऐसे-ऐसे दृश्य मिलते हैं कि पाठक के मनोवेगों में उबाल आ जाता है, या तादात्म्य होकर उसमें से प्रत्येक स्तर पर प्रश्न उत्पन्न होता है।

निस्संदेह ये कहानियाँ अपनी मूलभाषा गुजराती में बहुत ही प्रभावशाली, पठनीय होंगीं पर हिंदी में भी इस संग्रह का महत्त्व इस कारण है कि हिंदी के संसार में भी गुजराती भाषा की विशेष भारतीयता भरी गंध भर जाती है। समुद्र का अकूत लवण और जीवन की द्वंद्वात्मकता इसे पठनीय बनाते हैं।

सबसे महत्ती बात जो लेखिका के श्रेय में जाती है, वह है गद्य में काव्य शैली

इस काव्य शैली तथा कहानियों की क्रमवार विवेचना करने का प्रयास करती हूँ। सर्वप्रथम कहानी में, "स्व की पहचान बचाए रखने का प्रचंड प्रयास उसके कानों से लटक रहा था। मैंने कहा कि 'डेजिहोर' सुंदर है"। यह निर्वासन की त्रासदी पर लिखी सशक्त कहानी संग्रह की प्रथम कहानी, जिसके शीर्षक पर संग्रह का भी नाम लेखिका ने चुना है, 'जड़ से उखड़े हुए'।

संग्रह के बहुत से काव्य बिंब रेखांकित करने योग्य हैं, "कभी-कभी पहाड़ों पर से लुढ़कते पत्थर उसे मुट्ठी भींचकर भागते इंसानों जैसे लगते।"

"जो बह गया वह सब उसकी बातों में लौट आता था।"

इन कहानियों में पर्यावरण, नैसर्गिक जीवन की अद्‌भुत झांकियाँ और उस जीवन शैली से विमुखता से उपजते प्रश्न हैं। ये प्रसंग कहानी 'गुजबा राती' से है।

'सफलता का आयाम' कहानी में एक पैराग्राफ सत्य और मौलिकता के विषय में बहुत प्रेरक और शक्तिदायी है, "अरे आयाम! व्हॉट अ सरप्राइज! क्या कहूँ तुम्हें, मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा। यू आर द विनर! इतनी व्यवस्था के बावजूद तूने चोरी न की। तू कितनी कसौटी को पार कर आया है। अपने निर्णय पर अड़े रहना, वह भी करियर के विषय में। कोई विरल ही कर सकता है।...पास होना मतलब अपने विचारों पर अडिग रहना। अपनी अलग पगडंडी बनाना।"

इस कहानी में 'आयाम' और 'जीवन' पात्र नाम बड़े सांकेतिक हैं। यह मूल्यों का संघर्ष हैं। समाज और व्यवस्था में पसरे भ्रष्टाचार की सुविधा तथा स्वीकार्यता, अनैतिकता के समक्ष आत्मा की वाणी में शरण की विजय का उद्‌घोष है।

'खून में धँसी कील' इस संग्रह की एक अत्यंत मार्मिक कहानी है। यह स्त्री विमर्श के जातपात सम्बन्धी, अस्पृश्यता तथा धर्मांतरण की विभीषिका

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

को सफलता से स्वयं में समेटे है। इस कहानी का एक संवाद है:- "ये तो है न बिटवा, जो पुरुष नसीबदार होता है, उसे ही जबर्दस्त पत्नी मिलती है। स्त्री जबर्दस्त हो तो सब ठीक से चलता है ...नहीं तो राम-राम करते बैठो। चला के देखो संसार की गाड़ी। हम जबरी हैं, लुच्ची नहीं। लुच्ची मिली होती तो पता चलता बाप- बेटे को कि कैसे परिवार के साथ तार जुड़े रहते। ....कभी लड़-झगड़ भी पड़े तो उसका मतलब यह नहीं कि दो जात या दो कौम लड़ने बैठी हैं।"

'मोक्ष' एक बहुत मार्मिक कहानी है। विभाजन, धर्मांतरण की विचित्र त्रासदियाँ और उखड़े लोगों का विक्षिप्त मनोजगत है इसमें। 'जय जगन्नाथ' में एक काव्य-बिंब अद्‌भुत है-'आसपास के लोग जगन्नाथ की जूठन जैसे लग रहे थे।' 'वंशज' कहानी में, "नारियल के पेड़ के पीछे से दिख रहा पूर्णिमा का चाँद उसे भोज पत्र जैसा लगा....।" "लहू में घुला हुआ डर हमें रोक रहा होता है।"-यह बहुत गहरी बात है, सामाजिक और वैयक्तिक मनोविज्ञान के संदर्भ में। इस संग्रह की कहानियों में संवेदनाओं का जटिल जाल है। स्मृतियों के बवण्डर हैं।

'जाले से छनती धूप में' कहानी में वंदना शांतुइंदु की वर्णन शक्ति की सूक्ष्मता के दर्शन होते हैं, "पूरी खिड़की मकड़ी के जालों से भरी थी। छोटी-बड़ी मकड़ियाँ जाल बुनने में व्यस्त थीं। खिड़की की दरार में से धूमिल उजाला आ रहा था। मकड़ी के शिकार हुए कीड़े जाले में लटक रहे थे। जाले में लगी धूल से वह मलमल जैसा दिख रहा था। उसकी नजर जालियों में उलझती रही; फिर तंतु के सहारे ऊपर देखा, किरण में उड़ती रज को वह देखती रही। सरक कर धूप की किरण के नीचे आकर खड़ी हो गई। ...उसने फिर से मकड़ी की ओर देखा, जावेद के शब्द कानों में गूंजने लगे ....।" और फिर नवसंकल्प - 'मेरा नाम आयशा नहीं आयुषा है। आ..यु..षा।" जबरदस्त है और फिर -शाबाश! तू हिंदू लड़की को भगा लाया। तू सच्चा मुसलमान है। तू काफिरों की इज्जत से खेलेगा। तू सच्चा मरद है। पर तुझे अपनी वाली से भी शादी करनी पड़ेगी। तेरी बुआ की बेटी से। हम तो चार को रख सकते हैं। हमें कौन रोकने वाला होता है। जावेद के अब्बा अपनी मेहंदी लगाई हुई दाढ़ी को सहलाते हुए, आयुषा की ओर देखकर बोले थे।" और देखिए इसमें संदेश- "अब्बू हँसे थे, ख़ौफनाक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हँसे थे। उनकी हँसने की आवाज आयुषा को ड्रिल मशीन जैसी लगी थी। जिससे उसने पड़ोसी लड़के के पूरे शरीर में ड्रिलिंग करके मार डाला था।" यह रोंगटे खड़े करने वाला सच कड़ाही के खौलते तेल सा है, इस समय हिन्दुस्थान के हरेक पाठक के लिए।

'अंधेरे के रंग' कहानी में प्रयुक्त उपमा देखें- चटाई का बीड़ा बनाते हैं, उसी तरह उसकी नजर रास्ते का बीड़ा बनाने लगी।" यह कहानी भी कट्टरता और सहजता के बीच मनुष्य के पिसने की कहानी है।' मर्द के पैर तो वाचाल। जिसकी बोली जुबेदाएं ही समझती हैं।" धर्मांतरण का त्रास देखें , 'जो भी हो वह हैं तो हिंदू का ही खून.....सलीम बड़ा हुआ और जब उसे पता चला तो वह इरादापूर्वक उस ओर पाँव रखकर ही सोता। घर की चौथी दीवार के रूप में खड़ी दीवार पर थूकता। जुबैदा काँप उठती। सलीम को डाँटती। पर सलीम उसकी भावना पर जैसे कील ठोकता हो ऐसे पूछता, "यह तेरे अब्बू को काफिरों के मंदिर के पहलू में घर बाँधने की कैसे सूझी?" यह कहानी सधी हुई है तथा वर्तमान भारत के राजनीतिक-सामाजिक-धार्मिक विडम्बनाओं और टकराहटों का प्रतिबिंबन करती है ।

'कमु लकड़ी में उपमा-लौकी के बीज जैसे दांत,' 'चेहरा खेत में पड़े मिट्टी के ढेले सा खुरदुरा।' यह काव्य शैली है जो कहानी लिखने में सौंदर्य वर्धन करता है। इस कहानी में सुंदर संवेदनों का दर्शन होता है। राजनीतिक विकास पर प्रश्नचिह्न लगाती हुई यह कहानी विकास में छिपे विनाश और संवेदनशून्यता को रेखांकित करती है। 'पोस्ट मास्टर' कहानी कुल मिलाकर ठीक है। इसमें कुछ काव्याभिव्यक्तियां मुझे बहुत सुहाईं। 'आँखों में इंतजार खचाखच भरा था' आदि। कुल मिलाकर यह कहानी संग्रह वर्तमान जीवन -विडंबनाओं, द्वंद्वात्मकताओं, वर्णनशक्ति की गुणात्मकता से ओत-प्रोत एक पठनीय कहानी संग्रह है। इस कहानी संग्रह में गुजरात अंचल के जीवन-दर्शन, जीवन-शैली, जीवन-संघर्ष का एक यथेष्ट दिग्दर्शन प्राप्त होता है। सम्माननीय एवं प्यारी वंदना शांतुइन्दु को हिंदी में अनूदित इस कहानी संग्रह 'जड़ से उखड़े हुए' के लिए बधाई और शुभकामनाएँ ।

क्षमा कौल ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

खोयी जड़ें

वंदना शांतुइन्दु का यह कहानी- संग्रह 'जड़ से उखड़े हुए' मूलतः गुजराती भाषा में लिखा गया है, जिसका हिन्दी में अनुवाद स्वयं लेखिका ने ही किया है। वास्तव में, मातृभाषा में ही रचनात्मकता अपने शिखर को प्राप्त करती है। सृजन की सही भाषा मातृभाषा ही है। लेखिका ने अपनी मातृभाषा गुजराती में कहानियों को लिखा है और स्वयं उनका हिन्दी में अनुवाद इस प्रकार किया है कि भाव और शब्द दोनों अक्षुण्ण रहें। संयोग से मैं भी गुजराती और हिन्दी दोनों भाषाओं में पढ़ना-लिखना करता हूँ और इनकी कुछ कहानियों को गुजराती और हिन्दी दोनों भाषाओं में पढ़ा हूँ। इस आधार पर कह सकता हूं कि लेखिका ने हिन्दी में जो यह कहानी-संग्रह प्रकाश में लाया है वह किसी भी कोण से अनुवाद के कारण अपनी मौलिकता से दूर नहीं है।

मूलतः इस संग्रह में संकलित कहानियां नारी संवेदनाओं को केंद्र में रखकर लिखी गई हैं लेकिन उनका सन्दर्भ सम्पूर्ण भारतीय है। भारतीय स्त्री-दृष्टि, स्त्री को समग्रता में देखने-समझने की परम्परा है, वास्तव में समग्रता की दृष्टि यही भारतीय दृष्टि है। यही कारण है कि लेखिका ने अपनी कहानियों में स्त्री को समाज का एक महत्त्वपूर्ण स्तम्भ मानते हुए उसे समग्रता में देखने का प्रयास किया है। पाश्चात्य स्त्री विमर्श ने विवाह संस्था और परिवार की संकल्पना को नकारते हुए स्त्री मुक्ति के प्रश्नों को उठाया है जबकि लेखिका बहन वंदना ने स्त्री सम्वेदनाओं को परिवार और भारतीय संस्कृति व समाज के अनुरूप स्वर देने का काम किया है। इसके अतिरिक्त धर्मान्तरण की समस्या, कश्मीरी पंडितों के विस्थापन की समस्या, देश विभाजन की समस्या और ऐसी कई समस्याएं हैं जिन्हें लेखिका ने बखूबी उठाया है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इस पुस्तक का शीर्षक तो "जड़ से उखड़े हुए" है परंतु कहानियों को पढ़ने के उपरांत अनुभव होता है कि कहानी के पात्र जड़ से उखड़ने के बाद वे अपनी जड़ों से जुड़ने हेतु प्रयत्नशील एवं संघर्षशील हैं। आज का तथाकथित स्त्री विमर्श जहां अधिकतर स्त्री मुक्ति के पाश्चात्य मुहावरों में सिमटा हुआ है वहीं दूसरी ओर बहन वंदना के द्वारा देश और समाज के व्यापक प्रश्नों को उठाते हुए नारी सम्वेदनाओं को समग्रता में चित्रित करना एक नई आशा जगाता है। इनकी कहानियों में कहीं प्रेम की पराकाष्ठा देखने को मिलती है तो कहीं समरसता का स्वप्न यथार्थ में बदलता प्रतीत होता है। कहीं त्याग और प्रेम का उत्कर्ष दिखाई देता है तो कहीं जीवन और मृत्यु का प्रश्न है। कहीं विस्थापन का दर्द है तो कहीं भारतीयता की मजबूत जड़ें समाहित हैं। इस प्रकार इनकी कहानियाँ जीवन के विभिन्न रंग और रूप को उद्घाटित करती हुईं मानवता को स्थापित करती हैं। लेखिका कहीं भी समस्याओं में उलझती नहीं हैं बल्कि समाधान देने का प्रयास करती दिखती हैं। इसके लिए लेखिका अभिनंदन और प्रशंसा की पात्र हैं। लेखिका की लेखनी सृजन की राह पर अनवरत चलकर भारतीय साहित्य को समृद्ध करती रहे ; इस हेतु मेरी ओर से लेखिका बहन बिंदु (वंदना) को ढेर सारी शुभकामनाएं प्रेषित करता हूँ।

डॉ. अतुल कोठरी
राष्ट्रीय सचिव
शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास, नई दिल्ली

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आँखन देखी

संत कबीर ने कहा है कि "तू कहता कागद की लेखी मैं कहता आँखिन की देखी"। मैं भी आँखन देखी में ही विश्वास करती हूँ। कोई भी सृजनकार आँखन देखी, अनुभवों और घटनाओं को ही कलात्मक स्वरूप प्रदान करता है। इसीलिए एक प्रकार से कलात्मकता के साथ प्रस्तुत इतिहास ही साहित्य है।

इतिहासकार तथ्यों और घटनाओं के आधार पर शुष्क विश्लेषण मात्र करता है जबकि साहित्यकार उसे रसप्रद बनाकर प्रस्तुत करता है, जिस कारण वह पाठकों के मन: मस्तिष्क पर दीर्घकाल तक प्रभाव डालता है। साहित्य का समाज पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। हम भारतीय इसे अच्छी तरह से जानते हैं कि किस प्रकार बंकिमचंद्र चटर्जी के उपन्यास 'आनंदमठ' ने सोए हुए समाज को जगा दिया था!

कहानीकार जब कहानी लिखता है, तो स्वयं उसका परकाया में प्रवेश हो जाता है। और फिर तो लेखन में सच के सिवा कुछ आ ही नहीं सकता। आए भी कैसे? क्योंकि अब लेखक, लेखक न रहकर अपनी ही कहानी का पात्र, कथानक या सूत्रधार बन जाता है। इसलिए अब उसे सच के सिवा कुछ दिखेगा ही नहीं, यही सत्य है, यही यथार्थ है। कहीं-न-कहीं कबीर का भी यही अनुभव रहा होगा तभी उन्होंने कहा कि आँखन देखी कहता हूँ। मेरा अनुभव भी इससे अलग नहीं है। मैंने जो कुछ देखा और अनुभव किया वही मेरी कहानियों में आया है। हाँ, इनमें से कुछ कहानियाँ अवश्य काल्पनिक धरातल पर खड़ी हैं, परन्तु वे कहानियाँ भविष्य की बात करती हैं, वर्तमान की नहीं।

बचपन से ही मुझे पढ़ने का शौक रहा है। मेरे माता-पिता दोनों शिक्षक थे। पिताजी, (इन्दु भाई) पूरी देश-दुनिया की ख़बर रखते थे, गाँव (कालवाड़-शीतला, गुजरात) की लाइब्रेरी में समाचार-पत्र और सामाजिक पत्रिकाएँ पढ़ कर जब वे घर आते थे तो उन पढ़ें हुए समाचार-पत्र से हमें

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भी अवगत कराते थे। देश-दुनिया की ख़बरों और घटनाओं से हमें परिचित कराना पिता जी की दिनचर्या में शामिल था। मेरी माँ एक कुशल गृहिणी की भाँति सभी घरेलू कामों को करने के साथ-साथ अपनी शिक्षक होने की भूमिका का निर्वहन भी बड़ी ईमानदारी से करती थी। हम चार भाई-बहनों की परवरिश, घरेलू काम और ऊपर से शिक्षक का दायित्व कोई आसान काम नहीं था। फिर भी, अपनी इस व्यस्त दिनचर्या के बावजूद थोड़ा समय मिलते ही वह कहानियाँ या उपन्यास पढ़ने लगती। फुर्सत मिलते ही हाथों में पुस्तक उठा लेने का संस्कार हम चारों भाई-बहनों को अपनी माँ से विरासत में प्राप्त हुआ है।

मैं कोई साहित्य की औपचारिक विद्यार्थी नहीं रही हूँ, कलम मेरे हाथों में अनायास ही आ गई। हालाँकि यह भी सच है कि सर्जना अनयास ही होती है, सायास तो आलेख या वैचारिक गद्य ही लिखा जा सकता है। इसी कड़ी में जब थोड़ी लेखकीय समझ विकसित हुई तो लगा कि लेखन सिर्फ ''स्वान्तः सुखाय' नहीं हो सकता; यह एक गम्भीर सामाजिक दायित्व भी है। समाज के कई ऐसे गम्भीर विषय हैं, जो साहित्य-सृजन के भी विषय बनने चाहिए। विस्थापन की समस्या, धर्मांतरण की समस्या, शिक्षण की समस्या, अस्पृश्यता, सामाजिक-आर्थिक वैषम्य इत्यादि ऐसे ही विषय हैं। इन विषयों पर पहले ख़ूब लिखा गया है लेकिन आज के अस्मितामूलक विमर्शों ने इन विषयों को साहित्य-सृजन के केंद्र से परिधि पर ला दिया है। समाज में इतनी गम्भीर समस्याएँ खड़ीं हैं, लेकिन तथाकथित नारीवादी लेखन ने सिर्फ स्त्री-पुरुष विवाहेतर सम्बन्धों तक ही स्वयं को सिमटा लिया है।

नारी के दुःख-दर्द और उसकी संवेदनाओं को केवल विवाहेतर सम्बन्धों के साथ जोड़ना या देह-मुक्ति के अधिकार से जोड़ना उसकी एकांगी और विद्रूप व्याख्या है। दुर्भाग्य से स्त्री-लेखन का अधिकांश आज इन्हीं विषयों में उलझा हुआ है। इस विचार से मेरी लेखनी ने धारा बदली और अलग-अलग विषयों पर धारा प्रवाह चलने लगी।

अब प्रश्न होगा कि हिन्दी में ही धारा प्रवाह क्यों? तो मेरा जवाब होगा कि एक हिन्दी भाषा ही तो है, जो हम सब भारतीयों को जोड़ कर रखती है। और बचपन से हिन्दी से लगाव इसलिए रहा कि स्कूल में पाँचवी कक्षा से अभ्यासेतर हिन्दी बालपोथी, हिन्दी पहेली, दूसरी की कसौटी वर्धा से ली जाती थी और रविवार को सजधज के स्कूल जाना अपने आप में बड़ा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मजेदार होता है। बस तब से ही हिन्दी प्रेमी हूँ, वह जारी है, आजतक। दूसरा कारण यह है कि जब भी किसी हिन्दी पत्रिका में मेरी कहानी छपी तब-तब हिन्दी पाठकों के अभिभूत कर देने वाले फोन आए हैं और यूँ ही मैं हिन्दी के प्रेम में बहती चली गई। तीसरा कारण यह भी है कि अगर पंजाबी में मेरी कहानियों की पुस्तक 'गुजराती झलकारा' (जिसमें सात मेरी कहानियाँ और सात निर्झरी मेहता की हैं) आई तो हिन्दी में क्यों नहीं? इसलिए अपनी ही गुजराती कहानियों का अनुवाद मैंने स्वयं हिन्दी में किया, यह मेरे लिए बड़ा अनुभव इसलिए रहा कि इन कहानियों में ग्रामीण पात्र आते हैं, वो अपनी गाँव की बोली बोलते हैं। अब गुजराती बोली को हिन्दी में ढालना मुश्किल था, पर हुआ। मैं भी जानती हूँ कि इसमें मिट्टी की सुगंध है क्योंकि हमारा धरातल एक है हम एक ही धरा में साँस लेते रहे हैं। हमारी संवेदनाएँ आंदोलित तो होंगी ही होंगी हमारे अहसास भी एक दूसरे से जुड़ेंगे, ऐसा मुझे भरोसा है। हमारी भाषा अलग है, भेष अलग है पर संवेदनाएँ एक हैं और यह शत-प्रतिशत सच है। हम अलग परिवेश से आते जरूर हैं पर दुःख दर्द का अहसास हमें एक साथ जोड़ता है।

मैंने हिन्दी में लिखना शुरू किया इसके लिए मैं आई. ओ. सी. बड़ौदा के सेवा निवृत हिन्दी अधिकारी डॉ. माणिक मृगेश जी की आभारी हूँ। उन्हीं के प्रोत्साहन से हिन्दी में लिखना जारी रहा और आज उसी का परिणाम यह पुस्तक है। इसमें वडोदरा की विविध भाषी महिला साहित्यकारों का मंडल अस्मित और संवेदना का भी सहयोग मिला। सखी रेणु जागीरदार को कैसे भूल सकती हूँ? उन्होंने अपनी व्यस्तताओं के बावजूद इस पुस्तक का प्रूफ किया। और मेरी पुत्रवधू आशका भट्ट जिसकी तकनीकी सहायता के बिना यह पुस्तक मुमकिन न थी। मैं शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास के राष्ट्रीय सचिव श्री अतुल भाई कोठारी जी का हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने हिन्दी में लेखन करने के लिए प्रेरित ही नहीं किया बल्कि मेरा आत्मविश्वास भी बढ़ाया। इसी क्रम में, मैं शीतल जी को धन्यवाद देती हूँ जिन्होंने इस पुस्तक का प्रूफ किया। मैं प्रकाशक डायमंड बुक्स के प्रति भी कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ जिनके प्रयास से यह पुस्तक समय पर प्रकाशित हो सकी। अंत में, मैं उन सभी के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने इस पुस्तक में मेरी सहायता की।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

-वंदना शांतुइन्दु,
1, कल्याण नगर, दिवाली पुरा, जे.पी.रोड, वडोदरा-7
मो: 9662059806
ईमेल: vandanaibhatt@gmail.com

मुखपृष्ठ: सिंधु घाटी सभ्यता के धौलावीरा (कच्छ गुजरात) में प्राप्त पाँच हज़ार वर्ष पुराने अवशेष का छायाचित्र।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अनुक्रम

1. जड़ से उखड़े हुए 19
2. गुजबा-राती 29
3. सफलता का आयाम 40
4. खून में धँसी कील 49
5. मोक्ष 60
6. जय जगन्नाथ 66
7. वंशज 73
8. मानवता की माँ 82
9. फॉसिल 92
10. देहली 100
11. जाले से छनती धूप 109
12. अँधेरे का रंग 120
13. कमु लकड़ी 128
14. पोस्ट मास्टर 135
15. कडुआ दरिया 144

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

1.

जड़ से उखड़े हुए

मैं धर्मशाला के बस डिपो पर उतरी तब मूसलाधार बारिश हो रही थी। वैसे तो दिल्ली से जब बस चली तब भी बारिश हो रही थी जो यहाँ पहुँचते-पहुँचते बहुत तेज हो गई। मुझे बारिश बहुत पसंद है। बारिश पसन्द होने के पीछे कारण यह है कि मैं रही गुजरात के कच्छ की, जहाँ वर्षा ऋतु में भी बारिश दो-तीन इंच बरसे तो बहुत है! बचपन ज्यादातर अकाल में ही गुजरा, इसीलिए बारिश का महत्त्व पसन्द से जुड़ गया। अब तो बरसों से वडोदरा में रह रही हूँ पर वहाँ भी इतनी बारिश तो नहीं होती। जिस बारिश के बारे में रोजाना बोलचाल की भाषा में सुना था वह यहाँ साक्षात बरसती देखी! मूसलाधार! रोमांच और डर से घबरा गई थी। इतनी बारिश और घर से इतनी दूर पहली बार अकेली आई थी तो डर भी ठीक ही था। दूर दिखती धौलाधार पर्वतमाला को इस बरसाती चद्दर ने ढक दिया था। मैं प्लेटफार्म पर खड़ी डोलमा की राह देखने लगी। उसने बोला था कि वो लेने आएगी इसलिए मैं निश्िंचत थी। पर वह नजर नहीं आ रही थी और बस डिपो पर गिने-चुने लोग थे इसलिए मेरी घबराहट बढ़ती जा रही थी। सामने कुछ नहीं दिखाई दे रहा था। स्प्रूस और चीड़ के पेड़ छाया चित्र प्रतीत हो रहे थे। मतलब पेड़ों की हाजरी भी न के बराबर थी। डोलमा लेने आने वाली थी इसलिए मैं उसकी राह देख रही थी। मैं खुद को आश्वस्त करने लगी कि कुछ आवश्यक काम आ गया होगा, बाकी वो देर करे ऐसी नहीं है। खुद को सांत्वना दे रही थी कि वो टपकने वाली छत की बूँद की तरह टपकी, 'दीदी..इ..इ बोलते हुए मेरे गले लग गई। मैं कुछ कहूँ उससे पहले मेरा चेहरा देखकर बोल पड़ी, 'अरे! सॉरी बाबा, देर हो गई। कान पकड़ती हूँ, ओ.के.?' अपने चपटे नाक को ऊपर चढ़ाती, चुंधी आँख को और चुंधी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

करके मुझे मना रही थी। मैंने प्यार से कहा, 'अरे! ठीक है रे, होता है ऐसा। चल, घर ले जायेगी कि यहाँ ही...' वह हँस पड़ी। हँसने से उसकी गोरी चिकनी चमड़ी चमक उठी। उसने मेरा बैग उठाया और मेरा हाथ पकड़ा। डोलमा को देखकर मेरा भय गायब हो गया, जो अनजाना था वह पल भर में जाना-पहचाना लगने लगा। प्रेम का जादू ऐसा ही होता है!

टैक्सी ड्राइवर डोलमा का दोस्त था। मुझे देखकर नमस्कार किया। मैंने भी सामने नमस्कार किया। डोलमा मजाकिया अंदाज में बोली, 'दीदी! इसे डाँटो क्योंकि इसकी वजह से मुझे देर हुई। आपको लेने निकल ही रही थी कि ये दूसरे दो लोगों को लेकर आ धमका। मुझे उन्हें बोलना पड़ा कि मुझे बस डिपो जाना है किसी को लेने। पर अपनी बात कहे बगैर चला जाये ये तो उसका स्वभाव ही नहीं। हाँ, फिर तो वही अपनी टैक्सी में लेकर आया। 'और कितनी सफाई दोगी!' मैंने डोलमा को कहा। हम तीनों हँस पड़े और टैक्सी में बैठ गये।

डोलमा और तवांग दोनों इंटरनेशनल पॉलटिक्स, टूरिज्म और खेल जैसे विषयों पर बातें कर रहे थे। और मैं फिर से राहगीरों को देखने लगी। बारिश थोड़ी धीमी हुई थी इसलिए रास्ते पर चलने वालों के चेहरे स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। ज्यादातर चपटा नाक और चिकने चेहरे वाले लोग थे। कोई-कोई नंगे पाँव भी थे उनमें ज्यादातर युवा थे। डिपो पर भी यह देखा था पर घबराहट में इतना गौर नहीं किया था। अब यहाँ टैक्सी में मन शांत हुआ तो आश्चर्य गहरा हुआ। डोलमा को पूछने जा ही रही थी कि इतने में ही वह बोली, "चलो दीदी! घर आ गया।" मैं टैक्सी से उतरी, आसपास देखा। सब कुछ हरा-हरा, भीगा-भीगा। चीड़ और स्प्रूस में से बरसती बारिश सूई की तरह चुभ रही थी। पहाड़ी प्रदेश की वजह से कहीं मुख्य मार्ग से नीचे घर थे तो कहीं सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ती थीं तो कहीं उतरनी पड़ती थीं। डोलमा के घर के लिए सीढ़ियाँ चढ़नी थीं। सीढ़ियों के आसपास रंग-बिरंगे छोटे-छोटे फूल खिले थे, मैं उन्हें तोड़ने के लिए थोड़ा नीचे झुकने लगी, इतने में डोलमा ने तोड़कर मेरे हाथ में रख दिए और बोली, 'चखो, ये फूल नहीं है, बेरी है।' मुझे मेरे कच्छ के चनी बेर याद आ गये। फूल हों तो भी क्या! बचपन में गुलाब, गुलमोहर और इमली के फूल खाये ही हैं। हर जगह इन्सान धरती का उगा ही तो खाता है, मतलब सभी की माँ तो यह धरती है फिर भी वह मेरा तेरा क्यों करता रहता है!

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मैं डोलमा के घर आई। बहुत पुराने समय का एक छोटा-सा कमरा था। मैं कुर्सी पर बैठ गई। कमरे को नजर से टटोलने लगी। एक कोने में हाथ से चलने वाला चरखा था और सामने की दीवार पर लकड़ी की खुली अलमारी थी। जिसमें पुस्तकें थीं और जिसके ऊपर विश्व के क्रांतिकारियों की छवि टंगी हुई थी। मैं पुस्तकें देखने लगी। पूरे विश्व के देशों की क्रान्ति का इतिहास शब्दबद्ध कतारबद्ध सैनिकों की तरह खड़ा था। इनमें से एक पुस्तक झंडा लहराती अलग से खड़ी थी- 'सत्य के प्रयोग'। और मेरी नजर एक छवि पर पड़ी जो नोबेल प्राइज विजेता, म्यांमार की राजस्त्री 'सु की' की थी। राजस्त्री शब्द मैंने डोलमा के मुँह से ही सुना था। उसका कहना था कि राजपुरुष हो सकता है तो राजस्त्री क्यों नहीं? यह तो मेरे मन की बात थी तो मेरे द्वारा स्वीकार सहज था। 'सु की' ही तो वजह थी मेरी और डोलमा के बीच मैत्री की।

हुआ था ऐसा कि एक बार सर्दियों में मैं वडोदरा के तिब्बती बाजार से स्वेटर लेने गई हुई थी। दोपहर का समय था इसलिए भीड़ न के बराबर थी। सयोंगवश मैं जिस स्टॉल पर जा कर खड़ी हुई वह डोलमा की थी। वो टेबल पर पैर फैलाये बैठी थी और 'सु की' की आत्मकथा पढ़ रही थी। यह देखकर मेरा स्वेटर पर से ध्यान हट गया और उससे मैंने बातें करनी शुरू कर दी।

"अरे वाह! 'सु की' को पढ़ा जा रहा है!" उसने पुस्तक बाजू पर रखा और पूछा, "क्या चाहिए आपको? स्वेटर, शॉल, मफलर?" मैं बोली 'वह' पर उसने सुना ही ना हो जैसे! मैंने उसे टेबल पर रखी पुस्तक बताई और पूछा कि जरा देखने दोगी? उसने जैसे बच्चे को उठाते हैं इस तरह पुस्तक अपने हाथ में ली और दूर से दिखाती हुई बोली, "पहचानती हो?" मैंने हँस कर कहा, "जरा हाथ में दो तो सही, आपकी 'सु की' को कुछ नहीं होगा। 'सु की' को कौन नहीं पहचानता? वो काउंटर कूद कर बाहर आई और अपना हाथ मेरी ओर बढ़ाकर बोली, "मैं डोलमा। पर गुजराती वाली डोल याने बाल्टी नहीं।" मैं हँसी और हाथ मिलाकर अभिवादन किया और कहा, "मैं सुचिता। आप तो अच्छी खासी गुजराती बोल लेती हो।"

"हाँ दीदी! बरसों से गुजरात आती रही हूँ इसलिए गुजराती बोलनी भी आ गयी। जहाँ व्यापार करना है वहाँ की भाषा तो सीखनी ही चाहिए न?" मैंने उसकी बात को स्वीकार करते हुए कहा, "पक्की गुजराती। जहाँ व्यापार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

करना है उसकी भाषा तो सीखनी ही चाहिए ऐसा हम गुजराती लोग भी मानते हैं।" हँसते हुए पुस्तक उसने मेरे हाथ में थमा दी और कहा, 'सु की' मेरी आदर्श हैं।" बस वहीं से शुरू हुई हमारी मैत्री जो मुझे इस बारिश में यहाँ धर्मशाला तक ले आई।

डोलमा ने चुटकी बजायी "कहाँ खो गई दीदी।" मैंने देखा सामने डोलमा खड़ी थी। मैं डोलमा के सामने देख रही थी। वर्तमान में लिखा जा रहा इतिहास मैं उसके चेहरे पे साफ पढ़ देख सकती थी। क्या आनेवाले कल के अभ्यासक्रम में इसका पाठ इसके देश में पढ़ाया जायेगा? या हमारे यहाँ जैसे हुआ वही इतिहास दोहराया जायेगा। देश की आजादी के लिए बलिदान तो अनेकों ने दिए पर उनके नाम खो गए! पल दो पल तो लगा जैसे कि शहीद भगत सिंह की कोठरी में खड़ी हूँ। डोलमा ने ब्लैक कॉफी का मग मेरे हाथ में दिया तब मैं वापस उसके कमरे में आई। मैंने मग पकड़ा तभी उसके मोबाइल की रिंग बजी। कॉलर ट्यून में कोई तिब्बती गीत बज रहा था।

डोलमा तिब्बती विस्थापित थी। धर्मशाला में रहती थी। साल भर चरखे पर ऊनी कपड़े बुनती थी और साथ-साथ अपने हृदय के चरखे से कविता भी बुनती जाती। जिस गाँव देश को उसके माँ-बाप के साथ-साथ लाखों तिब्बती, चीन के अत्याचारी आक्रमण की वजह से छोड़ कर भागे थे और भारत में आकर शरणार्थी बनकर रहते थे। उस कभी भी न देखे हुए गाँव के विरह की कविता उसकी कलम से टपकती रहती। वह तिब्बत की स्वतंत्रता के लिए काम कर रहे ग्रुप की सदस्या थी। आश्चर्य तो यह है कि जिस 'सु की' को हम दोनों ने कभी देखा नहीं था वो हमारी मैत्री की सेतू बन गयी! दूसरा आश्चर्य था हमारी उम्र का फासला। मेरी उम्र का उतार शुरू हो गया था और वह अभी चढ़ रही थी।

"डोला! कोई जरूरी काम मेरी वजह से अटका तो नहीं है न?" डोलमा के चहेरे पर चिंता का भाव देखकर मैंने पूछा। उसने जवाब नहीं दिया। वह अपनी चुंधी आँखों को और ज्यादा चुंधी करके विचारों में डूबी कहीं दूर देख रही थी। मैंने उसके काँधे पर हाथ रखा, 'डोला!" वह चौंक गई। मैंने प्रश्न दोहराया और कहा, "कहाँ खो गई? कोई उलझन है? तेरी कोई महत्त्वपूर्ण मिटिंग हो तो जरूर जाना। मेरी वजह से..", "अरे नहीं दीदी! कुछ नहीं, बस यूँ ही।" उसने मुझे पूरा बोलने न दिया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"मुझे नहीं बताएगी!" उसने जवाब न दिया उलटा सामने प्रश्न किया, "फ्रैश नहीं होना है?" मैं समझ गई कि बताना नहीं चाहती है।

"दीदी! सामने वाले घर में जाना पड़ेगा। वहाँ आंटी अकेली हैं। मैंने उन्हें बताया है कि मेरी दीदी आनेवाली है। दीदी! आपको अनुकूल रहेगा। आपके जैसी भी हैं और..."

"और क्या, डोला?"

"और मेरे जैसी भी।"

"मतलब? मेरी समझ में नहीं आया।"

"आपके जैसी मतलब भारतीय हैं और मेरे जैसी मतलब विस्थापित।"

"मतलब? मतलब, कश्मीरी?" मैं आवेश में बोल पड़ी। डोलमा हँस पड़ी, "मैं सही हूँ न?" अब मैंने जवाब नहीं दिया। बैग उठा कर मैं बोली, "चल" मन में तो घमासान चल रहा था क्योंकि कश्मीर और तिब्बत के मुद्दे पर हमारे बीच कई बार बहस हो जाती थी। डोलमा का कहना था कि विस्थापन तो विस्थापन है, पीड़ा ही पीड़ा, अपमान ही अपमान। और मैं कहती कि बात सही है पर थोड़ा फर्क है। अपने ही देश में विस्थापित हो कर रहना वह ज्यादा पीड़ादायक है, जो कश्मीरी पंडितों के साथ हुआ था। हाँ, हमारी आजादी की लड़ाई से आपकी आजादी की लड़ाई जरूर मुश्किल है। हमें तो हमारी भूमि पर से लड़ना था और दुश्मन अंग्रेज भी हमारी भूमि पर थे जबकि आपको पराई भूमि पर से लड़ना है, लड़ना तो क्या सिर्फ वैचारिक आंदोलन चलाना है। बहुत कठिन है। मेरी दलील पर डोलमा हँस पड़ती और कहती, "हा..हा..हा अपने हिस्से का लड्डू हो तो छोटा और दूसरों का हो तो बड़ा! संघर्ष में भी ऐसा! कमाल... कमाल बोलती हो दीदी" और तालियाँ बजाते हुए मुझे चिढ़ाती। किसी भी विषय में से आनंद लूटना उसका स्वभाव था।

"डोलमा की दीदी हो न? आइये। मुझे बताया था उसने कि आप आने वाली हो" डोलमा की पड़ोसन मेरा स्वागत करते हुए बोली। छोटा कद और लंबा गोरा चेहरा जिस पर स्प्रूस के सूई जैसे पत्ते जैसी झुर्रियाँ थीं। कानों में कश्मीरी औरतें जो पहनती हैं वह डोझीहोर लटक रहे थे। कितना कुछ सहकर, भूलकर यह औरत हँसती है! मैं कुर्सी पर बैठी। वो भी सामने की कुर्सी पर बैठ गयी। मैं उसके चेहरे की झुर्रियों में कश्मीर के किसी गाँव की पगडंडी ढूंढने लगी। वह टकटकी लगाए मेरे सामने देख रही थी। हमारी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नजरें मिली तो उसने पूछा, "भारत में कहाँ से?" "गुजरात के कच्छ से। रहती हूँ वड़ोदरा में" मैंने जवाब दिया। उसने हाँ के अर्थ में गरदन हिलाई। मैं समझ गई कि गुजरात तक ठीक है पर कच्छ उनकी समझ में नहीं आया है। मैं झूल रहे डोझीहोर को देख रही थी। 'स्व' की पहचान बचाए रखने का प्रचंड प्रयास उनके कानों में लटक रहा था! मैंने कहा कि डोझीहोर सुंदर है। और वो उछल पड़ी। मेरे पास आकर मेरा कांधा दबाकर बोली, "आपको डोझीहोर मालूम है!"

"हाँ, मेरी एक सहेली कश्मीरी है, उसके कानों में डोझीहोर लटके देखा था, उसने मुझे बताया था इसलिए मालूम है। पर अब वो नहीं पहनती। कहती है कि डोझीहोर तो सुहाग की निशानी है और मेरा सुहाग है, मेरा कश्मीर। कश्मीर जो आतंकवादियों ने हड़प लिया हमसे, फिर अब क्या करें पहन के? अब तो जब कश्मीर, अपने घर वापिस जाएंगे तभी डोझीहोर पहनूंगी मैं बोल रही थी इतने में वह कुर्सी पर वापस बैठ गई थी और अपने कानों पर हथेलियों को रखकर बोली, "डोझीहोर तो हमारी पहचान है। इसे तो मैं मरूंगी तभी कोई निकाल सकेगा, मैं अपने हाथों से निकालूं! हरगिज नहीं। ये डोझीहोर तो है जो मुझे कश्मीरी बनाये रखता है। भले ही आतंकवादियों ने हमे मार काट कर, बलात्कार करके कश्मीर से खदेड़ दिया हो पर हमारे दिल से कश्मीर और हमारी धरती न निकाल पाएंगे? आतंकवादियों को भागना ही पड़ेगा। मेरा बेटा रोज आ कर मुझसे कहता है कि माँ! जरा भी डरना मत। आतंकवादियों द्वारा कत्ल किए हुए सभी पुरुष भूत बन रहे हैं। और भूतों की सेना बनते ही हम उन पर धावा बोल देंगे। फिर देखना, उनको कश्मीर छोड़कर भागना ही पड़ेगा। और फिर सारिका भी है हमारे साथ। कोई माँ थोड़े छोड़ देती हैं अपने बच्चों को?"

मैं क्षणार्ध तो समझी नहीं। सारिका! कौन है यह? तुरंत याद आ गया कि मेरी सहेली जगतजननी माँ पार्वती को कितने नामों से पुकारती हैं -राज्ञी, काश्मीरा, पार्वती और क्या-क्या..। मैं बोल पड़ी कि, 'हाँ, माँ तो साथ होती ही है हमेशा। वो सर हिला रही थी और साथ ही उसके डोझीहोर भी झूल रहे थे। थोड़े समय पहले की आँखों की ऊष्मा अब गायब थी और वहाँ ठंडी उदासी छा गयी थी - कश्मीर में सर्दियों में जमी बर्फ जैसे। मैं घबरा गई। डोलमा को आवाज लगाई। डोलमा दौड़ती हुई आई।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"अम्मा! मोहन बुलाता है, मोहन, तेरा बेटा मोहन भट।" वो फट से खड़ी हो गई,

"आया मेरा लाल! मेरा मोहन।" वो दौड़ने गई पर डोलमा ने उसका हाथ पकड़ रखा था। डोलमा उसे अपने घर में ले जाने लगी, मैं भी पीछे चली। मेरी समझ में न आया कि क्या हुआ।

डोलमा ने डॉक्टर को बुलाया। डॉक्टर आये इतनी देर तक मैं मोहन के नाम की चीखें सुनती रही। डॉक्टर ने आकर इन्जेक्शन दिया। वो बड़बड़ा रही थी, "दोद जाने यस नो बने गम्युँक जारमु छिम वलीथ तने..." "थोड़े उहकार, थोड़ी छटपटाहट और फिर गहरी नींद में सो गई। मैं बड़ी-बड़ी आँखों से उन्हें देख रही थी। डोलमा ने मेरे काँधे पर हाथ रखा, "दीदी! अम्मा का नाम पार्वती है।" मैंने डोलमा के सामने देखा। "रिलेक्स, दीदी! क्या बोल रहे थे?"

"कुछ समझ में न आया।" मैंने काँपती आवाज में कहा।

"ललेश्वरी का वाख गा रही थी। रोज सुबह और शाम ललेश्वरी के वाख गाया करती हैं।-दोद क्या जाने यस नो बने, गर्मक्यु जार मुंछीम वलीथ तने गुरृम गुरृम फिरुसॅ पेयम करने कांह ति परनुनी कने। ललेश्वरी का वाख गा रही थी यह जानकार मैं रोमांचित हो गई। "अर्थ?" मैंने पूछा। डोलमा समझाने लगी,

"दर्द वो क्या जाने जिस पर न बीते, मैंने दुःख के वस्त्र पहने हैं, घर घर फिरी, मेरे साथ कोई नहीं था।"

मुझे एकाएक मीरा की पंक्ति याद आ गयी, 'घायल की गति घायल ही जाने और न जाने कोय।' ललेश्वरी और मीरा के बीच सदियों का फासला फिर भी एक समानता! स्त्री होने की समानता। सदियों से स्त्री की परिस्थितियों की समानता!

मेरी आँखों से आँसू बह पड़े। डोलमा की आँखें भी नम थीं। दूर कुछ देख रही हो ऐसा लग रहा था। गला खंखारते हुए बोली, "अम्मा के बेटे मोहन को और इनके पति को आतंकियों ने पेड़ पर लटका कर फाँसी दे दी थी, उस काली भयानक रात को जब कश्मीरी पंडित कश्मीर छोड़ जम्मू की ओर भाग रहे थे। अम्मा पर एकाएक अभी! लगभग सालों बाद ऐसा दौरा पड़ा है। बाकी तो वह नोर्मल हो रही है। दीदी आपने क्या बातें की?" हमेशा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मौज-मस्ती में रहने वाली डोलमा की नजर में मैं आज गुनाहगार थी। ऐसा भाव था। मैं भी झेंप गई थी। वह निश्वास भरते हुए बोली,

"क्या बात करूँ इसी उलझन में थी तभी मेरी नजर उनके डोझीहोर पर गई। हम औरतें दूसरी तो क्या बात करें? सो मैंने उनके डोझीहोर की तारीफ की। और..."

"दीदी! आपकी गलती नहीं है। मैं ही आपको कहना भूल गई कि कश्मीर के बारे में कोई बात मत करना। पर... चलो जो होना था सो हो गया। आपको विस्थापन का जहर पी कर जीते लोगों का एक नमूना देखने को मिला। दूसरा क्या? दीदी! आप भी एक नमूना हो बाकी!" वो खिलखिलाकर हँस पड़ी। मैं शर्मिंदा थी अपनी मूर्खता पर फिर भी हँस पड़ी। पीड़ा में से जन्मा आँसू मेरी पलकों पर जमा था। सो रही अम्मा की बंद आँखों से अथक पीड़ा आँसू बन कर बह रही थी। मैंने वो आँसू अपने दुपट्टे से पोंछ डाला। झट से स्वस्थ हो जाती डोलमा को मैंने कई बार देखा था इसलिए उसकी स्वस्थता का मुझे आश्चर्य न हुआ। मुझसे बोली, "चलो खाना खाने चलते हैं।" मैंने अम्मा की ओर देखा इसलिए वो समझ गई, "अम्मा अब दो दिन तक जागेगीं नहीं पर हम उन्हें छोड़ कर जाएंगे नहीं। मैंने चुंग ला को बुला लिया है। अभी आएगा। आप फ्रेश होकर आओ। दीदी! यह हमेशा का है। और ऐसी परिस्थिति में अम्मा अकेली नहीं है। कश्मीरी, तिब्बती, सिरीयन, अफगानी हमारी आँखों के सामने हैं और, भी बहुत हैं। यहूदी और पारसी भी हैं न? कितने पागल हो गये, गुमसुम हो गये। जो जहर को हजम कर गये उनके दिल तो सुलगते ही हैं। इसी भूभूल में से तो आया है विस्थापन का साहित्य।

"यहूदियों को मिला ऐसे हर विस्थापित को मिलेगा अपना-अपना जेरूसलम।" बोलते हुए मैं खड़ी हुई। डोलमा कोई तिब्बती गीत गुनगुना रही थी।

रेस्तरां में बैठे, डोलमा जहां बैठी थी इसके पीछे बड़ी खिड़की थी उसमें से धौलाधार पर्वत श्रृंखला दिख रही थी। मैंने डोलमा को देखा। मुझे वो धौलाधार शिखर जैसी लगी। इस शिखर की कैलाश होने की यात्रा की मैं भी साक्षी हूँ इस विचार से मैं रोमांचित हो उठी।

"डोला! तुझे अम्मा कैसे और कहाँ मिली?" डोलमा जैसे मेरे प्रश्न की राह देख रही हो ऐसे बोलने लगी, "दीदी! एक बार दिल्ली से आ रही थी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तब ट्रेन में अम्मा से मुलाकात हुई। बिलकुल सामान्य थी। मेरे साथ बातें कर रही थी। मुझे मेरे चेहरे से पहचान गई थी, पूछा था कि तिब्बती हो न? मैं खुश थी कि चलो कोई तो मिला जो हमें पहचानता है। हमारे चेहरे हमारी पहचान के लिए बचे हैं! बाकी बहुत कल्चरल क्राइसिस हुई है। मैंने उनके बारे में पूछा। उन्होंने अपने पति और बेटे के बारे में बताया फिर वही जो आज आपके सामने हुआ। ट्रेन में डॉक्टर को बुलाना पड़ा। नींद का इन्जेक्शन दे कर सुला दिया था। उनके पास टिकट भी नहीं था। मैं यहाँ ले आई, बस तब से मेरे साथ हैं। उनको एक बार जम्मू ले गई थी इसलिए कि शायद कोई पहचान वाला मिल जाए। पर वहाँ कोई उन्हें पहचानता नहीं था। जहाँ सब खुद की पहचान भूल गए थे, चितभ्रम हो गए थे, वहाँ अम्मा को कौन पहचानेगा? मैंने कितनों से कहा कि उस भयानक रात को इस औरत के पति और बेटे की हत्या की गई थी। मुझे जवाब मिला था कि-उस रात न जाने कितने बाप-बेटों की हत्या हुई थी, कौन किसे याद रखे?

इतना कह कर डोलमा चुप हो गई। उसकी नजर दूर-दूर कहीं चल पड़ी थी। मैं समझ गई कि कातिल पहाड़ों को लांघती उसकी नजरें तिब्बत जो उसका अपना देश है, जिसे उसने कभी भी देखा नहीं है, उसके रास्ते चल पड़ी है!

ऑर्डर की हुई डिश आ गई थी। उसमें से निकल रही भाँप को हाथों से उड़ाते हुए वो बोली, "चलो दीदी! एक..दो और तीन, खाने पर टूट पड़ें। मोमोज मुँह में रखते हुए मैं सोच रही थी कि कितनी जल्दी वह सहज हो जाती है!

रेस्तरां से बाहर निकल कर हम जंगल की ओर चले। दूर एक पहाड़ी की ओर इशारा करते हुए बोली, "दीदी! वहाँ मेरा स्कूल था। पढ़ते कम थे और मस्ती ज्यादा करते थे। छोटे-छोटे बच्चे जब रोते थे तो हम उन्हें समझाते थे कि रोए न, हमारे माँ-बाप हमारे लिए अपना देश लेने गये हैं, अभी आ जायेंगे। और कुछ भी समझे बगैर बच्चे चुप हो जाते थे! 'अपना देश' इन दो शब्दों में कितनी ताकत होती है! है न दीदी?" मैं उसके काँधे पे हाथ रखकर बोली, 'माँ की गोद जितनी हम चुपचाप चलते कब मंदिर रोड पर आ गये पता ही नहीं चला। गेरूए रंग के कपड़े पहने लामा और पारंपरिक वस्त्र पहने और आधुनिक कपड़े पहने युवाओं ने फिर मेरा ध्यान खींचा। नजदीक से स्पष्ट दिखाई दे रहा था, पग की पिंडलियों पर मूंछ जैसे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बाल थे! मैंने डोलमा के पाँव पर नजर डाली, उसने तो स्पोर्ट्स शूज पहने थे। और भी ऐसे थे तो सही। डोलमा ने मेरा हाथ पकड़ा, "दीदी! ढलान है, संभलकर। उसे पता चल गया था कि मेरी नजर कहाँ है, उसकी नजर भी उन युवाओं पर थी।

मंदिर परिसर में बैठी हुई पागल-सी लगती एक औरत के पास मुझे बिठा कर बोली, "दीदी! घर पर जैसे कश्मीरी अम्मा है न? उसी तरह ये हैं तिब्बती अम्मा। तिब्बत से भागे तब से आज तक कैसे भागे, क्यों भागे, क्या-क्या अत्याचार हुआ वो सब बोलती रहती हैं। आज कई साल हो गये, फिर भी! यहाँ लोग दर्शन को आते हैं और वो समझती है कि उनको सुनने आते हैं। उसे कहाँ पता है कि दुनिया के नक्शे में से तिब्बत का नामो-निशान मिट गया है। मैं देखती रही, इस घड़ी में औरत को तो उस घड़ी में सामने ध्यानस्थ मुद्रा में बैठे तथागत बुद्ध को। मैं बड़बड़ाई-आपको दिखता नहीं भगवान! सच क्या है?

डोलमा मुझे खड़ा करते हुए बोली, "सच! सच यह औरत, मैं, अम्मा और ये युवा जो नंगे पाँव चलते हैं और जिसकी पिंडलियों में मूंछ जैसे बाल फूटे लगते हैं। आप जब से आई हैं तब से आश्चर्य से उनको देख रही हैं। वह और कुछ नहीं है, विरोध प्रदर्शित करने का एक तरीका मात्र है। बस जताना चाहते हैं कि यहाँ हमारी जड़ें फूटी हैं। अब यही घर है, गाँव है। जो तिब्बत से विस्थापित होकर आए थे उनकी तीसरी पीढ़ी यहाँ युवा हो गई। उनके पूर्वजों की जड़ें वहाँ तिब्बत में हैं पर जड़े तो और जगह भी अंकुरित हो सकती हैं न? यह हुआ है इन बच्चों के साथ। पिंडलियों में बाल फूटते हैं कभी? आपका आश्चर्य ठीक है, न होता तो मुझे आश्चर्य होता। ये सब चरखे पर बुनना जानते हैं, तो पैर के ऐसे जुराब बुन लिए विरोध प्रदर्शित करने के लिए। उन्हें भी तकलीफ होती होगी, यह जुराब पाँव में चुभते होंगे जरूर। पर हम सब जायें तो जायें कहाँ!"

हमने मंदिर में प्रवेश किया। एक युवक घुटनों के बल बैठकर मस्तक झुकाए हाथ जोड़कर भगवान बुद्ध का वंदन कर रहा था। हम दोनों की नजर उस पर पड़ी, उसने भी वही जुराब पहने हुए थे। हमने एक-दूसरे को देखा। बातों-बातों में मजाक करने वाली डोलमा चुप हो गयी, पर उसकी आँखें बहुत कुछ बोल रही थीं और उनमें लाल डोरे जैसी लकीरें साफ दिख रही थीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

2.

गुजबा-राती

दूर-दूर तक छोटी-बड़ी पहाड़ियाँ माथा उठा कर खड़ी हों ऐसी दिखाई दे रही थीं। दो पहाड़ों के बीच के दर्रे राती को हमेशा पहाड़ उतरते किसी अजगर जैसे लगते थे। वो देखती और सोचती कि ये कब उतरेंगे? या वो भी थम गये हैं वहीं के वहीं, हमारी तरह! कभी-कभी पहाड़ों पर से लुढ़कते पत्थर उसे मुट्ठी भींचकर भागते इंसानों जैसे लगते। वो दृश्य अभी तक वह नहीं भूल पायी थी। जब याद आती तब झोपड़ी के घास के तिनके गिनने लगती। उसकी सास उससे कितनी बार कहती कि,

"तिनके क्यों गिनती रहती हो! बोल न, ऊँची आवाज में चीख-चीख कर बोल, कोई सुनने वाला नहीं है ऐसा मत मानना। बोला हुआ सब स्वर्ग में सुनाई देता है।" वह चुप हो जाती और आकाश को टकटकी लगाए देखने लगती। एक बार राती ने पूछा था,

'बा! आकाश में क्या देखती रहती हो?' बा फट से खड़ी हुई और झोपड़ी की खिड़की के पास आकर जोर से बोली, "टकटकी लगाए देखा करती हूँ।" फिर आकर बैठ गई। राती को उनके व्यवहार पर हँसी आती। उसका शिक्षण उसके दिमाग में प्रश्नों की कतार खड़ी कर देता।

घिस-घिस कर सपाट किए हुए पत्थर पर रखे उबले कंदमूल गुजबा और राती खाने लगी। खाते हुए गुजबा बोली,

"तुझसे कितनी बार कहा है कि तुझे भूखा नहीं रहना चाहिए, खा लिया कर। पर सुनती ही नहीं!"

"आप भी भूखी होती हैं। आपको छोड़कर मैं कैसे खा लूँ? यह आपका बोल-बोल करने का कार्यक्रम थोड़ा रोककर रखो और जब मैं बुलाऊं तब

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आ जाया करो। तब आ जाती तो?" फिर मन ही मन में बड़बड़ाई- 'कौन जाने आकाश के सामने देखकर हाथ लंबे कर-कर के क्या बोलती रहती है! कौन दिखता होगा ऊपर आकाश में! पहले तो ठीक था कि सामने की पहाड़ी पर पालीबा रहती थी तो उनके साथ बातें किया करती थी। पर अब? पाली बा उनकी सखी थी, वो अब दिखती होगी आकाश में!'

"राती! चीख कर बोल। तुझसे कितनी बार कहा है कि चीख कर बोला कर। और खिड़की के पास जा कर बोल। मुझ पर गुस्सा करके चुप मत हो। लड़ना झगड़ना, जो करना है कर, पर चुप मत रह। लड़ेंगे-झगड़ेंगे तो आवाज आयेगी। बोल-बोल कहती रहती हूँ पर तू सुने तब न। कौन सुने, मेरी माँ? मेरी तो कब सुनी तूने!"

"मुझे जँचेगा नहीं, नहीं आयेगा बा! मैंने भी आपको कितनी बार बताया? आपको पहले से ही ऐसी आदत है, चीख-चीख कर बोलने की। आप सब तब दूर-दूर की पहाड़ी पर रहते थे तो इसीलिए बातें करने के लिए जोर से बोलना ही पड़ता था। अब जरूरत नहीं पर फिर भी आप जोर से ही बोलती हैं। क्योंकि आपको आदत जो पड़ गई है। लेकिन मेरी यह आदत नहीं है।" राती गुस्से में बोली। गुजबा खड़ी हुई और खिड़की के पास जा कर आकाश की ओर देख कर बोलने लगी,

"नहीं मानेगी, यह रातडी। मेरी बहू। इसका इरादा ही नहीं है! हमेशा से चली आ रही प्रथा है कि सास के साथ तो बहू सीधी चलेगी ही नहीं! ऐसा वैसा न जाने क्या-क्या सीख कर आती हैं! अगर सास कहेगी कि चूल्हे पर खिचड़ी चढ़ा दे तो सारा चूल्हा चितर देती हैं, बहुएं। मेरी बहू रातडी भी ऐसी ही है, मैं जानती हूँ न।" राती हँसते हुए बोली,

"फिर तो आप भी ऐसे ही होंगे, आप भी अपनी सास की तो बहू ही थी न? बोलती रहती हो इससे तो अच्छा है कि कोई गीत गाओ। गीत में समाज की बातें आयेंगी, आपकी बोली के साथ-साथ हमारे समाज के रीत-रिवाज भी आपके स्वर्ग में संभल जायेंगे।"

"यह बात तो तेरी सही है। मुझे क्यों न सूझी! तुझे किसने बताया कि गीतों में समाज के रीति-रिवाज आते हैं?" गुजबा थोड़ी नरम हो गयी।

"मेरे प्रोफेसर ने बताया था कि लोकगीतों में सामाजिक जीवन आता है, वही मुझे याद आ गया। आप जैसा मानती हो हमारी पढ़ाई के बारे में वैसा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बिलकुल नहीं है, बा! कोई-कोई बात आपकी भी सही है, पर सब नहीं। "ठीक है ठीक है। चल, गीत गाते हैं। चल, याद कर।" गुजबा खिड़की के पास जाकर बोली,

"पर राती ने स्पष्ट ना बोल दिया, "मुझे नहीं आते आपके गीत।" गुजबा फिर गुस्साई, "ये इसलिए तेरी पढ़ाई पर बार-बार बोलती हूँ, समझी? ऐसी तूने कैसी पढ़ाई पढ़ी कि मेरा तेरा करने लगी! हमारा नहीं? चल मैं गाती हूँ तू साथ में तो गायेगी न?" गुजबा गाने लगी,

"उसे कहुडे पानी रे पानी मेवलियु रे
हो पडी गयो ढंढुकाल पानी मेवलियु रे।"
(गहरे कुएँ में पानी रे पानी कैसे लाऊँ रे
चल रहा है अकाल पानी कैसे लाऊँ रे)

गुजबा ने पूरा गीत गाया। जैसा भी आया वैसा राती भी उनके साथ गाती रही। उठते प्रतिघोष सुनाई देते थे। गुजबा खुश होकर बोली "सुनती हो? कोई गा रहा है हमारे पीछे। यह स्वर्ग में समा जायेगा और वक्त के साथ वापस आयेगा, हमारे सबद-बोली। तेरी बात सही। गीत गाया तो पता चला कि पहले अकाल हुआ होगा। कितनी मुश्किल से पानी लाते होंगे! इसलिए तो नदी पर डेम..."

वह चुप हो गई। राती के सामने देखे बगैर खड़ी हो गई और खिड़की के पास जाकर आकाश की ओर देखने लगी। थोड़ी देर चुप्पी साध ली। पर इस स्थिति में चुप रहना गुजबा के लिए समय खराब करने जैसा था। वह वापस राती के पास आई और बोली, "मजा आया न? अब गीत गाया करेंगे। मेरे साथ गाएगी तो सही न?" राती हँसते हुए बोली,

"कितने गीत गाएंगे? कब तक? इतने सारे गीत!" गुजबा उसे भरोसा देते हुए बोली, "उसकी चिंता मत कर। बस मेरे साथ गाएगी न?" राती फिर से हँस पड़ी। गुजबा खुश होती हुई बोली, "हँसती रहे तू बस। पेट में बच्चा है इसके लिए हँस। हँसना भी खुराक है।"

फिर तो बातें खत्म होती तो गीत और गीत खत्म होते तो बातें! सास-बहू की जुगलबंदी चलती रहती थी। गुजबा रोज के खाने का जुगाड़ करती रहती और राती पकाती रहती। आपस में बातचीत भी होती रहती थी। गुजबा राती के द्वारा बोले हुए शब्द आकाश की ओर देखकर दोहराती थी। झोंपड़ी में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आकर बैठते और पहाड़ों को देखा करते। तब सास-बहू के बीच मौन छाया रहता। तब बाहर की हवा का शोर तेज लगता। राती की नजर घास की दिवारों पर घूमा करती। कभी एकाध तिनका हाथ में आ जाता तो जमीन पर कुछ लिखती। गुजबा पूछती कि, "क्या चितरती हो?"

"कुछ नहीं चितरती हूँ, लिखती हूँ।" राती नरम जवाब देती।

"उसे चितरना ही कहते हैं। यह हवा तेरा चितर तो कहाँ मिटा देगी। इससे तो अच्छा है कि बोला कर। बोला हुआ हमेशा स्वर्ग में रहेगा।"

राती सोचती कि इन्हें क्या कहूँ? तिनका या दीवार? नहीं-नहीं, ये तो पूरी की पूरी झोंपड़ी है। बा के प्रति प्रेम उसकी आंखों में उमड़ता।

दोनों की नजर एक जगह पर लगी हुई थी। दोनों की नजर के सामने एक ही दृश्य चल रहा था,

"डेम टूट रहा है...भागो..सलामत जगह पर भागो..।" भय सूचक सायरन बज रहा था। जान बचाने के लिए लोग इधर-उधर भाग रहे थे। गुजबा और उसकी बहू राती घर में अकेले थे। दोनों के पति, मतलब बाप-बेटा कमाने गये हुए थे। भागते हुए लोगों के साथ राती भी घबरा के भागने ही जा रही थी कि तभी उसकी सास गुजबा ने उसे पकड़ लिया। और डेम के पीछे, ऊपर की ओर की पहाड़ी चढ़ने लगे। राती ने देखा था कि जब लोग भाग रहे थे तब गुजबा अनाज की कोठी में से मुट्ठी भर ज्वारी और बाजरी अपने पल्लू में बाँध रही थी! और अनाज की छोटी-सी पोटली अपने नाड़े में खोसते हुए राती का हाथ पकड़ा था।

बरसती बारिश में दोनों कब तक चलते रहे यह उनको पता नहीं था पर भूकंप के तीव्र कंपन से जो पहाड़ी चढ़ रहे थे वह पहाड़ी झटके के साथ ऊठी और बड़ा ऊंचा पहाड़ बन गई! फिर से गुजबा राती को अपने साथ ले कर जमीन पर लेट गई। आकाश में राक्षसी यंत्र चल रहे हों ऐसी आवाजें आ रही थीं।

जब धरा शांत हुई तब दोनों खड़ी हुई। पहाड़ का रूप ले कर खड़ी पहाड़ी को देख गुजबा बोली थी,

"राती! गया, सब कुछ गया! कौन जाने कहाँ तक पहुंचा होगा यह पानी? और ऊपर से यह भूकंप! कोई नहीं बचा होगा", बोलते हुए उन्होंने नाड़े के साथ बाँधी हुई पोटली को टटोल कर देखा। सलामत पा कर उनकी आँखों में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चमक आ गई। राती भयभीत होकर कुदरत का कहर देख रही थी। घबराई आवाज में बोली, "बापू? आपका बेटा?" पत्थर बन गई अपनी नजर को राती पर ठहरा कर बोली, "गए। वो भी गए ही होंगे। सब के साथ पानी में। सरकार ने कितनी ट्रेनिंग दी थी कि जब भय-सूचक सायरन बजे तब उल्टा दौड़ के पहाड़ी चढ़ने लगना। पर..." बोलते हुए वह जोर-जोर से रोने लगी। राती भी अपने पेट पर हाथ फेरते हुए जोर-जोर से रोने लगी। गुजबा ने देखा और तुरंत खुद के आँसू पोंछ कर राती के पेट पर हाथ रखकर पूछा,

"राती?" राती ने हां में सिर हिलाया। राती को प्यार से गले लगाकर बोली, "अरे छोरी! सब तो खत्म नहीं हुआ है। बहुत कुछ बच गया है, अरे! सब कुछ बच गया है रे छोरी! चल, जो बच गया है उसकी देखभाल करते हैं। चल, काम पर लगें।"

जहाँ वो खड़े थे वहाँ जड़ समेत उखड़ गये पेड़ों के तने से डालियों को सटा कर उन्होंने छोटी-सी झोंपड़ी बना ली। एक डाली से जमीन को खोदा। नाड़े से बंधी छोटी सी गठरी खोली, ज्वार की मुट्ठी भरी और रोप दी। फिर राती को बाजरी बताते हुए बोली, "बाद में काम आयेगी।" राती को अब समझ में आया कि बा अनाज को क्यों पल्लू में भरकर गांठें बाँध रही थीं। वरना भागने के समय उसने जब यह देखा तब तो उसे लगा था कि-यह बूढ़ी जीवन बचाने का सोचने की बजाय खाने का सोचती है! बचेगी तो खाएगी न! इतना नहीं समझती? गँवार कहीं की।

वह खड़ी हुई और आड़े पड़े तने के सहारे सो रही गुजबा की बगल में सो गई। जब गुजबा जागी तब उसने देखा कि राती, उसकी बहू, गहरी नींद में सोई हुई है। उन्होंने उसके सिर पर हाथ फेरा और खड़ी हुई। नजर झोंपड़ी पर पड़ी। छोटी-बड़ी डालियों से बनाई गई झोपड़ी धूप में नहा रही थी। उसके चेहरे पर भी धूप आ रही थी। दो-तीन दिन के बाद धूप देखने को मिली थी। जैसे बरसों बाद कोई अपना मिला हो ऐसी प्रसन्नता हो रही थी। डाली के साथ अभी भी बचे हुए कुछ पत्ते हवा में फरफरा रहे थे। गिर चुके या तिरछे हो गये पेड़ विनाश की और पहाड़ी में से बने ऊंचे पहाड़ नवसृजन की गवाही दे रहे थे। उनकी नजर जाकर राती के पेट पर ठहर गई।

जब राती जागी तब उसने देखा कि गुजबा उनके जाने-पहचाने पेड़-पौधे जो कि भूकंप की वजह से गिर गए थे या तो टेढ़े हो गये थे, उनकी पत्तियाँ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बीन रही थी। राती ने आवाज दी, "बा!" ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों में प्रतिघोष उठा-बा..बा.. गुजबा थोड़े पत्ते लेकर उसके पास आई, "ले खा ले। मैंने भी खा लिया।" राती चुपचाप खाने लगी। गुजबा के बूटियों की जानकारी पर उसे पूरा भरोसा था। गाँव में अगर कभी भी कोई बीमार होता था तब गुजबा नजदीक की पहाड़ियों पर से जड़ी-बूटी ले आती और बीमार को ठीक करके ही उसके घर भेजती। पाँव की हड्डी टूटी हो तो भी चलता कर देती थी! फोड़े-फुनसी हो या बुखार, उसके पास हर बीमारी का इलाज था। उसके घर के पीछे के अहाते में चार-पाँच खटिया हमेशा बिछी हुई रहती थीं। बीमार की शिकायत के अनुसार गुजबा जड़ी-बूटी लाती, जब तक ठीक न हो जाये तब तक उसे अपने घर रखकर ही खिलाती-पिलाती थी। शुरू-शुरू में तो राती को यह सब झंझट भरा लगता था। और उसे यह समझ में नहीं आता था कि पराई माथापच्ची में क्यों पड़ना! वो गुजबा को कहती कि- "परायों के लिए इतनी मेहनत क्यों करती हो? अपनी खेती से अपना गुजारा हो जाता है। और जो ठीक हो कर जाते हैं वो आपको अनाज दे कर जाते हैं, उसकी तो आप खिचड़ी बना कर बच्चों को खिला देती हो, फिर आपको मिलता क्या है?"

"तुझे समझ में नहीं आयेगा। तेरी पढ़ाई हुई है शहर में। वहाँ की शिक्षा ही ऐसी है, कुछ पाने के लिए ही पढ़ते हैं। और हम ठहरे वनवासी। किसी को कुछ देने के लिए ही कुछ सीखते हैं, फिर भी जीते हैं। पहले तो सब ऐसे ही थे। यह शहर की पढ़ाई आई और कुछ पाने की गिनती शुरू हुई! क्या मिलता है यह देखना हमारा काम नहीं है, समझी! जिसे जो चाहिए वह कुदरत से मिल जाता है। कुदरत की रचना ही ऐसी है।"

कितना समय हुआ है, यह सास-बहू दोनों सूर्य-चंद्र की गति से जान लेते थे। इस परिस्थिति में कितने सूर्योदय हुए और कितने सूर्यास्त हुए इसकी गिनती राती के पास पक्की थी। तो गुजबा चंद्र की गति से तिथि को जान लेती थी। दोनों कभी लड़ते-झगड़ते तो कभी पुरानी बातें करते रहते थे। जो बह गया वह सब कुछ उनकी बातों में लौट आता था। दोनों की आँखें एक ही जैसे दर्द के आंसू बहाने लगतीं। कौन किसे आश्वासन दे? धीरे-धीरे सिसकियाँ शांत हो जातीं। गुजबा खड़ी होकर आकाश से बातें करने लगती और राती घास-फूस

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

की झोंपड़ी के तिनके गिनते हुए गुनगुनाने लगती। जोर से बोलने की गुजबा की सीख उसने मानी न थी और गुजबा ने भी कहना छोड़ दिया था।

राती पूछती,

"इतनी सारी बातें आती कहाँ से हैं!" गुजबा जवाब देती,

"जो भी सुना है सब कुछ मुझे याद है। महाभारत, रामायण की बातें, गुरु की बातें और माँ-बाप और सास से सुनी बातें, सारी की सारी बातें मुझे याद हैं, और जब जड़ी-बूटियाँ लेने जाती थी तो कभी जल्दबाजी में उनकी इजाजत लेना भूल जाती थी तो अब फुर्सत में इन पौधों से माफी मांगती हूं। वो भी तो जीव हैं, हैं कि नहीं, बोल? मैं उनसे कहती हूँ कि आप हमारे लिए बहुत महत्त्वपूर्ण हो। स्वार्थ के लिए हम प्रकृति के साथ कुछ भी कर लेते हैं, इसका मतलब यह नहीं कि प्रकृति कुछ समझती नहीं है। वह सब कुछ समझती है। तो यह सब बोलने मात्र से मुझे तसल्ली मिलती है। अरे! दिन में जो नहीं दिखते, वे सितारे हैं तो सही, अपनी जगह। मैं उनके साथ भी बातें करती हूँ। अरे जिससे बोलना ही हो, उसके पास बोलने के लिए बहुत है। मेरे साथ न सही, पर प्रकृति के साथ तो बोल। तेरी पढ़ाई ने तुझे जो नहीं सिखाया वह सब कुछ तुझे प्रकृति सिखाएगी।"

राती हँसते हुए बोली, "चलो, एक बार बोलकर दिखाओ।"

"अरे छोरी! मुझ पर भरोसा नहीं बिलकुल!" गुजबा की आँखो में पीड़ा थी। "मैं झूठ बोलती हूँ तुझे ऐसा लगता है? यह प्रकृति हमारे साथ बोलती है और हमारा बोला हुआ आकाश के गर्भ में रहता है, हमारे बोलने से आकाश में व्याप्त हमारी बोली की गूँज से बोली जड़ों को पोषण मिलता है। तुझे मानना है तो मान, बाकी तेरी मर्जी। पर सच यही है"

राती चुप रहती और गुजबा आकाश की ओर टकटकी लगाए देखा करती। राती पूछती कि, "क्या देखती हो?" गुजबा जवाब देती, "देखती नहीं हूँ, पढ़ती हूँ।"

"क्या पढ़ती हो, बा! वहाँ साफ आकाश है और आप कहती हैं कि पढ़ती हूँ! क्या वह आकाश आपकी पाठशाला का ब्लैक बोर्ड है, या आपकी स्लेट है, कि जो आप कहती हो कि आकाश पढ़ती हो!"

"हाँ, राती! आकाश प्रकृति की स्लेट ही तो है, बोले तो स्लेट और ब्लेक बोर्ड बोले प्रत्येक बोला हुआ शब्द वहाँ लिखा जाता है। कभी न कभी वे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ही शब्द बोलने वाले के पास वापस आते हैं ऐसा गुरु जी कहते थे। इसलिए कहती हूँ कि बोल, चीख कर बोल। कभी तो हमारे पास वापस आयेंगे, हमारे पास नहीं तो वह आनेवाले बच्चे के पास आयेंगे। और हमारी बोली बच जाएगी। आने वाली पीढ़ियों के लिए बोली को बचा लेना चाहिए। हमारी बोली बोलने वाली हम दो ही बची हों ऐसा भी हो सकता है! बैठे-बैठे बोली बचाने का काम तो कर, इतना तो कर ही सकती हो।" गुजबा राती के पेट के सामने देखते हुए बोली। बैठे-बैठे अपने पेट पर हाथ फिराते हुई राती कुछ दूसरा ही सोच रही थी। गुजबा बोली पर राती ने एक भी शब्द नहीं सुना। वह विचारमग्न थी। गुजबा खड़ी हुई तब उसका ध्यान भंग हुआ।

"बा! कोई ऐसी जड़ी-बूटी लाओ न, जिससे इसको निकाल..." राती तिनका तोड़ते हुए बोली फिर रुक गई। उसकी आवाज एकदम सूखी और आँखें वीरान थीं! सूखी हवा से जैसे चमड़ी फट जाती है ऐसे गुजबा की आवाज फट गई।

"तूँ तो माँ है कि कौन! ऐसा विचार तेरे मन में आया भी कैसे? मैं अपनी बोली बचाने के लिए बिना थके बोले जा रही हूँ कि बस मेरी बोली बच जाये। और तू! तू मेरी बोली की जड़ उखाड़ने को..." गुजबा की आवाज में गुस्सा और पीड़ा दोनों ही थी।

"तेरी देखभाल करने में मुझसे क्या कमी रह गई, बोल तो सही? कंदमूल खोदने में, चूल्हे के लिए ईंधन लाने में कितनी मेहनत लगती है ये मेरा मन ही जानता है। चकमक घिसते-घिसते मेरे हाथ छिल गये थे तब यह चूल्हा जला है और तब पेट की आग बुझी। समझी?" उसकी आवाज़ कांप रही थी। आँखों में लाल डोरे फूट आए थे और उसका माथा गोल-गोल घूम रहा था। फटी आँखों से राती को देख रही थी, क्योंकि यह उनकी कल्पना से परे था। आँखों के डेम को टूटने न देने की जद्दोजहद उनके चेहरे पे दिखने लगी। वो जानती थी कि अगर यह टूटा तो फिर वह खुद को रोक नहीं पायेगी। वो कई बार राती को कहती कि जो टूटे वह डेम होता है, नदी नहीं, हाँ! औरतें तो नदी जैसी होती हैं। बहते रहना और बहाते रहना हमारा धर्म है। और ऊपर से हम ठहरे वनवासी। बंधना और बाँधना हमारी प्रकृति नहीं है।"

"हाँ, बा! सब कुछ जानती हूँ। आपने अपनी हथेली पर बड़े-बड़े पान

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लपेटकर उसे बेल से बाँधें थे वह मैंने नहीं देखा था क्या? आपकी विद्या पर भरोसा है इसलिए तो कहा कि..."

"बस, राती! बस। मेरी विद्या से तू मेरी पीढ़ी की बेल को ही उखाड़ देना चाहती है! यह नहीं होगा। यह कैसे हो सकता है! अरे मैं पेड़ पौधों से माफी मांगने वाली, प्रकृति की पूजा करने वाली, तू मेरे से क्या करवाना चाहती है?" गुजबा की आवाज तेज और रुंध होती जा रही थी।

"बा! आप या मैं, अमर होने का वरदान लेकर आए हैं? हमारे बाद यह आने वाला बच्चा यहाँ अकेला हो जायेगा ये आपने सोचा है कभी? यहाँ अकेला यह कैसे रहेगा, क्या करेगा? यहाँ टिके रहने की विद्या भी उसके पास नहीं होगी। मुझे यही चिंता दिन-रात खाये जा रही है। आप बोली बचाने के चक्कर में पड़े हो इसलिए यह चिंता आपको नहीं है। पर मैं..." राती बिलखने लगी। गुजबा खड़ी हुई। राती को लगा कि अभी खिड़की के पास जा कर बोलने लगेगी। गुजबा बोली तो सही पर राती ने जो सोचा इसका उल्टा ही हुआ।

"चल, खड़ी हो, उतर जाते हैं इन पहाडों से, एक के बाद एक खड़े जो हैं! कहीं तो पहुचेंगे। अंत तो जानती हूँ, पर किसी भी हालात में जीना आना चाहिए ऐसा सीखी हूँ, इसलिए टिके रहने के लिए जूझती रहती हूँ।" उनकी आवाज में तेज हवा की सरसराहट थी, "और यह अजगर जैसे दिखते दर्रे! कितने गहरे हैं पता नहीं और इनमें नदियां बहती हैं, पानी के तेज बहाव की आवाज सुनी है मैंने। तेरी प्रसूति होने वाली है, कहीं तू डर न जाए इसलिए तुझसे कहा नहीं।"

"बा! आप पानी वहीं से लाती हो!"

"अब सूझा!"

"मैं सोचती रहती हूँ कि यहाँ से निकलें कैसे? इसलिए न सूझा।" गुजबा फिर साँय-साँय करती हवा की आवाज जैसी आवाज में बोली, "सिर्फ पहाड़ उतरने की बात होती तो तुझे कहा न होता कि चल धीरे-धीरे उतर जाते हैं। मैंने भी देखा होगा न? सोचा होगा कि यहाँ से कैसे बच के निकलें। पर जब मुश्किल हालात से निकल नहीं सकते हो तब इसमें कैसे टिके रहें यह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सोचना चाहिए। चल छोड़, तू कहाँ मेरी बात मानने वाली है! बताती हूँ कि मैं पानी कहाँ से लाती हूँ। जहाँ औदुंबर होता है वहाँ नीचे जमीन में पानी होता है। वह अपनी जड़ों में पानी समेटे रहता है। मुझे औदुंबर मिल गया, अटा पड़ा है, पर मरा नहीं है। मैंने उसकी जड़ खोदी तो पानी निकला, है न प्रकृति! यह मिट्टी का बर्तन लाई तब भी न हुआ कि बर्तन कहाँ से आया!"

राती चुप रही। उसे लगा कि प्रश्न तो होने चाहिए। मैं पढ़ी-लिखी हूँ फिर भी मेरे मन में कोई प्रश्न क्यों नहीं उठता! रट-रट के की हुई पढ़ाई जानकारी दे सकती है, ज्ञान नहीं। उसने सम्मान के साथ गुजबा के सामने देखा, बा कितनी पीढ़ियों का ज्ञान संजोये बैठी हैं! और मैं उन्हें अनपढ़ समझती रही!'

आँसुओं के आर-पार गुजबा को देखा और बोली, "आप जाने का कह रही हो पर मेरी इस हालत में.."

"हाँ, या तो सर्जन होगा या विसर्जन। तेरी बात सही है, चल चलने लगें। जो होगा सो होगा।" राती हिचकिचाती बोली, "मुझसे चला जायेगा?"

"तो फिर क्या करें, कहाँ जाएँ, बोल। थोड़ी हिम्मत रख। कुछ पढ़ा होता तो मालूम रहता कि पहले की औरतें जरूरत पड़ने पर अपनी प्रसूति खुद कर लेती थी। भाड़ में जाये ऐसी पढ़ाई जो पढ़ाई के नाम पर इन्सान को बेचारा कर दे! उसे शिक्षा कहते हैं?"

खड़े होते हुए बोली, "छोड़ रे, अब। तू नहीं चल पायेगी। मैं जाती हूँ। कहीं से शहद मिले तो ढूँढ़ लाती हूँ। मिलेगा ही। पेड़ गिर जाये तो भी जिंदा रहते हैं। जब तक पेड़ रहेंगे तब तक शहद रहेगा। और शहद रहेगा तब तक जीवन रहेगा।"

"शहद!" आश्चर्य से राती की आवाज तेज हो गयी थी और उसे अपने प्रोफेसर के शब्द याद आए- "आइन्सटीन कह गए हैं कि पृथ्वी पर जब तक शहद रहेगा तब तक जीवन रहेगा।" और गुजबा यह बात जानती है!' गुजबा पूर्ववत होते हुए बोली, "हाँ, शहद। जनमते ही शहद की घुटी और जन्म देने को भी शहद। भूल गई!" राती की आँखों के सामने सुहाग रात

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

के प्रथम मिलन बाद दोनों ने एक-दूसरे को शहद चटाया था वह याद आ गई। वो शर्माते हुए नजर झुकाए बैठी रही।

"ए लो! शर्माती हो! इसमें शर्म कैसी, छोरी! यह तो पीढ़ियों से चला आ रहा है। सभी जानते हैं।" गुजबा राती के सिर पर हाथ रखकर निकल पड़ी।

राती ने गुजबा की लाई हुई पीड़ांत बेल कमर से बाँध रखी थी। गुजबा अभी आई नहीं थी और राती को प्रसूति की पीड़ा शुरू हो गई थी। बा के शब्द याद आये, -'पहले की औरतें जरूरत पड़ने पर अपनी प्रसूति खुद कर लेती थी।' राती ने भी वो ही किया। कमर पर बाँधी बेल से बच्चे की नाल काटकर क्षणार्ध उसे देखती रही। अपने प्रोफेसर के शब्द याद आये, जीव मात्र का प्रकृति से नाभिनाल का संबंध है। तमाम जीवों ने भी वह संबंध टिका के रखा और वनवासियों के अलावा खुद को शिक्षित कहने वाले लोगों ने यह संबंध तोड़ डाला!' फिर बोल पड़ी,

"गुजबा सही कहती है कि यह कैसी पढ़ाई की कि खुद के रहन-सहन से ही दूर कर दिया!" अपने बच्चे को छाती से लगाया। दूध पीते बच्चे की आवाज से वह ममता से भीग गई। और जोर-जोर से चिल्लाई,

"गुजबा!...बा! आपकी बोली बोलने वाला आ गया है, अरे! आपकी बोली खुद आई है, आप कहाँ हो?" 'मेरी बोली' कहकर बच्चे को चूम लिया।

मधुमक्खी के डंक से सूजे हुए शरीर पर जड़ी-बूटी का लेप लगाए हुए गुजबा हाथ में शहद का दोना लिए आ रही थी, तभी उसने राती की आवाज सुनी तो दौड़ी, और दौड़ते हुए उनकी नजर उनके द्वारा बोयी हुई ज्वार पर पड़ी और आँखों से अभी तक रोके हुए आँसू बहने लगे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

3.

सफलता का आयाम

छोटी-छोटी पहाड़ियों से घिरे उस विशाल ताल को वह टकटकी लगाकर देख रहा था। वह ताल उसे पहाड़ की बड़ी आँख जैसा लगा जो उसे एकटक देख रहा था! वह सहन न कर पाया, नजदीक पड़ा कंकड़ उठाया और पानी में फेंका। पानी में उठती तरंगों को वह देखता रहा। धीरे-धीरे किनारे पर आती ये तरंगें पानी में समा जातीं। बस, इतनी-सी देर! वह थर्रा गया। पानी फिर से शांत हो गया। फिर से एक कंकड़ ...उसने पानी में फेंके कंकड़ के पीछे सनन... करता दूसरा कंकड़ आया और पानी पर दो-तीन छलांगे भरता डूब गया। पानी पर कूदते कंकड़ को देख वह हैरान हो गया, जादू देख रहा हूँ! कि भूत? या यहाँ के वनवासी?

पानी पर उठे तीन वर्तुल एक-दूसरे में समाते हुए किनारे पहुँच गए। उसने हिम्मत जुटा कर पीछे देखा, और देखता ही रह गया। गेरुआ वस्त्र पहने दाढ़ी वाला एक आदमी उसकी ओर देख कर हँस रहा था और उसके पीछे बाँस का वन लहरा रहा था। कोई बाँस ही मानव देह लेकर आया है क्या! वह एक कदम पीछे हट गया। पहले ने हाथ बढ़ाया,

रुक जा, पीछे मत जाना। कंकड़ फेंक कर जिस घड़ी को दूर ठेल रहा है वह घड़ी आ जायेगी। सीधा किनारे से ही पानी गहरा है। शांत स्थिर पानी को वह देखता रहा। गेरुआ वस्त्रधारी नजदीक आ गया था। उसने उसकी आँखों में देखा। शांत ताल जैसी ही और उस में तैरता निर्मोह ऊपर से फेंके कंकड़ जैसा नहीं पर स्वयंभू प्रकट हुआ दिखता था। वह आँखें मिला न सका। नजर फेरने गया ही था और पहले ने उसका हाथ पकड़ लिया।

"चल"। हवा की दिशा को जैसे पर्ण अनुसरते हैं, वैसे ही वह उसको अनुसरता हुआ चला।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"तुझे आश्चर्य हुआ ना कि एक ही कंकड़ ने तीन छलांग कैसे लगाई!"

"हाँ, मैंने ऐसा कभी देखा नहीं। कोई जादू या और कुछ?"

"न कोई जादू, न कोई विद्या। ट्रिक एन्ड प्रैक्टिस ओन्ली।"

पहला आश्चर्य अभी समाप्त नहीं हुआ था कि दूसरे ने हमला किया उस को इंग्लिश बोलते देख कर। वह कुछ बोल न पाया।

छोटी-सी पहाड़ी की चढ़ाई चढ़कर वे दोनों ढलान से उतरने लगे। वह एक विशाल वट वृक्ष को आश्चर्य से देखता रहा, क्योंकि इतना फैला हुआ वट वृक्ष उसने पहले कभी देखा ही नहीं था। उसने तो काटी हुई टहनी और काटी हुई जटाओं वाले वट-वृक्ष ही देखे थे। दोनों वट के नीचे खड़े रहे। यहां से जंगल घना होता जा रहा था। वट-वृक्ष के पीछे झोपड़ियां दिखाई दे रही थीं। उसमें से निकलते धुएँ से पता चलता था कि नजदीक में ही मानव बस्ती है। रात ढल चुकी थी। बाँस में से आती हवा की आवाज, पंछियों की चहचहाहट के अलावा वहां बिलकुल शांति थी। बीच-बीच में आती जंगली जानवरों की दहाड़ या निशाचर पंछियों के बोलने से वातावरण जीवंत होने के साथ-साथ डरावना भी लगता था।

गेरुआ वस्त्रधारी ने अपनी झोंपड़ी का दरवाजा खोला और बोला,

"आ", वह अंदर गया। बीच में पड़े बाँस के टेबल पर वह बैठ गया। उसने उसे पानी दिया। पानी का गिलास पकड़े वह बैठा रहा।

"अच्छा है, आधुनिक वाटर फिल्टर का तो नहीं है पर उससे अच्छा है। जड़ी-बूटियों की जड़ों से छनकर आता हुआ पानी है। फिर भी मन न माने तो रहने दे। जब प्यास लगे तब पी लेना।"

वह समझ गया कि अभी नहीं तो कभी भी पानी तो यहीं पीना है तो... वह एक ही साँस में पूरा गिलास पी गया और गिलास को उसकी जगह पर रख कर फिर बैठ गया।

"स्वामी जी।"

"नहीं, मैं कोई स्वामी-वामी नहीं हूँ। मेरा नाम जीवन है। तुम मुझे जीवन ही कहना, यहाँ सब मुझे इसी नाम से बुलाते हैं। और हाँ, यहाँ हर कोई किसी को भी तुम कहकर ही बुलाता है, यह उनकी बोलचाल की रीत है। तूने मेरे गेरुआ कपड़े देख कर मुझे स्वामी जी कहा न? अब मत कहना। यह कपड़े मेरे गुरुजी के हैं। गुरुजी अब नहीं रहे और मैं कोई भी कपड़े

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पहनूँ मुझे कुछ फर्क नहीं पड़ता। फिर गुरुजी के कपड़े फालतू में पड़े रहें इससे तो अच्छा है न कि मैं खुद पहनूँ। इसमें गलत ही क्या है? हमारे देश में कितनी औरतें हैं जिन्हें पहनने के लिए पूरे कपड़े नहीं मिलते और हम पसंद-नापसंद का वैभव कैसे कर सकते हैं! अच्छा चलो ये बातें बाद में करेंगे। मैं तो पूछना ही भूल गया। चल, अपना नाम बता। तेरे ब्रान्डेड कपड़ों से पता चलता है कि तू पैसे वाले घर का लड़का है।"

'आयाम' बोलते हुए उसके होंठ फीके पड़ गए।

"हाँ तो जीवन से कहाँ, क्या समस्या हुई, आयाम जी?"

"नहीं... नहीं... मुझे आपसे कोई समस्या नहीं है। मैं आपको पहचानता भी नहीं हूं, फिर आपसे समस्या कैसी!"

जीवन खिलखिला कर हँसने लगा। जीवन यानी मैं नहीं, मैं तेरे जीवन के बारे में मतलब तेरी लाइफ के बारे में पूछ रहा हूँ। क्या हुआ कि यहाँ तक आना पड़ा! वॉट्स द प्रोब्लेम, आई नो, बट..बट आई वुड लाइक टु नो फ्रॉम यू।" जीवन समझ गया था कि लड़के को भाषा समझने में दिक्कत हो रही है। अंग्रेजी में पढ़ता होगा। जीवन थोड़ा अटका फिर मत्था धुन कर बोला,

"जीना आसान नहीं है तो मरना भी कहाँ आसान है।"

"आपसे किसने बोला कि मैं मरने के लिए...।

"कौन बोलेगा? यहाँ तक तेरी उम्र का कोई शहरी लड़का अकेला आता नहीं है सिवा कि... यूँ तो जो मरना चाहते हैं वह नजदीक में ही कहीं रास्ता ढूंढ लेते हैं। यहां तो वो आते हैं जिसे जीना तो है पर अपने हिसाब से जी नहीं सकते और मरना है पर मर नहीं सकते क्योंकि मौत से डर लगता है।"

आयाम खड़ा हुआ। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या बोले! जो भाषा वो बरसों से बोल रहा था वह आज उसका साथ नहीं दे रही थी। जीवन की बातें उसे समझ में नहीं आ रही थीं। घर में, स्कूल में और बाहर अंग्रेजी के सिवा कुछ बोलता ही नहीं था। हां, थोड़ी हिंदी बोल सकता था, समझ सकता था। उसे पता था कि वह इंग्लिश में बोलेगा तो जीवन को समझने में कोई दिक्कत नहीं होगी पर अपने अंदर की व्यथा को वह अंग्रेजी में समझा नहीं पायेगा, यह वो जानता था। वो चुपचाप खड़ा हुआ और खिड़की के पास आया। पेड़ पर के घोंसलों की चोंच फूटी हो ऐसा लगता था क्योंकि हरेक घोंसले में से छोटी-छोटी दो तीन चोंच दिख रही थी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
वो समझ गया कि माँ की राह देखी जा रही है। उसकी नजर धुंधला गई।

खिड़की से टिका कर रखी चौखट में आड़ी खड़ी बाँस की पट्टियों को पकड़ा तो वे हाथ में आ गई। उसने जीवन के सामने देखा।

"आयाम! जीवन में आती समस्याएँ भी टिका के रखी गईं बाँस की पट्टियों जैसी होती हैं। जब तक उसे छुओ नहीं तब तक अड़चन जैसी लगती हैं पर हिम्मत से हाथ में ले लो फिर क्या? हाथ में आये हुए को तो फेंक सकते हैं न? लेकिन हम हैं न, समस्या को छूते ही नहीं हैं। दूर से आती हुई समस्या को देखकर ही भाग खड़े हो जाते हैं, वन्य प्राणियों की तरह! जंगल के प्राणी भी इस टिकी हुई चौखट को देखकर ही बाहर अटक जाते हैं। उन्हें पता नहीं है कि इसे छूते ही यह गिर जाएगी, हम में और अन्य जीवों में फर्क तो होना चाहिए न?"

जीवन ने आयाम के कंधे पर हाथ रखकर विषय बदला और पूछा, "क्या हुआ? रीजल्ट फेल?" आयाम जवाब न दे सका। उसकी सिसकी झोपड़ी में फैल गई। जीवन ने उसका हाथ अपने हाथ में लिया और कहा, "चल बाहर चलते हैं।"

आसपास के झोंपड़ों से धुआँ निकल रहा था। पाँच-छः बच्चे पास ही में लंगड़ी टांग खेल रहे थे। कॉन्वेंट स्कूल में पढ़ा और घर के अंग्रेजी माहौल में पला-बढ़ा हुआ आयाम समझ न सका कि वे क्या कर रहे हैं।

"ये क्या कर रहे हैं? एक पग से क्यों दौड़ा दौड़ी कर रहे हैं? दूसरा पैर है फिर भी!"

"वो एक खेल खेल रहे हैं। उसे लंगड़ी टांग कहते हैं। जैसे आप लोग शहर में क्रिकेट खेलते हो, ऐसा ही यह एक खेल है। इसमें किसी भी साधन की जरूरत नहीं है। एक पांव से दौड़कर दूसरे साथी को पकड़ना है। मैंने सिखाया है यह खेल। जिंदगी भी एक पैर से ही दौड़ी जाती है और वह पाँव है हमारा संकल्प बल।"

आयाम स्तब्ध रह गया था। उसका मुँह पेड़ के तने में होती कोटर जैसा हो गया था। जीवन हँसते हुए बोला,

"यार, तेरी दुनिया बहुत सीमित है। इसलिए सफल होने का अर्थ भी तुम्हारे लिए सीमित हो गया है। और उस अर्थ में तू फिट नहीं बैठा इसलिए तू फेल है। आयाम! टीवी चैनल वाले वर्ल्ड ऐक्सप्लोर करें इतनी ही नहीं पर इससे भी बहुत-बहुत बड़ी है दुनिया। और खास जरूरत है हमारे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आसपास की दुनिया के साथ-साथ हमारे अंदर की दुनिया ऐक्सप्लोर करने की। मतलब आसपास को देखने-समझने के साथ खुद को समझें। हमें क्या चाहिए यह हमें तो पता होना ही चाहिए।"

"लेकिन, मेरे मॉम-डैड कहते हैं कि-तुम फेल हो, फूलिश हो। दूसरों के एक्जामपल देते हैं। इस हिसाब से तो मैं फेल हुआ न?"

"क्या बोर्ड-युनिवर्सिटी की परीक्षाओं में उत्तीर्ण होना ही सफलता का मापदंड है, ऐसा!" आयाम उलझ रहा था! जीवन ने अपने मुँह से सीटी बजाई। वो जो बच्चे खेल रहे थे वो खेल छोड़ कर जीवन के पास आये। जीवन बैठ गया तो वह सब बच्चे उसके आसपास वर्तुल में बैठ गये। आयाम देखता रहा। उसने ऐसे मैले-कुचैले बच्चे इतनी नजदीक से कभी नहीं देखे थे। उसके घर के नौकर; कामवाली, ड्राइवर और दूसरे सभी अपने हिसाब से अप टू डेट रहते थे। आयाम का आश्चर्य ताल जैसा गहरा और स्थिर होता जा रहा था। फटाफट इंग्लिश बोलता जीवन, उसकी झोंपड़ी और उसके इर्द-गिर्द ये बच्चे! कहां नीट एन्ड क्लीन जीवन और ये गंदे, डर्टी बच्चे! उसे जीवन चंद्रमा जैसा और उसके इर्द-गिर्द के बच्चे काले बादल जैसे लगे। आयाम को चंद्रमा बहुत पसंद था इसलिए उसे चंद्रमा याद आ गया।

"अरे! आयाम, आ बैठ। देख इन सब का रिजल्ट सुनते हैं। आयाम रेशम की डोर में पड़ी गुत्थियों की तरह ज्यादा और ज्यादा उलझता जा रहा था। वो जीवन के पास जाकर कर बैठ गया। उन सभी बच्चों की नजर तीर की तरह उसकी आँखों में उतर गई। आयाम ने महसूस किया कि सबकी नजरें उस पर टिकी हैं। वह कुछ बोला नहीं। उसे बोलने में तकलीफ हो रही थी।

"आयाम, तुझे जानने की जिज्ञासा नहीं है कि इन सबने कौन सी परीक्षा दी थी?" आयाम ने जीवन की ओर देखा।

"देख, ये सबसे बड़ा है, वसंत। वो नजदीक के गाँव में चलकर पढ़ने जाता है। आने-जाने का पंद्रह किलोमीटर। कड़ी धूप, सर्दी और बारिश को सहकर पूरे साल स्कूल गया है। वो विद्यालय गया वही पर्याप्त है। कई बार कुदरत ने उसकी कसौटी ली है पर वो हारा नहीं और इसलिए सफल है, मतलब पास है। ये महुआ है। ज्यादातर बीमार रहती थी। मैंने इन सबको योग

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्राणायाम सिखाया। और उनके ही बुजुर्गों से जड़ी-बूटियों की जानकारी लेकर इन सबको उपचार सिखाया और महुआ को खासतौर पर सिखाया, क्योंकि वो बाहर पढ़ने के लिए नहीं जा सकती और महुआ यह उपचार सीख गई। अब खुद तो निरोगी है ही और अपने साथ-साथ सारे गाँव को भी निरोगी कर दिया है। अपनी शारीरिक कमजोरी को हराया तो वह सफल नहीं है क्या? यह वालजी है। अभी तो महुआ को मदद कर रहा है और वेकेशन खत्म होते ही वह भी स्कूल जाने वाला है। फिर तो महुआ भी जायेगी, है न महुआ?" महुआ हँस कर बोली, "मैं तो डॉक्टर बनूँगी।" सबने ताली बजाई। जीवन ने आयाम को पूछा, "बोल, ये सब पास नहीं हैं क्या?" जीवन को आयाम से कोई उत्तर मिले ऐसी कोई अपेक्षा थी ही नहीं। वो जानता था कि पराई भाषा सही समय पर साथ छोड़ देती है कर्ण की विद्या की तरह। जीवन खड़े होते हुए बोला, "चलो बच्चो! आज मुझे किसके घर खाना खाने जाना है?" महुआ ने उंगली ऊपर उठाई।

"अच्छा, एक काम करना पड़ेगा। आप सबकी रोटी में से एक निवाला अपने मेहमान के लिए निकालना पड़ेगा।"

बच्चे खुश होकर कूदने लगे। जीवन आयाम की ओर देखकर बोला, "आयाम यहाँ सब्जी कम और मूंग-चना ज्यादा खाया जाता है। और नाचनी की रोटी। चलेगा न?"

"मैले-कुचैले बच्चों के सामने देखते हुए आयाम बोला, "मुझे भूख नहीं है।" जीवन इसका कारण जानता था पर कुछ बोला नहीं।

बहते पानी की आवाज और बीच-बीच में जंगली प्राणी की दहाड़ और लगातार आती झींगुरों की आवाज सुनाई दे रही थी। जमीन पर पड़े एक झंखाड़ में बहुत सारे जुगनू बैठे थे और चमक रहे थे तो ऐसा लगता था मानो बड़ी-सी आँख चमक रही हो! आयाम ने डर के मारे जीवन का हाथ पकड़ लिया, "ये आवाज और यह रोशनी!"

"अरे! इससे डर गया? झींगुर बोल रहे हैं, अंगेंजी में उसे क्रिकेट कहते हैं। वहाँ शहर में तो क्रिकेट का खेल छाया रहता है, यहाँ जंगल में इस क्रिकेट का राज है।" आयाम का डर कम हुआ। वो क्रिकेट को जानता था। उसे यहां पहुंचने के बाद पहली बार आनंद की अनुभूति हुई।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दोनों झोपड़ी में आ गये। खिड़की में से और घास-फूस के छत से चंद्रमा की रोशनी अन्दर आ रही थी। जीवन ने बाँस की दो चटाई बिछाई, "आ जा आयाम आ जा, सो जाते हैं। तू थका होगा।" जीवन लेट गया। आयाम भी उसकी बगल में लेटा और तुरंत वापस बैठ गया।

"क्या हुआ?"

"चुभता है।"

"क्या?"

"बैड।"

"दूसरा और कुछ नहीं!"

"दूसरा! और क्या?" चुभेगा'.....? आयाम ने लंबी सांस ली।

"तेरा इस तरह घर से भाग आना और वह भी आत्महत्या का विचार!"

'...मुझे बहुत चुभा।"

"क्यों कुछ बोला नहीं?"

"मुझे ऐसे पढ़ना नहीं है, जीवन! मुझे जो पढ़ना है वह मेरे मॉम-डैड पढ़ने नहीं देते। वो चाहते हैं कि मैं वह पढ़ूँ जिससे मुझे ढेर सारे रुपये मिलें।" आयाम मिट्टी की लिपी हुई जमीन की पपड़ी निकालते हुए बोला। उसकी आवाज में झिंगुर की थरथराहट थी। जीवन का गला सूख रहा था। वो खड़ा हुआ, पानी लाया। आयाम को दिया, और आयाम द्वारा उखाड़ी गई पपड़ी को देखता रहा। आयाम बोल रहा था, "पापा की पहचान से सभी व्यवस्था हो गई थी। पर मैं एग्जाम में नकल करके डॉक्टर बनूँ वह मुझे पसंद नहीं था। इसलिए मैंने नकल नहीं की। और परिणामस्वरूप मेडिकल में एडमीशन मिले इतने परसेंटेज नहीं आये। और... वह सब बात मैं याद करना नहीं चाहता, मैं भूलना चाहता हूँ, प्लीज जीवन!"

"अरे! आयाम, व्हाट अ सरप्राइज! क्या कहूँ तुझे यह मेरी समझ में नहीं आ रहा है। यू आर द विनर। इतनी सब व्यवस्था के बावजूद तूने चोरी नहीं की! तू कितनी बड़ी कसौटी को पार कर के आया है, यार! मेरे दोस्त। इतनी बड़ी जंग तो कोई नहीं लड़ सकता, सच में। मैं जिसे ढीलाढाला मानता था वह तो चट्टान निकला रे! अपने निर्णय पर अड़े रहना और वह भी करियर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

की बात हो तब? कोई विरला ही कर सकता है जो तूने कर दिखाया है। तू 100% नहीं बल्कि 101% सफल है रे।" जीवन की आवाज पानी के सैलाब जैसी लग रही थी। आयाम की आँखें जुगनू की तरह चमक रही थीं, वह अपने बारे में पहली बार कुछ अच्छा सुन रहा था। वो एकदम जोश में आ गया। मानो सैलाब को रोकना चाहता हो और भावावेश में उसने जीवन के दोनों कंधे पकड़ लिये। जीवन अभी भी अपनी मस्ती में था,

"सफल होना मतलब अपने विचारों पर अडिग रहना। अपनी अलग राह बनाना।"

"जीवन, कहाँ खो गए? मुझे लगता है कि आप भी इस सफल-असफल के चक्कर में फंसे होंगे, सही है ना?"

जीवन का फेंका एक कंकड़ पानी में अनेक वर्तुल रच सकता था, इसी तरह आयाम के एक प्रश्न से जीवन के चेहरे पर उसके जीवन के अनेक वर्तुल एकाएक छा गये। पानी में फेंका कंकड़ जिस प्रकार अपने तल तक पहुँच जाता है उसी प्रकार जीवन अपने अतीत में पहुँच गया।

"वही खेल और वही खिलाड़ी। टैक्नोलॉजी बदल गई पर इन्सान की सायकोलॉजी न बदली। मेरे पिताजी चाहते थे कि मैं आइ.ए.एस बनूँ, समाज पर रोब झाड़ूं और मुझे जाना था फौज में। उस समय माँ की इच्छा को कौन पूछता था? और मेरे फौज में जाने की बात सुनकर ही मेरी माँ काँप उठी थी। मेरी शादी की बातें होने लगीं तब मैं घर से भागकर सीधे यहाँ, इस प्रपात पर आ गया। तू नसीबवाला है कि तेरे हाथ में कंकड़ आ गया और मृत्यु के क्षण को ठेलता रहा और मैं? मैं तो खुद कंकड़ बन गया था और खुद को फेंका सीधे पानी में। पर, शायद यहाँ कोई मरता नहीं है यह धरती जीवनदायिनी है। मुझे गुरुजी ने बचा लिया था। मेरी बात सुनकर पूछा था कि- फौज में क्यों जाना चाहता है?

"मैं यहाँ के बाँस जैसा ही था-अकड़ा हुआ। कहा देश की सेवा करने।"

"देश की सेवा मतलब सिर्फ सरहद की रक्षा करना होता है क्या? सरहद के अंदर भी सेवा के लिए बहुत कुछ है। यहाँ के वनवासियों को दिखाकर कहा था कि इन लोगों की सेवा करना भी देश सेवा ही है। दुश्मन सिर्फ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सरहद पर होते हैं यह भ्रम है। इस क्षेत्र में दुश्मन सेवाधारी बन कर जंगल में रहते हैं और यहाँ के भोले वनवासियों को उकसा कर नक्सलाइट बना देते हैं। हथियार की तरह इन लोगों का उपयोग करते हैं। आशुतोष जैसे भोले ये लोग उनकी बातों में आ कर बहक जाते हैं।"

मैं समझ गया था कि मरने से खो जाना ज्यादा मुश्किल है। विशालकाय सँडसी जैसे समाज के शिकंजे में रहकर जीने से अच्छा है कि हम अपने तरीके से जिएँ। खुद के लिए नहीं दूसरों के लिए जिएँ। इससे बड़ी कोई चुनौती नहीं है। उसमें सफल तो जीवन में सफल बाकी सब असफल।"

झोपड़ी में खामोशी छा गई थी।

"जीवन! मैं आपके साथ रहूँगा, आपके जैसे ही.."

"नहीं, नहीं, आयाम! मेरी तरह तो ठीक है पर मेरे साथ नहीं। तुझे तो वापस जाना है। गहरे पानी में भँवर होते हैं, जो हर किसी को निगल जाते हैं। इस समाज में भी ऐसे भँवर हैं। अच्छे-अच्छे जीवन और आयाम को निगल जाता है। इस घातक भँवर को तोड़ना है। विचार प्रवाह को आगे बढ़ाना है। तुझे तो नगरवासी और वनवासी के बीच का सेतु बनना है। तू रहेगा शहर में पर तेरी सांस होंगी इन वनवासियों के लिए। तभी तेरे सहारे ये बच्चे आगे बढ़ेंगे। यहाँ तो उनको किसी सहारे की जरूरत नहीं है पर वहाँ शहर में चाहिए। और उन्हें भी अवसर मिलना चाहिए।"

आयाम जीवन का नया आयाम खुलता हुआ देख रहा था। जीवन ने उसके सिर पर हाथ फेरा और बोला, "अब थोड़ा सो जा, सुबह होने को है।" आयाम ने जीवन का हाथ थाम लिया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

4.
खून में धँसी कील

कोने में पड़ा टेबल खींच कर रमण ने राजी से हथौड़ी और सँड़सी लाने को कहा। रमण क्या कर रहा है, यह राजी की समझ में नहीं आ रहा था। संड़सी-हथौड़ी ला कर वह देखती है तो रमण दीवाल पर टँगी छवि उतारने की कोशिश कर रहा था। राजी को आश्चर्य हुआ कि एकाएक ये छवि क्यों उतार लेना चाहते हैं!

"क्यों यह छवि उतार रहे हो? कुछ कहो तो। मैं देख रही हूँ कि जब से ऑफिस से आये हो तब से गुस्से में हो। और यह क्या कर रहे हो? कुछ कहोगे भी कि यूँ ही ऑर्डर करते रहोगे?"

"तू चुप रहेगी? बड़ी आयी है समझने वाली।" तुनक-मिजाज रमण गुस्से में राजी को बोला। राजी के लिए यह नया नहीं था। रमण का स्वभाव बात-बात में राई का पर्वत बनाने वाला था। उसे छोटी-छोटी बातें बुरी लग जाती थीं।

राजी हँसते-हँसते टेबल के पास आई। दोनों हाथों से टेबल को पकड़कर बोली:

"अब करो जो करना है वह। छवि उतारनी हो तो छवि उतारो और मेरा माथा उतारना हो तो उसकी भी छूट है। पर कारण बताने के बाद। बाकी गिरोगे न तो हड्डी-पसली.....।" राजी हँसना रोक न पाई। रमण को गुस्सा आता देख राजी बात को हँसी में ले लेती थी।

"तेरा माथा क्यों उतारूँ? माथा तो उतारूँगा उस बम्मन का। बाम्मन साला...." रमण दाँत पीसकर बोला।

"एक बात कहूँ? कितना भी झगड़ा हो, गुस्सा आये तो भी किसी की जाति विषयक बुरा बोलना अच्छा नहीं लगता। हमें कोई ऐसा कहे तो....?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"बोल-बोल, अटक क्यों गई? बोल दे। वह.... वही बोला था। सीधा नहीं पर उसका इशारा वही था, हमारी जाति। मैं समझूँ ना? उम्र पानी में फेंकी हैं क्या? साले को एट्रोसिटी में न डाल दूँ तो मेरी जात....."

बाहर जोर से बवंडर उठा। वातावरण धुँधला हो उठा। बाहर का कचरा उड़कर घर में आ गया और साथ ही खिड़की जोर से टकरा कर बंद हो गई। खिड़की के काँच में दरार पड़ गई। राजी काँप गई। उसने देखा सभी ट्रान्सपेरन्ट काँच में से धुँधला उजाला दिखने लगा था।

"अब उतरो भी... अभी बेटा आयेगा स्कूल से। मुझे उसके लिए नाश्ता भी बनाना है। आप भी क्या छोटी-छोटी बातों पर बिगड़ते हो। समाज में कैसे रहना चाहिए यह अपने बच्चे को कैसे सिखाओगे?" वह आगे कुछ बोल न सकी। वह अतीत में कहीं खो गयी। घर में पैक होता सामान, ट्रक में भरा हुआ सामान और नये ठिकाने पर उतारा जाता हुआ सामान उसे याद आ गया। उसने भी अनुभव किया हुआ था कि वो लोग जब किसी नई सोसायटी में रहने जाते तब वहाँ के लोगों की आँखों में अपने लिए सत्कार देखते और घर को व्यवस्थित कर रहे होते तब कोई न कोई बच्चा नाक पोंछता या कान खुजलाता दरवाजे पर आ ही जाता था।

"आन्टी, मम्मी ने कहा है कि कुछ काम हो तो बताना। हम आपकी बगल में रहते हैं।"

और धीरे-धीरे ऊपर चढ़ते सूरज की तरह उसकी जात का पता लग जाता और ... बाद का व्यवहार ....!

डोर बैल बज रही थी। राजी चमक उठी। गुस्से में आकर बड़बड़ाई।

"दरवाजा खुले नहीं तब तक स्विच पर से हाथ न उठाये वह श्याम ही हो सकता है।" उसने दरवाजा खोला। बवंडर और बवंडर जैसा श्याम अंदर घुस आया। राजी ने फिर से दरवाजा बंद कर दिया। रमण अभी तक टेबल पर खड़ा था। खूंटी निकालने का प्रयास कर रहा था।

"पापा, क्या कर रहे हो? खूँटी निकल गई क्या? छवि गिर गई क्या? हवा से? टूटी तो नहीं न?" श्याम ने प्रश्न करना शुरू कर दिया। इसलिए तो रमण उसे सोक्रेटिस कहता था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रमण ने श्याम की ओर देखा। फिर छवि की ओर देखा। पर यह क्या? छवि के अंदर का चित्र दिखता ही नहीं था। वह देखता रह गया, दीवार पर खूंटी के सहारे लटक रहा ब्लैक होल! जिसमें उसकी पीढ़ियों की पीढ़ी खिंच कर गुम हो गई! खुद वह भी और श्याम भी ऐसे ही इस ब्लैक होल में खींचकर 'स्वाहा' हो जायेंगे उसका सिर चकराने लगा। उसने माथा पकड़ लिया। राजी ने रमण का हाथ थाम लिया।

"उतर आओ। नहीं निकालनी है खूँटी। देखते नहीं हो वह चिनाई में ही गाड़ी गई है। चिनाई में लिया हुआ सँड़सी से निकलता है क्या? कब से कह रही हूँ, सुनते ही नहीं हो।"

"पर पापा, खूँटी क्यों निकालनी है?"

"यह छवि उतारने..."

"तो खूंटी क्यों निकालते हो? क्या पापा आप भी.... तार क्यूं नहीं काट देते? तार काट दो, तार..."

रमण आश्चर्य से श्याम को देखता रहा। तार काटने का उसे क्यूं नहीं सूझा?

"तार काट देने का.... तार..... काट देने का ..... तार.... तार" रमण दूसरे ही विचार में पड़ गया। पिछला घर खाली किया था तब मदद में आये हुए दोस्त मेकवान द्वारा कही हुई बात अभी उसके दिमाग में छा गई :

"देख रमण, यह बार-बार घर बदलते रहना यह कोई उपाय नहीं है। कब तक जात छिपाकर रहने का? जात छुपाने के लिए तूने अपना सरनेम बदल डाला। 'पटेल' हो गया, फिर भी तेरी परिस्थिति बदली क्या? तेरे पड़ोसियों को तेरी जात के बारे में पता चलते ही तुरंत वे नजरें चुरा कर ब्रान्डेड जीन्स और लिपस्टिक 'उंह....आह' के पाउच के अंदर समा जायेंगे! ढक्कन बदलने से अंदर रखी हुई चीज थोड़ी बदल जाती है?" मेकवान की जीभ आवाज में ही नहीं बल्कि आँखों में भी आक्रोश भरा बैठा था।

"तू क्या कहना चाहता है, यह मेरी समझ में नहीं आ रहा। कुछ समझ में आये ऐसा बोल। मेरे घर बदलने को और ब्रान्ड को क्या? तू गोल-गोल ही बोलता रहता है। मुझे यह समझ में नहीं आता। यहाँ तो दो टूक...."

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"तार तोड़ दे तार.... देख फिर।" मेकवान अंगुलियों को कैंची की तरह चलाता हुआ बोला। रमण तो न समझा पर वह बात राजी तुरंत समझ गई। संभलकर हथेली में लेकर खड़ी 'लल्ला' (बाल कृष्ण) की मूर्ति को मुट्ठी में बंद कर दिया। गर सरक जाये तो .....! मुट्ठी को छाती में दबा दिया। बाबा-साधु और फकीर को देखकर माँ जैसे अपने बच्चे को आँचल में छुपा लेती है।

"नहीं रे... मेकवान भाई! ऐसी बात भी न करना। यह नहीं हो सकता। यह तार कदापि नहीं टूटेंगे। साँस छूटे तो भी नहीं।" उसने हाथ ज्यादा दबाया, जैसे लल्ला को अपने हृदय में उतार देना चाहती हो! शादी करके ससुराल आई तब उसके मायके के पड़ोसी विद्या मौसी ने उसे यह कहकर यह मूर्ति दी थी कि हम तो बेटी को 'लल्ला की सेवा' देते हैं। तू मेरी बेटी है, वृंदा जैसी ही। वृंदा तो नहीं रही...। विद्या मौसी आगे कुछ बोल नहीं पायीं थीं। राजी भी वृंदा को याद करके रो पड़ती है। राजी और राजी हो गई थी जब ससुराल में सास का हुलास देखा था।

"बहू, तू ने तो हद कर दी! इस कालिया ठाकुर (द्वारकाधीश श्री कृष्ण) को लल्ला कह कर पल्लू में बाँध लिया! तेरी सेवा में मेरा भी हिस्सा, रहेगा...." बस तब से राजी-माजी की जोड़ी जम गई थी।

राजी को लगा कुछ ज्यादा ही बोल गई। अपनी बात को टालते हुए वह बोली:

"आप बुरा मत मानिए मेकवान भाई, पर.... आप जब...... मतलब आप के दादाजी जब मकवाणा से मेकवान बने होंगे तब की बात अलग थी। तब हमारी जातवालों के साथ बाकी समाज का व्यवहार ठीक न था। ऐसे हालात में आप के पुरखों ने जाति के सभी तार तोड़ डाले वह समझ में आ रहा है। वह जो कुछ हुआ गलत नहीं था। पर आज? आज आपको नहीं लगता कि समाज बदल रहा है?

दो पीढ़ी पहले जो कुछ था ऐसा आज कहाँ है? और दो पीढ़ी के बाद बिलकुल नहीं रहेगा, शायद....। पूरा समाज समरस हो जायेगा।" बोलते-बोलते अटकना पड़ा, शायद कहना पड़ा, यह राजी के अलावा किसी के ध्यान में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नहीं आया। थोड़े दिन पहले ही बच्चों को लेकर सोसायटी में झगड़ा हुआ था और तब सामनेवाली जो बोली थी उसकी पीड़ा अभी भी कलेजे को खाये जा रही थी। कातिल थे वो शब्द, अन्दर तक झकझोर दिया था।

"ऐसे ही घुस आते हैं हमारे उच्च वर्ण की सोसायटियों में, साले.... आरक्षण खा-खा के स्मार्ट तो इतने हो गये हैं कि पहचाने नहीं जाते कि आरक्षित हैं।"

राजी का कहने का मन हुआ था कि अच्छा है न। आप जैसे साफ-सुथरे दिखे उसमें गलत ही क्या है? समाज का स्तर ऊपर उठना चाहिए, समरस होना चाहिए। इन्द्रधनुष ठीक है अपनी जगह, पर सूरज की धूप सफेद की बजाय सातरंगी फैलती तो? तो क्या सृष्टि का विकास संभव था? यही बात समाज के लिए भी सच है। समरस समाज ही प्रगति कर सकता है।" पर वह कुछ बोली नहीं। वह जानती थी कि भैंस को भागवत सुनाने का अर्थ नहीं। इस लिए श्याम को लेकर घर में आ गई थी।

राजी अभी भी यूँ ही खड़ी थी। उसकी नजर शटल कॉक की तरह कभी रमण की ओर तो कभी मेकवान की ओर घूम रही थी। उसने सोचा इन दोनों के तार जुड़ने नहीं चाहिए, देखना पड़ेगा।

मेकवान नजर की भाषा समझ गया। उसे भी हुआ कि गलत व्यक्ति की हाजरी में रमण का दिमाग धोने बैठा, पर अब क्या? बात बदलनी तो पड़ेगी। राजी की नजर हटानी तो पड़ेगी।

"आपको पता है भाभी कि मेरे दादाजी के साथ क्या हुआ था?"

"नया कुछ नहीं घटा होगा। मेरे, रमण के और अपनी जात के सभी दादा-परदादाओं के साथ जो हुआ करता था वही हुआ होगा। मानती हूँ कि वह सब अमानवीय था। इसलिए तो हमारे कितने ही पूर्वजों ने तार तोड़ डाले थे। मैं जानती हूँ, भाई मैं अच्छी तरह से जानती हूँ। तब उन लोगों ने जो किया वह गलत किया। पर अब? अब इस इक्कीसवीं सदी में! और हमारे जैसे पढ़े-लिखे लोग ऐसी बातें करें ये मुझे ठीक नहीं लगता। हाँ, गाँवों में स्थिति अब भी वही पुरानी सही, इसलिए वे लोग ऐसा बोलें तो उन्हें माफ, लेकिन....हमें....हमें यह शोभा देता है क्या? आरक्षण का फायदा लेकर उजले

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हुए, ऊपर उठे, और अब तार तोड़ डाले तो एहसान फरामोश न कहलायेंगे? हमारा फर्ज नहीं बनता कि आरक्षण जहाँ नहीं पहुंचा ऐसे निचले लोगों को जागृत करें, उन्हें पढ़ायें?"

"टूट गया.... टूट गया...." श्याम तालियाँ बजाता, कूद रहा था। उसकी चीख-पुकार से राजी का विचार-तार टूटा। उसने श्याम की ओर देखा और कहा:

"श्याम, क्या है? यूनिफॉर्म नहीं निकालना है क्या? हाथ-पाँव धो लो चलो। रोज कहना पड़ेगा क्या?

हाथ में आई छवि को रमण अपनी लुंगी से पोंछ रहा था और अटक गया। उसके चेहरे पर विचित्र भाव उभर आये। वह छवि को फेंकने जा रहा था, कि शाम की माला-जाप करके अपने कमरे में से बाहर आ रही अपनी माँ को सामने पाया। वह रुक गया।

"क्या करने जा रहा था रमण?" माँ की रुआबदार आवाज सुनकर रमण खुद को शर्मिंदा महसूस करने लगा।

"कुछ नहीं....." कहकर रमण ने छवि टेबल पर रख दी। अपने बेडरूम में जाने के लिए मुड़ा। क्योंकि वह खुद जब लाईट मूड में हो तब बोलता था कि, राजी-मांजी की जोड़ी रमण न सके तोड़ी' कभी इससे भी आगे बढ़कर बोलता कि, मेरे और मेरे बाप के भाग्य सरीखे। दोनों को पत्नियाँ जबरदस्त मिलीं, बाकी तो......" तब राजी तो कुछ नहीं बोलती पर माँ जरूर जवाब देती थी।

"ये तो है न बिटवा, जो पुरुष नसीबदार होता है उसे ही जबरदस्त पत्नी मिलती है। औरत जबरदस्त हो तो सब ठीक से चलता है, नहीं तो राम... राम....करते बैठो। चला के देखो संसार की गाड़ी। हम जबरी हैं, लुच्ची नहीं। लुच्ची मिली होती तो पता चलता बाप-बेटे को कि कैसे परिवार के साथ तार जुड़ते हैं।"

रमण बेडरूम के दरवाजे तक पहुँच गया था और माँ की आवाज आई, "कहाँ चला?"

रमण ने पीछे देखा। माँ अपने पल्लू से चित्र पोंछ रही थी। रमण को आदेश दिया, 'यहाँ आ।'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रमण टाल न सका। दूसरे तार वह तोड़ दे किन्तु राजी-माजी से जुड़ा हुआ तार वह थोड़े तोड़ सकता था! वह वापिस आया। माँ के सामने खड़ा रहा। राजी माँ की बगल में खड़ी हो गई थी। श्याम को कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि कहाँ खड़ा रहे, मम्मी के साथ कि पापा के साथ और वह दादी का पल्लू पकड़े, दादी से चिपककर खड़ा हो गया।

'यह छवि क्यूं उतार ली?'

'............'

'इस छवि का इतिहास तुझे पता है न कि नहीं?'

'हाँ.....'

'तो भी.....!'

'हाँ माँ तो भी। अब घर नहीं बदलेंगे, घर में रखी छवि बदली जायेगी। इसलिए यह....समझी?' रमण की आवाज में इतनी दृढ़ता! सास-बहू के लिए यह नया अनुभव था। राजी घबरा उठी। माँ थोड़ी ढीली हुई।

'फिर कुछ हुआ क्या?'

'और होना क्या था? वही.... वह साला भट्टणा.... घर आकर खा-पी जाता है और फिर मुझे....'

राजी फिर से सामने आ गई, "वह घर आ कर खा-पी जाते हैं वही बताता है कि उनके मन में ऊँच-नीच का भेद नहीं है। वो जात-पात को नहीं मानते। बाकी उनको पता है कि हम कौन हैं। और आप उस पर 'एट्रोसिटी' लगाना चाहते हो? आपको शर्म नहीं आती?"

"ना, नहीं आती, साला दंभी कहीं का। मेकवान भी कह रहा था कि उससे दूर रहना। दंभी....बदमाश ...।"

राजी को बहुत कुछ समझ में आ गया। वह रमण के पास आई,

"ऑफिस में क्या हुआ कहो तो सही। शाम आते ही तले-ऊपर हो रहे हो!"

"अरे! हमारी ऑफिस में जो स्वीपर आता है उसे मैं थोड़ा डाँट रहा था तब ये दंभी, बदमाश आ गया। सबके सामने मुझे बोलता है कि रमण तुझे तो उसकी परिस्थिति समझनी चाहिए। सबके सामने मुझे खुल्ला कर दिया। पर मैं उसे छोडूंगा नहीं।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"तो उसमें उसने गलत क्या कहा? हम भी सफाई कर्मचारियों को समझ नहीं सकेंगे, यह हद नहीं हुई? दूसरे लोग जो व्यवहार करते हैं उनके साथ, वह हम भी करें! तो औरों से क्या उम्मीद करें? और सबसे पहले तो आप अपने दिमाग में से यह जात-पात का भूत निकाल दो। कभी भी झगड़ा होता है तो नात-जात को न पकड़ो। खुल्ले दिल से रहना सीखो। इन्सान हैं कभी लड़-झगड़ भी पड़ते हैं पर उसका मतलब यह नहीं है कि दो जात या दो कौम लड़ने ही बैठी हैं।"

संस्कृत में बी. ए. की राजी को रमण के ऐसे विचारों से विरोध था। इस विषय पर वो हमेशा रमण को समझाया करती थी। रमण हमेशा गुस्सा करता था।,

"मेरी समझ में नहीं आता कि तू इतनी पोजिटिव क्यूं है? तेरी विद्या मासी जैसी तो लाखों में एकाध होती है। ज्यादा पोजिटिव होना भी निर्माल्यता की निशानी है। और तेरी विद्या मासी भी कम नहीं थी। वह बुढ़िया 'बेटी. ...बेटी' करके तुम से अपने घर का काम करवा लेती थी। उन लोगों का दिमाग ही सामंती। हमें अपना नौकर समझते हैं।"

कौन जाने किस मिट्टी की बनी थी राजी कि वह जरा-सा भी गुस्सा नहीं करती थी। उसमें भी रमण के सामने तो नहीं ही। वह जानती थी कि रमण का बचपना गया नहीं है। वह हँसते-हँसते बोली,

"बेचारी विद्या मासी स्वर्ग में बैठे-बैठे भी हिचकियाँ लेती होगी। आप उसे बुढ़िया कह कर याद जो करते हो।" इतना बोलते ही उसकी आँख भर आई।

"रमण, विद्या मासी काम करवा नहीं लेती थी, मैं ही कर देती थी। हमारी मंगनी हुई तब विद्या मासी ने हमको अपने घर पर खाने के लिए बुलाया था तब चंदन का हार चढ़ाया वृंदा का छवि दिखाकर, मैंने आप को कहा था कि मेरी इस प्रिय सखी की वजह से मैं आपको मिली हूँ। मैं सोमनाथ के समंदर में डूब रही थी तब वृंदा ने मुझे बचाया था। मुझे डूबते देख वह समंदर में दौड़ी थी, उसे तैरना आता था। उसने मुझे बचाया था, और किनारे की ओर धकेला था। पर... उस दौरान वह थक गई और एक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
विकराल लहर की चपेट में आ गई और दो दिन बाद उसकी लाश मिली थी।" यह सुनकर रमण की आँखे भी भीग गई थीं।

हर थोड़े दिन के बाद खड़े होते बवाल को आज राजी मूल से निकाल देना चाहती थी। उसने माँ को कुर्सी पर बिठाया और बोली :

"माँ आप चिंता मत करिये, जब तक आप मेरे साथ हैं तब तक यह जंग मैं ही जीतूंगी। कब तक और कहाँ तक यह चलेगा? इसका अंत आज ही होगा। इसकी छाया मैं श्याम तक लंबी नहीं होने दूँगी। वह रमण की ओर घूमी। रमण की नजर तोड़े हुए तार पर मक्खी की तरह भिनभिना रही थी।

'रमण...'

रमण ने राजी की ओर देखा। उसकी नजर की नाराजगी राजी से सहन न हुई। वह भी तार के सामने देख बैठी। फिर अपनी बात का तार जोड़ते हुए बोली,

"रमण, विद्या मासी की स्थिति मैं जानती थी। वृंदा की जगह मैं कभी न ले सकूंगी। पर मुझे प्रयत्न तो करना चाहिए न? मेरे श्वास वृंदा के ऋणी हैं और जीवनभर रहेंगे। मासी ने अपनी बेटी को शादी में देने की लल्ला की सेवा मुझे दी, वृंदा को याद करके। उस लल्ला को मैं घर से निकाल दूँ!" राजी की आवाज अब काँप रही थी। "और सिर्फ यही कारण नहीं है मेरी पोजिटिवनेस का, समझे? पर सबसे महत्त्वपूर्ण तो यह कि मैंने देखा है कि उच्च हो या नीच हो, औरत की स्थिति हर जगह समान है। उच्च-नीच के भेद लिए फिरते, और आप जैसे बात-बात में अन्याय होने की बात करनेवाले हर एक पुरुष-स्त्री के साथ अन्याय करते समय एक कतार में आ जाते हैं! तब तो सब एक ही बात मानते हैं कि स्त्री मतलब कार्येसु मंत्री, शयनेशु रंभा.... दूसरा कुछ नहीं। बोलो ऐसा क्यों? बात-बात में आप कितनों को मनुवादी-मनुवादी कहकर नीचा दिखाते हो पर इस विषय में आप खुद भी मनुवादी नहीं हो? रमण, आप भूल गये कि मुझे नौकरी नहीं करनी है वह आपका निर्णय था, मुझसे पूछे बगैर। हम औरतें भी हमारे साथ होते अन्याय का उपाय आपके रास्ते से ढूँढे तो? तो क्या होगा सोचा है कभी?" श्याम दुविधा में था। क्या हो रहा है, उसकी समझ में नहीं आ रहा था। अपनी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
मम्मी को कभी इतना बोलते हुए नहीं देखा था। वह बावरा हो उठा था। जोर से दरवाजा खोल के 'ए...ह...' करके ठोका। किसी ने उसकी ओर न देखा। टेबल पर चढ़ गया, वहाँ से कूदा फिर भी किसी का ध्यान न खींच सका। कुछ याद करता हो ऐसे माथे पर हाथ रखा और 'ए.....हा....' करके रसोईघर में गया। अगरबत्ती जला के ले आया, तीनों की अर्चना कर रहा हो ऐसे घूमा फिर बाहर जा के तुलसी के गमले में खोंस आया। अगरबत्ती की सुगंध से माँ भूतकाल की गुफा में से बाहर आई। रमण की ओर देखा। फिर अक्कड़ हो गये,

"देख रमण इस घर में तुझे जिसकी छवि टांगनी है टांग। ना नहीं है, पर, यह छवि तो रहेगी ही रहेगी। जब तक मैं जिंदा हूँ। बाद में तू जाने और राजी जाने। श्याम बेटा। तेरे पापा ने तो तुझे इस छवि की बात नहीं बतायी होगी, उसने राजी को भी नहीं बतायी होगी, पर मैं तुझे बताऊँगी। राजी तू भी आ जा। घर की बहुओं को भी अधिकार है परिवार में घटी घटना के बारे में जानने का। भविष्य के लिए यह जरूरी है।"

"रमण के दादाजी की बात है। तब अंग्रेजों का राज था। वो लोग हमारी कुरीतियों का बराबर फायदा उठाते थे। और समाज भी कैसा! कहने के उच्च वर्ण के लोग नीच वर्ण के साथ जानवरों से भी बदतर व्यवहार करते थे। इसलिए धर्मांतरण जोर से चल रहा था। वह सब याद करने जैसा नहीं है। बीती बातें भूल जाने में ही अच्छाई है। अपने दादाजी कृष्ण भगवान के पक्के भक्त थे। पूरे दिन नरसी मेहता के भजन गुनगुनाते रहते थे। ऐसा भक्त भी एक बार भड़क उठा था। हुआ यूँ था कि बासी माँगने गये थे तब किसी को भूल से छू लिया होगा। फिर क्या बचा होगा बाकी? दादाजी पर क्या बीती होगी पूछ मत बेटा..... घर आकर, टूटी हुई उंगलियों से कृष्ण की सभी छवि उतार डाली। ईसाई बन गये। चमत्कार तो यह था कि उनके प्रति लोगों का व्यवहार बदल गया! जाने छुआछूत कहाँ गई! पर खून में मिल गया वह नरसी मेहता बार-बार होंठों पर आकर गा उठता था, 'भणे नरसैया..... भणे नरसैया...' दादाजी अर्धपागल हो उठे थे। पशुमार सहन कर गया हुआ वह आदमी अपने हाथों से अपने हृदय पर किया हुआ घाव सहन न कर पाया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
दिमाग फट गया। एक दिन 'कृष्ण....कृष्ण...' रटते जा रहे एक ब्राह्मण को उन्होंने बाजार में रोका, "पंडितजी! यह कृष्ण....कृष्ण जपना बंद करो।"

"क्यों भाई! तेरे बीच में कहाँ आया मेरा भगवान?"

"पंडित! मैं जब कृष्ण.....कृष्ण..... रटता था तब मैं अछूत था! आज मैंने कृष्ण को छोड़ दिया तो छूत हो गया! आपके भगवान पर आपको भरोसा नहीं? तो ही उसके भक्त को अछूत मानते हैं। और वह भक्त कृष्ण को छोड़ दे तो उच्च वर्ण का हो जाये!"

"पंडित की आँख खुल गई। भविष्य की विभीषिका ताड़ गये। दादाजी का हाथ पकड़कर अपने घर ले गये। अपने घर की दीवार से यह कालिया ठाकुर (द्वारकाधीश श्री कृष्ण) की छवि उतारकर अपने घर लाये। अपने हाथों से छवि हमारे घर की दीवार पर टाँगी। और मुझे बोले कि, बहू तेरे हाथ की चाय पीये बगैर नहीं जाऊँगा हाँ..... और दादाजी की ओर देख बोले कि भगत! क्या कब के मूढ़ हो कर देख रहे हो? होने दो..... 'वैष्णव जन तो तेने कहिए जे पीड़ पराई जाने रे....'। दादाजी की आँखों में से सावन-भादो बह रहे थे। फिर भी गाया। पूरा गाँव इकट्ठा हो गया था। बाद में पंडितजी को भी नरसी मेहता (गुजरात के कवि) की तरह जाति से बाहर कर दिया था। यह.... वह छवि है। दादाजी ने कहा था कि, बहु जान की तरह संभालना इसे। यह हमारी अमूल्य विरासत है। अब भाड़ में जाये दुनिया। मेरे साँवरे ने मेरी हुंडी स्वीकार कर ली...."

माँ रमण की ओर मुड़ी, "बेटा! तोड़ने से तार टूटे पर चिनाई में ली गई खूंटी की तरह खून में गड़ी भावना कैसे टूटे? और बेटा! पुरखों ने सहन किये अन्याय को हथियार न बना कर ढाल बना। जिसे जो करना है वह करें पर हमारे घर में तो ....." वह आगे बोल न पाई। आवाज रुँध गई। पर उसकी गोद में रही कालिया ठाकुर की छवि पर किसी अन्य के ही अश्रु का अभिषेक हो रहा था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

5.
मोक्ष

कमान्डर अभयसिंह टेन्ट के बाहर कुर्सी पर बैठे थे, तभी एक कॉन्स्टेबल ने आकर सेल्यूट करके उनके हाथों में एक लिफाफा थमा दिया, और फिर सेल्यूट करके चला गया। लिफाफे के ऊपर छपी B.S.F. की मुहर और 'जीवन पर्यन्त कर्तव्य' वाला नारा पढ़कर वो समझ गए कि यह ऑफिशियल पत्र है।

लिफाफा खोलने से पहले उन्होंने चारों ओर दृष्टि डाली। दूर-दूर तक हिमाच्छादित कारगिल की पहाड़ियाँ फैली पड़ी थीं। बर्फ और पत्थर के सिवा कुछ भी नजर नहीं आ रहा था। उन्हें अपना गाँव एकदम से याद आया। बिलकुल कारगिल से विपरीत। यहाँ खून भी जम जाए इतनी ठंडी और वहाँ गुजरात के सरहदी गाँव नडाबेट में खून खौलने लगे इतनी गर्मी! फिर भी यहाँ कारगिल आने के बाद उन्हें अपना गाँव नडाबेट बार-बार याद आता था और इसका कारण था जमीन पर पड़ा सफेद रंग जो कारगिल में बर्फ के रूप में और नडाबेट में नमक की परत के रूप में बिछा था। यहाँ पहाड़ों के पत्थर से निकली धार, वहाँ जमीन में पड़ी दरार। न जाने क्यों बार-बार तुलना हो जाती थी। और बचपन की एक आदत, जमीन में पड़ी दरारों में जैसे चित्र-विचित्र आकारों को ढूंढना, वैसे ही यहाँ कारगिल में पहाड़ी पर जमी बर्फ में से ऐसे आकार ढूँढ लेते थे। और दूर-दूर तक फैली पहाड़ियाँ उनको ऊँटों के कारवाँ जैसे ही लगती थी। और कारगिल पोस्टिंग के कारण पत्नी को भी गाँव भेज दिया था, इसलिए भी उन्हें अपने गाँव की याद ज्यादा आ रही थी।

उन्होंने आँखें बंद कर लीं। बंद आँखों में माँ नडेश्वरी का स्वरूप दिखाई दिया, मन ही मन प्रणाम करके आँखें खोलीं। टेन्ट के अंदर गये। लिफाफा खोलाः

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"भारत-पाकिस्तान के बीच हर साल आयोजित बॉर्डर सिक्यूरिटी फोर्स की कॉमन मीटिंग में इस बार भारत के प्रतिनिधिमंडल में आपका नाम शामिल है। सूचना मिलने पर दिल्ली पहुँचना है। मीटिंग कराची में है।"

उनकी नस-नस में बिजली दौड़ गई। अपनी और अपने पूर्वजों की जिंदगी आँखों में तैर गई। उन्होंने अपने यूनिफॉर्म पर लगे B.S.F. के बैज को चूम लिया...। और उनका मन यादों के गलियारे में चला गया।

"माँ.........माँ......मैं B.S.F. में चुन लिया गया हूँ।" खुशी से फूले अभयसिंह माँ के पाँव छूने नीचे झुके। माँ ने ऐसा कहकर टोक दिया कि, "मुझे नहीं बेटा, पहले आँगन में रखी उन मटकियों को प्रणाम कर, जिनमें तेरे पूर्वजों के अस्थिफूल रखे हैं। उनके होते हुए पहले मेरे पाँव छूना ठीक नहीं।" इतना कहकर माँ अभयसिंह को आँगन में ले आई। वह मटकियों को देखता रह गया। जब वह छोटा था तब उसने आँगन में एक ही मटकी लटकी देखी थी। दस-बारह साल का हुआ होगा और उसके दादाजी गुजर गए। फिर उसने देखा था कि उस लटक रही मटकी के पास दूसरी मटकी लटका दी गई थी। तब उसने अपनी माँ से पूछा था,

"माँ, यह दूसरी मटकी क्यों? पहली को भी अभी उतारा नहीं है, और ये.........."

माँ के बदले दादी ने जवाब दिया था, "वह एक तेरे बाप के दादा के फूल की मटकी थी और अब वह दूसरी में तेरे दादा के फूल हैं। हमारे में अग्नि-संस्कार के बाद जो हड्डी भस्म नहीं होती उसे नदी-समंदर में विसर्जित किया जाता है। ऐसी हड्डी को फूल कहते हैं। तेरे परदादा विभाजन के समय सिंध से यहाँ नडाबेट आकर बस गये थे। उनकी हार्दिक इच्छा थी कि उनका अस्थि विसर्जन सरहद पार पाकिस्तान में आये किरीया पहाड़ के जल कुंड में हो, क्योंकि मोक्ष मिले ऐसी मान्यता थी। वह तब के सिंध में रह रहे हिन्दुओं की परंपरा थी। अब ये हमसे हो न सका तो.........." दादी रोने लगी थी।

तब अभयसिंह को पहली बार फूल के दूसरे अर्थ का पता लगा था। उसने भोलेपन से माँ को पूछा था,

"माँ, फिर तीसरी में बापू के और चौथी में मेरे.....।" और उसकी माँ ने एक चाँटा लगा दिया था। वह रोने लगा था। घूँघट निकाल के कोने में बैठी दादी ने उसे गोद में लेकर कहा था, "ऐसा नहीं बोलते बेटा। नडेश्वरी माता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तेरी रक्षा करे, सौ साल जिए मेरा लाल।" और फिर बहू को गालियाँ देने लगी थी। अभयसिंह के लिए दादी और माँ के बीच का झगड़ा कोई नई बात नहीं थी। पर उसे आश्चर्य यह था कि दादी और माँ जब भी आँगन में जाती थीं तो घूँघट जरूर निकालती थी। इसके लिए भी उन्होंने माँ से पूछा था,

"माँ, आँगन में तो कोई नहीं होता फिर भी तुम और दादी घूँघट क्यूँ निकालती हो!"

और माँ ने मटकी की ओर देखते हुए कहा था कि आप के परदादा और दादा जो बैठे हैं। बस तब से वह भी आते-जाते मटकियों को नमन करना सीख गये थे।

जब से अभयसिंह B.S.F. में जुड़े तब से उनके मन में एक ही बात थी कि कब मैं पुरखों के अस्थि फूल को किरीया के जल कुंड में विसर्जित कर पाऊंगा। जब वह छोटा था तब उसके दोस्तों ने एक बार उसे पाकिस्तानी कहकर चिढ़ाया था तब वह रोने लगा था तो उसकी माँ उसे नडेश्वरी माता के मंदिर में ले गई थी और माता के सामने खड़ा करके डाँटा था,

"क्षत्रिय का बेटा होकर रो क्यूँ रहा है? शपथ ले कि पुरखों के अस्थिफूल को किरीया में विसर्जित करूँगा, इसके लिए B.S.F. में जाऊँगा।" उसकी माँ को ऐसा लगता था कि B.S.F. वाले सरहद पार जा सकते हैं। इसी कारण तो अभयसिंह B.S.F. में आया था। उसे जब भी माँ को दिया हुआ वचन याद आता था तब अपनी छाती पर किरीया पहाड़ का सा वजन महसूस करता था। किरीया के बीच आया जलकुंड उन्हें रन में दिखती मरीचिका जैसा लगता था। B.S.F. में जुड़ने के बाद उन्होंने अपने प्रांत गुजरात के नडाबेट थाने में अपनी पोस्टिंग लेने के लिए बहुत प्रयत्न किए थे और बाद में अपनी कुलदेवी माँ नडेश्वरी पर सब छोड़ दिया था।

अभयसिंह को गर्व था कि उसके परदादा ने धर्म छोड़ने की बजाय जमीन छोड़ना पसंद किया था। और विभाजन के समय पत्नी और बेटे के साथ सिंध से गुजरात के बनासकांठे के सरहदी गाँव जलोया आकर बस गए थे। और जब तक जिये तब तक दूर से दिख रहे किरीया को प्रणाम करते रहे। और अंतिम दिनों में जब पागलपन का दौरा पड़ता तब जोर से आवाज देते, "अरे किरीया कहां हो?......वहाँ क्यों खड़ा है, आ जा....आ जा......गले लग जा मेरे बाप, या मुझे अपने पास बुला ले।" और सरहद की ओर दौड़ने लगते। पकड़ना मुश्किल हो जाता था उन्हें।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

यह सब बातें अभयसिंह ने अपने दादा से सुनी थीं। उसने अपने दादा को नडेश्वरी माँ के सामने गिड़गिड़ाते हुए देखा था कि, माँ रानवघण के भाले पर चिड़िया बनकर बैठी थी और सुमरा हमीर को मारा था। उस हमीर के वंशजों ने मेरे बाप से सिंध छुड़वाया था। वो तेरी शरण में आये थे। अब तू ही उनकी इच्छा पूरी कर, माँ। और वो रो पड़ते। छोटे अभयसिंह को गोद में बिठाकर, बचपन के अपने घर, गली-मोहल्ला और अपना गाँव चूडिया-बेरडा की बातें करते-करते उनकी आँखों के कुंड छलक उठते। बस ऐसी ही दरकी जमीं जैसे हृदय के साथ जीवन पूरा किया था।

और ऐसे ही घर की तीन-तीन पीढ़ियाँ मटकी बनकर आँगन में लटकती रहीं। अभयसिंह को भी पता था कि इसकी जड़ें किरीया के पीछे बसे चूडिया-बेरडा गाँव में है। जहाँ से उनको उखाड़ा गया था। और उस गाँव की जड़ें फूटी थीं उसके परदादा के हृदय में और वे जड़ें ठेठ अभयसिंह के हृदय तक फैली थी। और किरीया के पत्थरों ने उन जड़ों के लिए पानी का काम किया था।

❖❖❖

दोनों देशों की सीमा सुरक्षा बल के अधिकारियों की मीटिंग खत्म हो गई थी। केन्डल लाईट बूफे डिनर चल रहा था। कमांडर अभयसिंह उदास हृदय से, हाथ में प्लेट लिए खड़े थे। उनको अपने हेड ऑफिस से सूचना मिली थी कि मीटिंग खत्म होते ही तुरंत पोस्टिंग पोस्ट पर पहुँच जाना। वरना उनका तो प्लान था कि कराची आया हूं तो कैसे भी करके पुरखों के गाँव चूडिया-बेरडा जाना ही है, किरीया पार भी जाना है। इसलिए तो वह अपने परदादा के अस्थि फूल साथ लेकर आये थे। उसको लग रहा था कि वह मरीचिका के पीछे भाग रहा है........पर बस......अब नहीं.....हृदय फट जायेगा, दरक जायेगा, रन की जमीं जैसे।

और इतने में पीछे से किसी ने कंधे पर हाथ रखा, "कमांडर अभयसिंह सोलंकी?"

"यस........." बोलते हुए वो पीछे मुड़े।

पाकिस्तानी फोर्स के कमान्डर युनूस खान उसके सामने खड़े प्यार से हँस रहे थे। अभयसिंह ने हाथ मिलाया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"हम बैठे......कोने में?"

"यस.......यस........"

दोनों बैठे। युनूस खान ने बात शुरू की, "गुजरात के नडाबेट पोस्ट के पास जलोया गाँव, जानते हो?"

"अरे हाँ...हाँ...मेरा गाँव है। मेरा जलोया। पर आप....आप...।" अभयसिंह की आवाज रन में सनसनाते पवन जैसी थी।

"चार-चार पीढ़ियों से वो गाँव हमारे घरों मे प्रतिघोष कर रहा है। हमारी चार पीढ़ियों के पुरुषों के दिल में वो गाँव एक जख्म बनकर पड़ा है, जिसे हम ही भरने नहीं देते। उस जख्म को विरासत समझकर जी रहे हैं हम।"

"आप क्या कह रहे हो मेरी समझ में नहीं आता। मेरा गाँव.....आपका जख्म...प्लीज कुछ....।"

"मेरे परदादा के बड़े भाई विभाजन के समय पत्नी और बेटे के साथ नडाबेट के पास जलोया चले गये थे। मेरे परदादा व्यापार के लिए सिंध में ही रह गये। समय-संजोग और किस्मत के अधीन हो कर उन्होंने इस्लाम कबूल किया। पर.......उनके साथ रह रही उनकी माँ ने इस्लाम कबूल नहीं किया और वो घर के एक कमरे में अकेली रहने लगी। पीढ़ियों से विरासत में मिली कुलदेवी की छोटी-सी मूर्ति के साथ जीती रही। ताउम्र मौन ही रही। अंत में मृत्यु के समय मेरे परदादा को हाथ में एक छोटी-सी डिब्बी देकर बोली थी,

"मेरी कुलदेवी है, मेरे बाद मेरा बेटा नरपतसिंह जो जलोया में रहता है, उसे पहुँचा देना। हजारों पीढ़ियों की अमूल्य विरासत है।"

"नरपतसिंह सोलंकी?" अभयसिंह खड़े हो गये। युनूस खान ने उन्हें बिठा दिया। वो काँप रहे थे।

"अभयसिंह....शांत रहो.....हम जहाँ है....मुझे लगता है.....आप....आप ही. ..." युनूस खान का गला सूखने लगा। टेबल पर मौन फैल गया। हॉल हँसी के फव्वारे से सराबोर था।

अभयसिंह ने आँखें मूँद लीं। माँ नडेश्वरी की ध्वजा फरफराती दिखी। युनूस खान ने उनका हाथ दबाया।

"हम मुसलमान बने, आप हिन्दू रहे, पर हम दोनों की रगों में दौड़ता खून एक ही है।" उन्होंने आँखें मूँद ली। अभयसिंह को उनकी आँखे उस

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डिब्बी जैसी लगी, जिसमें उन लोगों की परदादी ने अपनी कुलदेवी नडेश्वरी देवी को संजो के रखा था। अब अभयसिंह ने युनूस खान का हाथ दबाया।

"अभयसिंह तुम नहीं मानोगे, पर आज भी हम नमाज पढ़ने के साथ माता के दर्शन करते हैं। और माँ नडेश्वरी को विनती करते हैं कि माँ तुम्हें जलोया पहुँचा सकूँ इसका रास्ता तू ही बता। तो हमारी परदादी को मोक्ष मिलेगा। वह तो जब तक जियी तब तक हिन्दू थी।"

"मोक्ष तो माँ और बेटे दोनों ही को देना है, युनूस खान।"

"अस्थि फूल न?" युनूस खान सहजता से बोले।

अभयसिंह चौंके, "आप को किसने........?"

"चूड़िया-बेरडा में जन्मे सभी हिन्दुओं की एक ही मुराद रहती है कि उनका अस्थि विसर्जन किरया के जलकुंड में हो, अस्थि मैं विसर्जित करूँगा। धर्म बदलने से पूर्वज थोड़े ही बदल जाते हैं?"

अभयसिंह ने युनूस खान का हाथ ऐसे दबाया जैसे अलग होना ही न हो। युनूस खान ने अपना हाथ अभयसिंह के हाथ पर दबा दिया। उन[1] दोनों के हाथ मिलकर एक ऐसी डिब्बी बना रहे थे जिसमें जाने कितनी ही परंपराएं आनेवाली पीढ़ियों के लिए संजोई गई थीं।

रनः रन अर्थात कच्छ का रन, जो पूरे विश्व में बेजोड़ है। हजारों बरस पहले वहाँ समुंदर लहराता था, फिर समंदर दूर चला गया और उस स्थल पर रन बना जहाँ रेती की तरह नमक देखने को मिलता है। रण को रेगिस्तान नहीं कह सकते।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

6.

जय जगन्नाथ

"वाह! नीलू; भई दाद देनी पड़ेगी तेरी पसंद की। जब तूने हनीमून के लिए ओड़िसा को चुना तो मैं हैरान था कि यह क्या? गोवा नहीं, कुल्लू-मनाली नहीं और ओड़िसा क्यों? वैसे मेरी इच्छा तो बैंकॉक-पताया की थी। और वहां की रंगीन रातों का मजा लेते, तेरे रंग के साथ...। तेरे पापा ने हमारे लिए ही तो धन इक्ट्टा किया है। ना थोड़े ही कहते। पर अब समझ में आया देवी जी कि आप भी कोई कम रंगीन तो नहीं हो हमसे, छुपी रुस्तम कहीं की....." भूषण ने नीलू के गले में हाथ डालकर, कानों में फुसफुसाते कहा और साथ में एक हल्का-सा चुंबन भी ले लिया।

नीलू पर इसका कुछ असर नहीं हुआ। उसकी नजर कोणार्क मंदिर के पत्थर के पहियों पर जम गई थी। उसे रथ के पहिये उल्टे घूमते दिखे। कानों में समंदर के गूँजने जैसी आवाज गूँजने लगी,

"पिताजी, मैंने कोई नग्नता नहीं चितेरी है। न कोई धर्म-संस्कृति विरुद्ध काम किया है। एक बार मेरे पेंटिंग्स देखो तो सही, फिर राय देना।" किशन आक्रोश में बोला था और कमरे में पत्थर जैसी आवाज फैली थी,

"मुझे कुछ सुनना नहीं है। चुपचाप कल प्रेसवालों के सामने पूरे समाज से माफी माँग लेना। कह देना कि किसी की भी धार्मिक भावना को ठेस पहुँची हो तो......"

और किशन बीच में चिल्ला उठा था, "नहीं...... कतई नहीं। मैं किसी से भी माफी नहीं मागूँगा। आप अपने राजकीय लाभ के लिए मेरा और मेरी कला का इस्तेमाल करना चाहते हो। आप अपने विरोधियों को कहते क्यों नहीं कि आप जैसे नीच लोगों को तो कोणार्क-खजुराहो में भी केवल नग्नता ही दिखेगी। क्या आप इसे हमारी संस्कृति के प्रतीक नहीं मानते? पर...पर..

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
.आप नहीं समझोगे। मुझे मेरी माँ ने बताया था कि, जिंदगी उसी में से हो कर गुजरती है, तब जा कर मोक्ष को पाती है। अश्लील तो आप सब हैं, सत्ता के लिए कुछ भी करनेवाले...रोज नई औरत का भक्ष करनेवाले..." और कमरे में किशन के गालों पर पड़े चांटे की गूँज वहाँ खड़ी नीलू के हृदय में समा गई। इसके बाद वह कभी अपने पिताजी के सामने बोल न पाई।

किशन एक उभरता हुआ कलाकार था। उसके पिताजी सूर्यकान्त एक राजकीय पार्टी के उच्च ओहदेदार थे। रंगीन और कड़क मिजाज। खद्दर का कुर्ता पायजामा पहने हुए। उसकी बेशर्म हरकतों के कारण ही उसकी पत्नी ने आत्महत्या कर ली थी। तब उसका बेटा किशन 17-18 साल का था। और एकाध साल में ही सूर्यकान्त ने दूसरी शादी कर ली थी। उसकी दूसरी पत्नी भी उसके साथ राजनीति में सक्रिय थी। और वह अपने साथ एक बेटी को लाई थी। लोग बातें करते थे कि वह लड़की सूर्यकान्त की ही है। उस लड़की का नाम था नीलू। नीलू के आने से सबसे ज्यादा खुश था किशन। उसको लगा कि, अपनी माँ फिर छोटी बहन बनकर वापस आ गई। और नीलू भी किशन के साथ घुलमिल गई थी। किशन नीलू के साथ उसकी उम्र का हो जाता था। बाकी उम्र में खासा 10-12 साल का फर्क था।

सूर्यकान्त ने किशन को अपना राजकीय वारिस बनाने की बहुत कोशिश की थी पर किशन को वह सब पसंद नहीं था। वह अपनी माँ पर गया था। अत्यन्त भावुक। अपने में मग्न। अपनी कला में मग्न। और तब उपरोक्त घटना घटी थी। पूरे शहर में किशन के पेंटिंग्स की चर्चा थी। साथ में राजकीय माहौल गर्म था, क्योंकि किशन सूर्यकान्त का बेटा था। रोजाना औरतों की होती छेड़खानी से, बलात्कारों से जो गर्म नहीं होते थे वह इन पेंटिंग्स से गर्म हो गए थे। सूर्यकान्त झुँझला उठे थे। यह सब चल रहा था तब किसी पत्रकार ने किशन को पूछा था कि, "क्या आप भी अन्य कलाकारों की तरह ऐसे विवाद खड़े करके प्रसिद्ध होना चाहते हो? विदेश में नाम बनाना चाहते हो?" किशन ने जवाब दिया था।

"देखो, मेरे चित्रों में मैंने किसी देवी-देवता को नहीं चितरा है। मैं ऐसा नहीं कर सकता। मैं खुद कृष्ण का भक्त हूँ, हाँ यह अलग बात है कि पूजा-पाठ नहीं करता। बाकी ये विकृत मानसिकता वाले क्या समझेंगे मेरी कला को। मुझे कहते हुए गर्व होता है कि मेरा आदर्श वही विष्णु

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

महाराणा, कोणार्क के मुख्य शिल्पकार हैं। जिसने बारह साल तक ब्रह्मचर्य का पालन किया था और कोणार्क का निर्माण किया था। पर यह कला के अन्ध लोग, सेक्स...सेक्स...का रटन करने वाले ये सब ब्रह्मचर्य का अर्थ क्या समझें? यह साधना है और औरत को साधन समझनेवाला रुग्ण समाज यह नहीं समझेगा।"

और पूरे शहर में विवाद फैल गया था। विरोधी दल टूट पड़ा था सूर्यकान्त पर। और सूर्यकान्त बेकाबू हो गये थे किशन पर। और किशन, जिसकी आवाज में समंदर की गूँज थी, वह समंदर उसकी आँखों में लहरा गया था। घबरा गई नीलू को सहलाकर, उसके कपोल को चूमकर निकल गया था बंगले से बाहर। नीलू को कुछ समझ में नहीं आया था। और सूर्यकान्त चिल्लाये थे, "कलमुंहा...बिलकुल अपनी माँ जैसा मूर्ख, गँवार.... जड़।" और नीलू के सामने देखे बगैर वे वहां से चले गए थे।

घर में अकेली हो गई थी नीलू। यहाँ आने से पहले कायम आया के पास रहने के कारण घबराहट उसका स्वभाव बन गया था और ऊपर से पिता का गर्म स्वभाव उसे और ठंडा कर गया था। घर में किशन का नाम लेना मना था। अब थोड़ी बड़ी हुई नीलू ने रास्ता निकाला था। अपने बंगले के ड्रॉइंगरूम में भगवान जगन्नाथ, सुभद्रा और बलराम का बड़ा चित्र लटका दिया था। जो उसे अपने भैया की याद दिलाता रहे। वो किशन का ओड़िसा के प्रति लगाव जानती थी, और अपने रूम में बेनमून कला के बेजोड़ स्थापत्य जैसे कोणार्क के चित्र को लगाया था।

ड्रॉइंगरूम के चित्र को देखकर सूर्यकान्त बहुत खुश हुए थे। जो भी आते उसे बताते और अपनी धार्मिकता के ढोल पीटते रहते।

OOO

भूषण ने फिर से नीलू के गले में भद्देपन से हाथ डाला और बोला, "वाह रे मेरी मेनका! आपका जवाब नहीं है...।" उसकी नजर साँप की तरह नीलू के शरीर पर डोल रही थी। नीलू स्थितप्रज्ञ सी खड़ी थी तब उसके कानों में शब्द पड़े, "आ मंदिर पर कलश नतो चड़तो, महाराजा भीमदेवे कारीगरों ने धमकी आपी हती के..." गुजरात से आये यात्रियों का एक गाइड गुजराती में समझा रहा था। यह सुनकर नीलू चौंकी थी। विष्णु महाराजा का नाम सुनकर उसके रोंगटे खड़े हो गये थे। वह दौड़ी थी गाइड की ओर, और उसका हाथ पकड़ लिया था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"आप...आप इतनी अच्छी गुजराती कैसे बोल लेते हो? आप गुजराती तो नहीं लगते?"

गाइड अटक गया। थोड़ा घबरा गया। बोला कि, "नहीं, मैं गुजराती नहीं हूँ। दीदी...आप...आप..प्लीज...मेरे टूरिस्ट डिस्टर्ब हो रहे हैं।" उसने हाथ छुड़वा लिया। उसे नीलू थोड़ी पागल सी लगी।

भूषण ने नीलू का हाथ पकड़ कर खींचा, "पागल हो गई हो क्या? गाइड है भई, सब भाषा जानता होगा। इसमें तू इतना नाचने क्यों लगी!" भूषण गुस्से से लाल हो गया था। नीलू ने जोर से अपना हाथ छुड़वा लिया और वापस गाइड की ओर भागी,

"सांभलो....सांभलो..भाई...(सुनो...सुनो...भाई) मारो विष्णु महाराजा...एटले के मारो भाई किशन...(मेरा विष्णु महाराजा...मतलब मेरा भैया किशन...)"

अब सच में गाइड बहुत घबरा गया। वह कुछ-कहे-सुने बगैर भागा। दूर जाकर एक विशाल प्राणी का शिल्प था उसके पीछे छिप गया। उसके टूरिस्ट भी गुस्से हो गये। भूषण विकराल हो उठा था। नीलू के गालों पर चाँटा लगा दिया। फिर चिल्लाकर बोला,

"नीलू...मूर्ख...अपने मूर्ख भाई को ढूँढने आई हो यहाँ? मर गया होगा कब का पुरी के समंदर में डूब के यहाँ आये ही हैं तो कल पुरी जाये तब उसके नाम का नहा लेना।" और उसने नीलू को खींचा था। नीलू में भी न जाने कहाँ से जोर आया था। उसने फिर अपने को छुड़ाया और इधर-उधर देखकर गाइड को ढूँढने लगी। वह रोये जा रही थी। दूर खड़े गाइड को कुछ समझ में नहीं आ रहा था।

OOO

"क्या कहा तूने जगना, वह आदमी उस औरत को नीलू कह रहा था?"

'नीलू' बोलते ही किशन के रोंगटे खड़े हो गए थे। वह खुद अपनी जगह से खड़ा हो गया था। उसकी आँखों के सामने तितली जैसी नीलू उड़-उड़ रही थी। और उसके शब्द कानों में गूँजने लगे थे।

"भैया, अब की बार ओरिसा जाओ तब मेरे लिए ढेर सारे मोती लाना, ढेर सारे मोती। मैं उनसे मेरी फ्रॉक बनवाऊंगी। और भैया, यह डॉलफिन कैसी होती है? हमारी होड़ी के साथ-साथ चलती है चिल्का में तो हमारी होड़ी को डुबा नहीं देती?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"अरे! नहीं रे पगली, कुछ नहीं करती डोल्फिन। बिलकुल तेरे जैसी होती है, निर्दोष। और मोती? जरूर ला दूँगा। पर मेरा मोती तो तू है, मेरी आँखों का मोती मेरी बहन।"

किशन नीलू को घुमाता भी बहुत था। शाम होते ही भाई-बहन की सवारी साइकिल पर निकल पड़ती थी शहर की सड़कों पर। कभी-कभी फिल्म भी देखने जाते थे। और लायब्रेरी तो सही ही सही। माँ को जो करना चाहिए वह सभी कार्य किशन कर रहा था नीलू के लिए। अपनी आसपास की धूमधाम के बीच नीलू उसे आध्यात्मिक केन्द्र जैसी लगी थी। और वह माँ के न होने का दुःख भूल गया था।

"दादा, आप कहाँ खो गये?" जगना किशन को दादा कहता था। किशन ने ही उसे बड़ा किया था। जगना के माता-पिता महानदी में आई बाढ़ में बह गए थे। किशन जब घर से भागकर ओरिसा आया था, उस साल ओरिसा में बारिश ने कहर बरपाया था। लाखों लोग बेघर हो गये थे और सैंकड़ों मरे थे। और जो लोग बचे थे वे भूख और बीमारी से मर रहे थे। तब किशन अपनी कला को छोड़कर लोगों की सेवा में लग गया था। बस तब उसे जगना मिला था। लोग कहते थे जगना अनाथ हो गया तो किशन कहता था कि अरे! जो जगत का नाथ है वह अनाथ कैसे हो सकता है! ये मेरा जगन्नाथ है। और जगना के साथ दूसरे कितने बच्चों को किशन ने अपने साथ रखा था और कला साधना के लिए आश्रम बनाया था, जिसमें लोग अपने आप मदद दे जाते थे। किशन ने जगना से उड़िया सीखी थी और जगना ने गुजराती सीख लिया था।

"दादा.." जगना ने किशन को बुलाया तो किशन वर्तमान में आ गया। उसकी आँखों में से निकले वो मोती उसकी सफेद दाढ़ी में खो गये। संयत हो कर बोले,

"और क्या बोल रहा था वह आदमी?"

"वो...वो...उस औरत को मारते हुए बोलता था कि...कि...कब का मर गया होगा तेरा भाई...कल पुरी जायेंगे तब समंदर में नहा लेना उसके नाम का।"

"ओह...नीलू...वह, जगना वो नीलू है...मेरी सुभद्रा।" किशन कभी-कभी नीलू को सुभद्रा कहता था यह कहकर कि मैं किशन हूँ तो तू अपने आप सुभद्रा हुई न।"

"जगना, हम अभी तुरंत पुरी जायेंगे।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"पर दादा...कल वो आनेवाले हैं, विदेशी टूरिस्ट। हमारा कला आश्रम देखने। आप कहते थे कि बहुत महत्त्व के लोग हैं।"

"हाँ जगना, पर...वो लोग दूसरी बार आ सकते हैं पर मेरी नीलू...। जगना, प्रियजन की मृत्यु तो सहन हो सकती है पर बिछड़ जाना...", किशन की आवाज में दर्द भर गया था। "चलो...जगना।"

"दादा...यह नीलू कौन है?" जगना ने धीरे से पूछा।

"वह...वह...मेरी सुभद्रा है और जगना वो...मेरी नीलू है। ज्यादा मत पूछ, ले चल मुझे..."

OOO

जगत मंदिर के सामने भीड़ इकट्ठी हो गई थी। लोग तमाशा देख रहे थे। भूषण और नीलू के बीच की खींचातानी।

"अरे! तू कैसी मूर्ख औरत है। तू दर्शन को ना बोल रही है। तुझे पता है, जगन्नाथ के प्रसाद का अनादर करने वालों के साथ कुछ न कुछ अप्रिय घटित होता है, और तू...तेरे जैसी मूर्ख...।"

"बस...चुप। एकदम चुप। बहुत सुना आपको...नहीं सुनना है मुझे आपसे। मैं मंदिर में नहीं जाऊँगी, कह दिया न?" नीलू में न जाने कहाँ से शक्ति फूट पड़ी। जाने स्वयं आदि शंकराचार्य आकर उसके कानों में फूँक गये, "शिवोऽहम्..." और नीलू के रोम-रोम में से गूँज रहा था, "शिवोऽहम्.... शिवोऽहम्....".।

"तमाशा कर रही है सा...। मेरा हनीमून बिगाड़ दिया। भाई-भाई कर रही है। तो शादी क्यों की? तुझे तो ऐसा सबक सिखाऊंगा।"

भूषण सूर्यकान्त की पार्टी का युवा कार्यकर्ता था। और इसमें बैठे एक ढीट राजकारणी को सूर्यकान्त ने पहचान लिया था। इसलिए दामाद बना लिया था। और उसे राजकीय वारिस जाहिर कर दिया था।

"चल, कहता हूँ।" भूषण की आवाज में हुक्म था।

"नहीं।" नीलू में सख्त प्रतिकार। "वहां जगन्नाथ और बलराम अपनी बहन को बीच में लेकर बैठे हैं और मुझसे मेरा भाई छीन लिया। मैं नहीं करूँगी उनके दर्शन, आप जाओ।" नीलू बैठ गई। वह बेहोशी की ओर जा रही थी उसे देखते ही पता चलता था।

आसपास खड़े लोग जगन्नाथ के प्रसाद की जूठन जैसे लग रहे थे। उसमें जगना भी था। वह उल्टे पाँव दौड़ा,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"दादा...दा..दा..वो...औरत...वही, कल वाली नीलू।"

किशन भीड़ को चीरता हुआ अंदर आया। नीलू को दूर से देखा। नीताई गोर जैसे दौड़े होंगे पुरी के समंदर की ओर, वैसे ही वह दौड़ा...। नीलू का हाथ थाम लिया, और छाती से लगा लिया। अनजाने, अप्रत्याशित हालत से नीलू घबरा गई। "छोड़ो..." करके दूर हो गई। किशन को घूरने लगी। भूषण बीच में आ गया दाँत कचकचाकर।

"कौन हो? मेरी पत्नी को इस तरह....पागल लगता है।"

किशन ने फिर से नीलू के दोनों हाथ पकड़े और नीलू के साथ जो खेल खेला करता था, अपने हाथों से तालियाँ बजाकर सामनेवाले के गालों पर थपथपाना, यह बारी-बारी करना, फटा-फट करना..., नीलू भी इसके साथ खेलने लगी। तो किशन ने जोर से कहा,

"सुभद्रा! ठीक से खेलो....बईमानी नहीं चलेगी..."

और नीलू पूरे होश में आ गई। तालियाँ अटक गई। दोनों एक-दूसरे को देखते रहे। और...और...नीलू, भैया...कहकर किशन की छाती में समा गई। किशन अपनी सुभद्रा के बालों में उँगली सहलाता हुआ धुँधली नजर से जगत मंदिर की ध्वजा की ओर देख रहा था।

भीड़ में से किसी ने कहना शुरू किया, "जगन्नाथ स्वामी... जय जगन्नाथ"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

7.

"वंशज"

कबूतर के घोंसले जैसे झोंपड़े, उसके आसपास उड़ते हुए कबूतर के बच्चे जैसे आदिवासी बच्चे और चारों ओर फैली पावागढ़ की पहाड़ियों के कारण जाम्बुघोड़ा का जंगल विशाल कुएँ जैसा दिखता था। खिले हुए पलाश को टकटकी लगाकर देख रही आदिवासी आश्रम की संचालिका सिंधु जल देवी-सी दिख रही थी।

'बेन...डाक...'

आवाज सुन कर सिंधु पीछे के अहाते में से आगे के दरवाजे पर आई। उसके नाम खत! इतने सालों में यह पहली बार हुआ था। डाक ली,

'मेरे पूज्य पिता जी श्री द्वारिकादास मथुरादास जोशी का स्वर्गवास हुआ है। तमाम लौकिक विधियाँ संपन्न हो गई हैं। आपको ख़बर करना यह मेरे पिता जी की दिली इच्छा थी और साथ में उनकी पुस्तकें भी आपको दे देनी हैं.............. चाहो तो ले जाना। - कावेरी जोशी जानी।

कबूतर के पंख की फड़फड़ाहट जैसा समय उसके अन्दर फड़फड़ाने लगा। कावेरी के शब्द उसे कंचे जैसे लगे जिससे दोनों बचपन में खेला करती थी। कावेरी कंचे खेलने में माहिर थी। हर बार वही जीता करती थी और कंचे को सिंधु के कानों के पास बजाया करती थी।

होठ फड़फड़ा उठे, '...पिता जी......!' उसे अपनी जीभ बेजान होती लगी। वह झूले पे बैठ गई। झूला पीछे गया....

'तुम क्या कह रही हो सिंधु, पता है?'

'हाँ, पूरे होश में हूँ। आपकी बेटी हूँ, सोचे-समझे बगैर तो नहीं बोलूंगी।'

'नहीं ऐसा नहीं होगा, यह नामुमकिन है।' द्वारिकादास ने शिखा को बाँधते हुए कहा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'यह आप कह रहे हो! कोई कारण?'

'हर बात का कारण नहीं होता।'

'इनकी विद्वता पर कोई शक?'

'नहीं... इसमें कोई शक नहीं... पर नहीं बस।'

पिताजी की आवाज की दृढ़ता से सिंधु पल-दो-पल के लिए सहम गई फिर संयत होकर बोली, 'पर यही होने वाला है, बस।'

सिंधु समझ गई कि यह कोई साहित्य सिद्धांत की बात नहीं है कि पिता जी उसके शब्द को आखरी मानें। इसलिए उसने भी अपनी आवाज ऊँची की। पिता जी थोड़े नरम हुए, 'देख सिंधु, पूरी जिन्दगी का सवाल है। ऐसे महत्त्वपूर्ण निर्णय भावावेश में नहीं लेने चाहिए। हम शांति से उस पर चर्चा करेंगे, अब तुम छोटी तो हो नहीं।'

'मुझे कुछ सोचना नहीं है। मैंने अपना निर्णय आपको बता दिया, और वह अंतिम है।'

'मैं ऐसा नहीं होने दूंगा... तुम्हारा एक निर्णय मेरी और मेरे पुरखों की इज्जत मिट्टी में मिला दे ऐसा हरगिज नहीं होने दूंगा, तुम कान खोल कर सुन लो। वह कौन है मालूम है? काश....पता होता, तो ....मैंने बताया होता। वो....वह...' अपने दादा-परदादा बोलते थे; वह शब्द बोलने में द्वारकादास को तकलीफ हो रही थी।

सिंधु को मानो बिजली का झटका लगा। वह सोच भी नहीं सकती थी कि बापू की 'ना' की वजह यह हो सकती है। उसे अपने बापू के व्यक्तित्व का यह हिस्सा पहले क्यों कभी दिखाई नहीं दिया! वह समझ गई कि यह लड़ाई आसान नहीं है। दुःख और गुस्से को पीते हुए वह बोली, 'बापू! नीरव ने मुझे सब कुछ बताया है। उसका दुर्भाग्य तो देखो कि कोई मनचाही लड़की सामने से प्रेम का इजहार करें तब प्रेम के प्रचंड प्रवाह में बह जाने की बजाय दृढ़ता से खड़ा रहना पड़ता है। खुद को चीरकर अपनी जात बतानी पड़ती है। जीवन की इससे बड़ी विडम्बना और क्या हो सकती है?'

'जरूर उस बदमाश ने तुझे भरमाया-फुसलाया है।'

'बापू! ऐसी परिस्थिति में हर पिता के द्वारा बोले जाते शब्द आपके मुंह में शोभा नहीं देते। आपने सुना नहीं कि नीरव ने नहीं, मैंने प्रस्ताव रखा था?'

'सिंधु! तुझे शर्म नहीं आती ऐसी बातें करते कहाँ हमारे संस्कार... कहाँ हमारी संस्कृति! यह सब पश्चिमीकरण का नतीजा .... तू भी आ गई इसकी चपेट में?'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'बापू जी! अभी थोड़े दिन पहले ही आप अपने वक्तव्य में कह रहे थे कि पूरे विश्व में गर श्रेष्ठ प्रेम-पत्र कोई है, तो वह रुक्मणी का कृष्ण को लिखा हुआ पत्र है। आपको तो पता होगा कि रुक्मणी कोई पश्चिम की चपेट में नहीं आई थी। कि ऐसा ही था..........?'

'सिंधु...........'

वह कुछ भी बोले बगैर खिड़की बंद करने के लिए खड़ी हो गई। और खिड़की में ही स्थिर हो गई। नारियल के पेड़ के पीछे से दिख रहा पूर्णिमा का चाँद उसे भोजपत्र जैसा लगा जिस पर रुक्मणि ने श्री कृष्ण को प्रेम पत्र लिखा था, सामने से अपने प्रेम का इजहार किया था। वह रुक्मणि के हस्ताक्षर उकेर रही हो ऐसे चाँद में मग्न हो गई। उसके कानों में नीरव के शब्द गूँजने लगे,

'सिंधु तू सिंधु है, प्रचंड घोषा.... और मैं हूं नीरव बिलकुल नीरव। मैं उस समाज का प्रतिनिधि हूँ जिसकी आवाज दबा देने के लिए उसके मुँह पर कुल्हिया बाँधी गई थी जिससे वह बोल ही न सके। और इस सिंधु घाटी की संस्कृति में उसके प्रतिघोष ही न उठे। पीठ पर झाड़ू बाँधे गये ताकि आसेतु हिमालय के फलक पर उनके पदचिन्ह रहे ही नहीं। मैं उस समाज में से आता हूँ, और आप हो नादब्रह्म के उदगाता ऋषियों की उत्तराधिकारी! हमारा मेल कैसे हो सकता है सिंधु? और...और... मैं समंदर भी नहीं हूँ जिसमें सिंधु समा सकें। मैं तो हूँ जलता हुआ रण (रेगिस्तान) जहाँ मरीचिका के अलावा और कुछ न मिले...।'

'प्लीज.... नीरव, ऐसी बात मत करो।' सिंधु ने नीरव के कंधे पकड़ लिए। उसके होंठ काँप रहे थे, जाने मरीचिका को पाने को अधीर हो उठे थे। नीरव के हाथ भी सिंधु के कंधों पर आ गये, आदमी के अस्तित्व के साथ ही जुड़ी हुई प्यास उसके होंठों पर बैठी थी। वह थोड़ा झुका...और उसकी आँखों के सामने मरीचिका नाचने लगी, वह दूर हो गया। सिंधु की तो समाधि लग गई थी, इसी में उसको नीरव की आवाज सुनाई दी, 'सिंधु तुम साक्षात रुक्मणी लग रही हो, बुद्धि और सौंदर्य की स्वामिनी। रुक्मी का प्रेम तो कृष्ण ही सँभाल पाए, और मैं...मैं.... कृष्ण नहीं हूँ।' नीरव वहाँ से तेजी से निकल गया, सिंधु देखती रही गई, रोक न पाई क्योंकि वह खुद में कहाँ थी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हवा के झोंके से खिड़की बंद हो गई। और उसे याद आया कि वह बापू से बात कर रही थी तो वापिस मुड़ी। द्वारकादास अपने कमरे में चले गए थे। झूला धीरे-धीरे हिल रहा था मतलब अभी ही उठकर गए थे। सिंधु ने कमरे की ओर देखा, कपाट बंद थे। उसकी नजर कोने में पड़े टेबल की ओर गई। माँ-दादी की तस्वीर के आगे थोड़े हरसिंगार के फूल पड़े हुए थे। सामने की दीवार पर दादा जी का आदमकद छवि लटक रहा था। सिंधु को कितनी बार ऐसा महसूस होता था कि दादा जी छवि में बैठे-बैठे घर पर शासन कर रहे हैं। अमेरिका के मोह में ग्रेज्युएट होते ही शादी कर लेने वाली छोटी बहन कावेरी याद आ गई। कावेरी ने शादी के बाद दो सरनेम रख लिए थे, - जोशी और जानी। सिंधु को इस देखा-देखी से हँसी आती थी। वो कावेरी से इसका मतलब पूछती भी, 'ये दो सरनेम धारण करने के बाद भी अपनी पहचान क्या? माँ की पहचान क्या? क्या हम अपनी माँ की संतान नहीं होती? हमारे यहाँ तो बेटी बाप से और बेटा माँ से पहचाना जाता है। यही हमारी संस्कृति है। कुछ नया करना है तो ऐसा कुछ शुरू करना चाहिए।' कावेरी को कुछ समझ में नहीं आता था तो वो सिंधु को पुराने ख्यालों वाली कह के व्यंग्य से हँस देती थी।

OOO

द्वारकादास अपने कमरे की खिड़की में से दीखते चाँद को देख रहे थे। वातावरण टिटिहरी के टर्ट..ट्रीटी...टी... आवाज से गूँजता था। इस आवाज के बीच उन्हें पूर्णिमा का चाँद टिटिहरी के अंडे जैसा लगा। उन्हें लगा कि टिटिहरी नहीं जैसे वह खुद आकाश में चक्कर काट रहे हैं! बचपन में पढ़ी थी वह कविता याद आ गई, 'टट रे टिटोडी सागर ना तीरे..... सागर मारा इंडा डूबाडी दे.....!' उन्हें लगा कि उनके संस्कारों रूपी अंडे को भी उनकी ही सागर जैसी बेटी डुबोने चली है। टिटिहरी की तरह उनका भी एक पाँव ऊँचा हो गया, और वो बोल पड़े, 'नहीं....नहीं... मैं ऐसा नहीं होने दूंगा, हरगिज नहीं....'

सुबह द्वारकादास ने चाय रखी और फिर सोफे पर ही सो रही सिंधु के सिर पर हाथ फेरा और जगाया। सिंधु ने आँखें खोलीं तो वह रसोई घर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
में चले गए। सिंधु मुँह धो कर रसोई में आई। वी.सी.डी. पर 'वैष्णव जन तो तेने रे कहीऐ जे पीड पराई जाने रे....' बज रहा था। सिन्धु ने बंद कर दिया। द्वारका दास ने उसके सामने देखा। अपने बापू की आँखों में तैरता भाव उसने पढ़ लिया,

'क्या मतलब बापू? आप तो कर्मकांड के विरोधी हो न? और नरसी मेहता को आदत से मजबूर हो कर हर रोज सुनना वह भी एक कर्मकांड ही हुआ न?'

'सिन्धु। ... अभी तक भूत उतरा नहीं मगज से?'

'यह भूत नहीं है बापू, यह तो जीवन रस है, जिसका नशा चढ़ा है मुझे।'

'यह नशा उतर जाएगा तब वास्तविकता समझ में आएगी, तब जी भरकर पछताएगी'

'लेकिन अभी तक आपके प्रति जो गर्व का भाव था वो उतर गया, वास्तविकता.... न कड़वी है न कुछ भी ....। आप के खाने के दाँत अलग और दिखाने के दाँत अलग हैं, उसके डंक ने मेरी भावना को बधिर कर दिया है। जात-पाँत, ऊँच-नीच के रिवाजों ने देश को खोखला कर दिया है, उसी की वजह से देश गुलाम हुआ, धर्मान्तरण की प्रवृत्ति फूली-फली, जिसके नतीजे आज तक हम भुगत रहे हैं, ऐसा आप स्वयं कई बार जाहिर (प्रकट) कर चुके हैं। और निजी जीवन में ऐसा! आपको ऐसा दिखावा करने में खुद के सामने शर्म नहीं आती?'

अहम पर पड़ी लताड़ से द्वारका दास खीज उठे। मुट्ठी में भिंचा रोष जबान पर आ गया : 'सिं...धु..., तुम हद पार कर रही हो, अपने बाप को पाखंडी कहते हुए तुम्हें शर्म नहीं आती? कहाँ से सीखा यह सब, मुझे मालूम है। जैसी संगत वैसी रंगत। हम कौन हैं भूल गई क्या? कहाँ अपना गोत्र? सब कुछ उसने तुम्हें भुलवा दिया! हम....वेदांती....समाज को संस्कारित करने वाले, हम......................'

'बापू, आज जो बोल रहे हो वह तो 'अहं ब्रह्मास्मि' हुआ। आपने तो सिखाया है कि इसके बाद गर 'तत्वमसि' न आये तो वह अहंकार बन जाता है। अहंकार सर्वनाश की जड़...'

'ब.......स, बहुत हुआ...... आगे.....'।

दरवाजे की घंटी बजी। दरवाजा खोलने सिन्धु खड़ी ही रही थी तो द्वारका दास ने उसको रोका, 'रहने दो, मैं खोलता हूँ। मैंने ही नीरव को बुलाया है।'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सिन्धु खुश हो उठी और साथ में डर भी गई। सामने नीरव खड़ा था, उसे रुक्मी कहकर बेचैन कर चले जाने वाला नीरव। कल की घटना से अनजान नीरव, आदतन बोल उठा : 'चाय में मेरी राह न देखी?'

कई बार द्वारका दास रविवार को नीरव को सुबह ही बुला लेते थे। अपने कॉलेज के कार्यों में मदद लेने के लिए। नीरव खुशी-खुशी आता था। सुबह की चाय से रात के भोजन तक। द्वारका दास जहाँ प्रिन्सिपल थे वहीं कॉलेज में नीरव लेक्चरर था। सिन्धु दूसरे कॉलेज में लेक्चरर थी। काम के साथ दुनिया भर के साहित्य की चर्चा होती रहती थी। रविवार की पूर्णाहुति सिन्धु के गजल गान से होती। अभी पिछले रविवार को सिन्धु ने गाया था :

"गम बढ़े आते हैं, कातिल निगाहों की तरह
तुम छुपा लो मुझे ए दोस्त, गुनाहों की तरह"

सिन्धु हिचकिचाकर खड़ी हो गई, 'त...तु...म, आप... आप बैठिए.... मैं...अभी....'

'चाय ही क्यों? इसे थाली नहीं देगी!' द्वारका दास की आवाज में कातिलाना फुंकार थी। इस जहर से नीरव को सिन्धु बचाना चाहती थी, उसे दरवाजे की ओर धकेलती हुई बोली, 'आप जाओ नीरव यहाँ....यहाँ... से' किस मुँह से वह अपने पिता जी के पाखंड का पर्दाफाश करें। उसकी धारणा के विपरीत, अति विकट परिस्थिति यहाँ खड़ी हो गई थी। उसने कल्पना भी नहीं की थी कि पिताजी यहाँ तक गिर सकते हैं।

और नीरव तुरंत ही वातावरण को भाँप गया। समझ गया कि क्या हुआ होगा। उसके कानों में कुत्ते के भौंकने की आवाज आने लगी। विह्वल होकर वह आसपास देखने लगा। अपने गुरु को उसने पुतले की तरह खड़े देखा। अपने हाथ के अंगूठे को उसने फड़कता हुआ पाया। उसने मुट्ठी भींच ली। समय की धार से छिल कर और अधिक तेज हुआ युगों पुराना प्रश्न उसकी नजर में से फूटा। द्वारका दास दो कदम पीछे हट गए। सिन्धु बीच में आ गई, 'नीरव प्लीज....जाओ तुम।'

नीरव ने सिन्धु की ओर देखा। कोई आदिम सुगंध अश्रु बन कर सिन्धु की पलकों पर रुक गई थी। पल दो पल नीरव ने अपने को उसी में डूबता हुआ पाया.... मगर तुरंत सँभल गया:

'सिन्धु, मुझे नतीजा मालूम था। इसलिए इतना, तुम्हारे जितना आघात नहीं लगा, पर.... छोड़ो। रुढ़ियों की जंजीर को तोड़ना इतना आसान नहीं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
जितना चाँद पर जाना आसान है। ब्लड ट्रांसफ्युजन हो सकता है लेकिन संस्कारों का ट्रांसफ्युजन...?' नीरव द्वारका दास की ओर मुड़ा। द्वारका दास ने मौके का फायदा उठाया,

'किसी के विश्वास को बरकरार रखना भी.... उतना ही कठिन है और आप उसमें नाकाम रहे हो....श्रीमान। आपकी पढ़ने की लगन देख कर मैं आप को यहाँ शहर में लाया, तब आप आठवीं कक्षा में पढ़ रहे थे। इसके बाद का वृत्तांत आपको सुनाने की जरूरत नहीं लगती मुझे, आपको सबका सब याद होगा।

और आज...." द्वारका दास रुक गए। वह जानते थे कि आगे हलाहल है। जिसकी एक बूँद ही काफी है। उन्होंने टिटिहरी की तरह अपना एक पाँव ऊँचा किया।

सिन्धु को लगा जैसे समय रुक गया है। नीरव को समय पीछे जाता महसूस हुआ। दूर से सुनाई दे रही कुत्ते के भौंकने की आवाज अब बिलकुल जैसे कानों में मुँह डालकर भौंक रहा हो ऐसा प्रतीत होने लगा। कुत्ते का मुँह बंद करने के लिए मानो शर संधान कर रहा हो नीरव ऐसे बोला :

"सर, मैं कुछ नहीं भूला। आपकी मेहरबानी और प्यार सब कुछ याद है मुझे। लेकिन आप इतना जरूर याद रखना कि मैंने विश्वासघात नहीं किया। मुझे मालूम है कि मैं अपने पूर्वजों से कई गुना ज्यादा भाग्यशाली हूँ। मुझे तो मेरे गुरु ने सामने बैठा कर पढ़ाया है। सर! एक बार फिर मैं गुरु दक्षिणा देने को तैयार हूँ, आप सिर्फ माँगिए तो सही....।'

'नहीं.... न... नीरव ऐसी गलती मत करना। गुरुदक्षिणा का इतिहास अच्छा नहीं है....' सिन्धु तड़प उठी।

द्वारका दास टिटिहरी की तरह चलते हुए दो कदम आगे आए। सिंधु की ओर देखा। उनकी नजर में कर्कशता थी। सिन्धु बोल पड़ी : 'बापू... प्लीज, क्या आप भी....।'

'मुझे तेरा कुछ नहीं सुनना है लड़की। तूने मेरा विश्वास तोड़ा है। जिसे मैं विदुषी मानता था वह...। ऐसी दूषित मन की.....। मैं सपने में भी नहीं सोच सकता था, जो तूने किया है। कहाँ कावेरी... और कहाँ तू! वो शादी करके अमेरिका गई तो भी अपने भारतीय संस्कार नहीं छोड़े, और तुम पीढ़ियों से चली आ रही आबरू पर कलंक लगाना चाहती हो।' और वे नीरव की ओर मुड़े..

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'तू क्या दे सकता है...? और मैं तुझसे माँगू!'

'जी, सर! वही तो आपकी मजबूरी का इतिहास है, सर....।' नीरव के न चाहते हुए भी उससे व्यंग्य हो गया। सत्य को हजम कर रहे हो ऐसे द्वारका दास थोड़ी देर चुप खड़े रहे, कुछ दूर की सोच कर फिर बोले : 'तो दूर चला जा यहाँ से। मैं जिंदा हूँ तब तक...।'

'जरूर सर, पर एक बात जरूर कहना चाहूँगा, आपके न चाहते हुए भी। जब मैं रोज सुबह आकर सिन्धु के लम्बे बालों की दो चोटियाँ बनाया करता था उसी दिन से मैं सिन्धु से प्रेम करता आया हूँ, पर मैंने कभी सिन्धु को भी जताया नहीं क्योंकि हमारे लहू में घुला हुआ डर मुझे रोक रहा होता था। और वह डर एक बार फिर सच हुआ है, सर।' इतना कहकर नीरव लंबी साँस भरता हुआ दरवाजे की ओर मुड़ा।

'नीरव रुको, मैं भी आती हूँ।' सिन्धु तेज कदम चलते हुए बोली।

'नहीं सिन्धु, मेरी दक्षिणा यही है कि मुझे तुम से दूर जाना है। यह मेरा वचन है सर से। मुझ पर कई उपकार हैं सर के। और...और..., वचन के मामले में भले रघुकुल रीत प्रख्यात हो पर.... निषाद कुल रीत भी यही है, सब जानते हैं। और....' नीरव पल दो पल सिन्धु की ओर देखते हुए कुछ कहते हुए रुक गया। फिर जल्दी से निकल गया। सिंधु देखती रह गई। कल रात के भोज पत्र जैसे लगे चाँद का पिंडा बना कर उसके मुँह पर किसी ने फेंका हो ऐसा उसे लगा। अपनी विजय देखकर खुश हुए द्वारका दास अपने मनोभाव को छुपाते हुए सिंधु के पास आये और आवाज में प्यार घोल कर बोले : 'देखा.... बेटा सिन्धु, समझ में आया कुछ? मेरी भोली लड़की...।'

सिन्धु को लगा उसके रास्ते में पहाड़ टूट आया है जो उस के प्रवाह को रास्ता बदलने पर मजबूर कर रहा है, पर विवश थी, करें भी तो क्या करें.....जिसे सागर माना था वह तो रेगिस्तान में तड़पती छोड़ कर खुद बह गया। वह कुछ सोच कर बोली, 'जी, देखा न, सभी को देख लिया... मैं भी जाती हूँ।'

'सिन्धु... अपने बाप को छोड़कर कहाँ जाएगी बेटा। मैं तेरे बगैर नहीं जी पाऊंगा दीकरी-बेटी। और तेरे सामने उज्ज्वल भविष्य है। तुम्हारे संस्कृत काव्य-संग्रह को राष्ट्रपति के हाथों अवॉर्ड मिलने वाला है। सब व्यवस्था हो गई है। सब...। और साथ में विदुषी गार्गी सम्मान भी।'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'मुझे अब कुछ नहीं चाहिए, प्रेम के वरदान से बढ़कर कुछ नहीं है, मेरे लिए.... और कुछ नहीं चाहिए।'

'फिर तेरा और मेरा रिश्ता... हमेशा के लिए खत्म हो जायेगा। याद रखना।'

'पिता जी! रिश्ते हमारे कहने से खत्म नहीं होते और न ही शुरू होते हैं। मैं आपकी बेटी और.... नीरव की प्रेमिका रहूंगी यह अटल सत्य है मेरे लिए, आप दोनों को मिलूँ या न मिलूँ। आप दोनों ने मिल कर मुझे मेरा स्थान दिखा दिया... पर वह मैं स्वीकार तो न करूँगी चलती हूँ....।'

OOO

कच्छ के रण में सूखे हुए सिन्धु के पथ जैसी आँखों से वह पत्र को देख रही थी तब पत्र देने आने वाला लड़का वापिस आया : 'दीदी, आपके मेहमान।' सिन्धु ने उसकी ओर देखा, पीछे कोई खड़ा दिखाई दिया और.. .. कुएँ की दीवार तोड़ कर उगने की कोशिश करते हुए पीपल जैसा नीरव सामने खड़ा था। सिन्धु को श्रीमदभगवद्गीता का एक श्लोक याद आ गया, 'अश्वत्थः सर्व वृक्षाणा....।' उसी के साथ याद आया कि नीरव ने उसे रुक्मणी कहा था। और आँखें भर आईं। दो कदम आगे बढ़ी और... नीरव के शब्द याद आये, '....मैं कृष्ण नहीं हूँ.... मैं कृष्ण...नहीं हूँ...' वह रुक गई। बढ़ाया हुआ कदम वापस ले लिया। और एकदम संयत हो कर बोली, 'सोमु, मेहमान को अतिथि कक्ष में बिठाओ, मैं वहीं आती हूँ। वह पत्र को फाड़ती रही..... फाड़ती ही गई.... और फूँक मार कर इसके छोटे टुकड़ों को उड़ा दिया........।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

8.

मानवता की माँ

गली के नुक्कड़ पर रेवा दो घड़ी खड़ी रही। सामने से घर का बंद फाटक दिख रहा था। मानो किसी की राह देख रहा हो। रेवा को आदत थी कि वह जब बाहर से आये तब कोई न कोई उसकी राह देखता दरवाजे पर खड़ा हो। ज्यादातर तो माँ ही होती थी पर माँ की गैरहाजरी में बापू होते थे। रेवा पंद्रह वर्ष की हुई तब उसकी माँ चल बसी थी पर उसके बापू ने डयोढ़ी में खड़े रह कर रेवा की राह देखने का क्रम बनाये रखा था। कभी-कभार जब खुद को बाहर जाना होता था तब वह अपने मित्र व पड़ोसी अब्दुल को रेवा की राह देखने का काम सौंपकर जाते थे। और रेवा जैसे खुद की माँ को, बापू को हैरान परेशान कर देती थी वैसे ही अब्दुल चाचा को भी हैरान-परेशान कर देती थी। रेवा सभी की लाड़ली थी।

वो भारी कदमों से घर की तरफ बढ़ी। कंधे पर रखा थैला ठीक किया। गली में सन्नाटा था। कुत्ते जीभ निकाल कर हाँफ रहे थे, रेवा को सामने देखा-अनदेखा कर के फिर से हाँफने लगे। गली के ज्यादातर घर हमेशा के लिए बंद हो गये थे। क्योंकि उनमें रहने वाले नौकरी-धंधे की तलाश में पास के शहर में या मुंबई चले गये थे। वह खुद भी यहाँ सात साल बाद आयी थी! उसके बापू गुजर गए तब आई थी वह आखिरी बार बस। उसके बाद न तो अपने गाँव जा पाई थी और न ही गाँव को भुला पाई थी। हालात ही कुछ ऐसे थे।

डयोढ़ी के पास पहुँच कर थैला नीचे रखकर डयोढ़ी के फाटक पर हाथ फेरती रही। बापू के अति झुर्रियों वाला वृद्ध, मृत देह ऐसा ही हो गया था जब वह गाँव पहुंची थी। और आँखें ऐसे ही बंद जैसे किसी के आखिरी इन्तजार को हमेशा के लिए आँखों में भरकर आँखें मूंद ली हों! और उसने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
ऐसे ही पूरे शरीर पर हाथ फिराया था, टटोला था उस देह को, उससे जुड़े अपने बचपन को, जो इस देह के मरने के साथ मर गया था!

उसने नीचे देखा, पतले पत्थर में से तराशी हुई सीढ़ी ऋतुओं की आवन-जावन से घिस कर छिद्रालु हो गई थी। अभी-अभी आँखों में से बरसे आंसू उस छिद्र में समा गये। जहां पाँव रख कर इस घर की न जाने कितनी पीढ़ियाँ अंदर-बाहर हुई होंगीं वह जगह घिस-घिस कर खल जैसी हो गई थी वह अभी धूल से भरी हुई थी। रेवा को लगा न जाने कितने पुरखों की चरणरज पड़ी है इस खल में! उसने उस चरणरज को सर पर चढ़ाया। नजर ताले पर गई जो ज्यों का त्यों था। जो उसने ही लगाया था, जब बापू की मृत्यु के बाद जब उसने गाँव छोड़ा था। दोनों किवाड़ जर्जरित हो गये थे और नीचे से बित्ते जितना टूट गये थे। जैसे कि घर के कार्डियोग्राम की रेखा! फाटक की चौखट भी नीचे से टूट गई थी। ताले में चाबी डाली। बरसों से बंद ताले में ज़ंग लग गई थी, खुलता ही नहीं था। पास में पड़ा पत्थर लेकर ताले पर मारा। ताला टूट गया, साथ में आँसुओं का बाँध भी टूट गया। वो दिन याद आ गए जब वह बाहर से आये और डयोढ़ी पर उसकी राह तकता हुआ कोई खड़ा न हो तो डयोढ़ी के किवाड़ को वह जोर से पटकती थी! इसके बाद ही शुरू हुआ था डयोढ़ी पर उसकी राह ताकने का क्रम। उसे कोई तो चाहिए ही, घर में।

ताला खोला, चिटकनी खोली। खुलते ही किवाड़ अंदर की ओर लटक पड़े। अंदर जाने के लिए पाँव उठाया, बराबर वहीं खल जैसी हो गई जहाँ पर पाँव रखने गई और अटक गई। होंठ पर मुस्कान छा गई। वो छोटी थी तब कभी भी वहां खल में पाँव नहीं रखती थी। वो तो चौखट को पकड़ कूद कर अंदर-बाहर जाती थी। उसकी माँ उसे बोलती कि कभी उल्टे मुँह गिरेगी न तब, समझेगी, लातों के भूत बातों से नहीं मानते। पर वो किसी की सुनती कहाँ थी! वो तो बोलती कि हं...अं, जहां सब रखें वहां मैं अपने पाँव नहीं रखूँगी, क्यों रखूँ? और माँ कहती कि- "तो जा, अपने पाँव को सर पर रखकर घूम। और अखाड़े में सीखा दांव- उल्टे सर होकर हाथों से चलना," ऐसे थोड़ा तो चलती ही। फिर खेलने भाग जाती।

वो अंदर आई। इधर-उधर नजर दौड़ाई। अशोक, उदुंबर और नीम जैसे बड़े पेड़ वैसे ही खड़े थे। पर क्यारियों में पौधे सूख गये थे। तुलसी चौरे में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तुलसी का ठूँठ खड़ा था। चौरे के आले में बरसों तक जलाए गये दिये से कालिख जमी हुई थी। मिट्टी का दिया नीचे पड़ा था। उसने उठा कर फिर से आले में रखा। गोख में लगी कालिख उँगली पर ले कर कपोल पर टीका लगाया। और नजर घर पर गई। उसे लगा कि वह किसी ध्यानस्थ योगी की आंखों में प्रवेश कर गई है और सामने दिखता घर उन्हीं आँखों की पुतली है! उसके बापू भी उसे पुतली कहकर बुलाते थे-रेवा तो मेरी आँखों की पुतली है।

वह घर खोलकर अंदर आई। एक कबूतर अंदर से उसके ऊपर से उड़ कर बाहर निकल गया। टांड पर कबूतर के घोंसले में बच्चों की हलचल से घर जीवंत लगता था। टांड के बराबर नीचे बा-बापू की तस्वीर टँगी हुई थी, पूरी तस्वीर कबूतर की चिरकन से भरी हुई थी। जैसे घोंसले में कुलबुलाहट करते बच्चे, वैसे ही कई सपनों के घोंसले जैसी आँखों में कुलबुलाते आँसू उभर कर बाहर आये इससे पहले वो कबूतर वापस आ कर अपने बच्चों पर बैठ गया। मानो उसके बापू की तरह पूरे मोहल्ले को कहने गया हो कि पुतली आई है.... मेरी पुतली आई है।

तस्वीर में खुद का और पीछे खुले किवाड़ का प्रतिबिंब दिख रहा था। वो अपने पल्लू से तस्वीर पोंछने लगी। बा का चेहरा दिखा,

"पुतली, मेरी बात सुन। अपने बाप जैसी मत बन। जो भी हो, आखिर में वह ठहरे मर्द, कुछ तोड़ने से या कुछ जोड़ने से उनको कुछ फर्क नहीं पड़ता। हम ठहरी औरत जात। रूढ़ियों को तोड़ने की बात करते हैं तो हम ही टूट जाती हैं! तुम लड़कियाँ भले अखाड़े में जाकर गीत गाती हो कि, 'रूढ़ियों को तोड़ दो, परंपराएं मोड़ दो, जिसमें देश का भला न हो वह काम छोड़ दो' सही है रे, बिलकुल सही है। पर...ऐसा करने से हम टूट जाते हैं और कहीं के नहीं रहते, सच कहती हूँ रे। मेरी सुन, बेटी। यह रूढ़ियों का मटका हमारे माथे पर मर्दों ने ही तो पहनाया है! और हम भी इस मटके के साथ ही सदियों से गोल-गोल घूम रहे हैं और अंदर ही अंदर एक-दूसरे से लड़ रहे हैं! कभी भी किसी पुरुष को इस मटके को तोड़ने का प्रयास करते हुए देखा तूने? कोई एकाध-दो ने किया हो तो उसे वाह-वाही मिली है पर जब भी किसी औरत ने इस मटके को तोड़ने के लिए समाज की लोहे की दीवार पर अपना माथा ठोका तब वह लहूलुहान हो गई है। पुतली! मेरी रे, इस मटके में ही सलामती है, बेटी!"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पर रेवा जिसका नाम हो वह सीधे-सीधे कैसे बह सकती है! गांधीवादी विचारों को जीने वाले बाप की बेटी, मानवता ही धर्म ऐसा जन्म घुट्‌टी में पी कर बड़ी हुई हो वह माँ की क्या सुने! अपने बापू के बचपन के मित्र और स्वतंत्रता की लड़ाई के क्रान्तिकारी ऐसे अब्दुल चाचा के बेटे कबीर से प्यार कर बैठी और उससे शादी भी की। तब उसके बापू और अब्दुल चाचा बहुत खुश हुए थे। अब्दुल चाचा ने रेवा को बताया था कि अंग्रेजों के सामने लड़ते वक्त जो जेल में जाए उसके परिवार को बाहर वाले ही सँभालते थे। इसमें कभी भी न तो विचारधारा बीच में आई थी न ही धर्म। सब का एक ही मकसद था- मातृभूमि की आजादी।

रेवा-कबीर ने अपने बेटे का नाम रखा था, मानव। कबीर प्यार से रेवा को बोलता था,

'कहत कबीरा सुनो रेवाजी अर्ज हमारी, न हिन्दू बनेगा न बनेगा मुसलमान, मानव बनेगा मानव, देशद्रोहियों पर भारी।'

उनका जीवन छंदों-लय में बहते मधुराष्टक जैसा बह रहा था।

और वह छंद तब टूटा जब कबीर की नौकरी छूट गई। तब किसी ने उसके कान भरे थे कि- "तू मुसलमान है इसीलिये तेरी नौकरी छीन ली गई।" रेवा इस बात का विरोध करती थी। कबीर के साथ-साथ जिस-जिस की नौकरी छूट गई थी उन सबके नाम की सूची ला कर कबीर को थमा दिया था। और कहा था कि ध्यान से देख लेना, उसमें हिन्दू और मुसलमान दोनों हैं।

कबीर को रेवा की नौकरी चुभने लगी। छोटी-छोटी बातों में झगड़ा करने लगा। रेवा ने कहा भी कि, "चलो गाँव चले जाते हैं। वहां बापू का खेत भी है और अब्दुल चाचा की शुरू की हुई शाला भी है। वैसे भी चाची अकेली ही सँभाल रही है।"

पर कबीर को वह मंजूर नहीं था क्योंकि गाँव वाले जान जायेंगे कि कबीर की नौकरी चली गई है। उसमें उसको अपनी हार दिखती थी। और ऊपर से शहर की चकाचौंध की आदत जो पड़ गई थी। वैसे देखें तो रेवा सीधी सादी थी और कबीर बड़ा फेशनेबल था।

दोनों के संबंध डांवाडोल थे। ऐसे वक्त कबीर के चाचा जो विभाजन के समय पाकिस्तान चले गए थे और वहाँ मुहाजिर के ताने सुन-सुन कर,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

परेशान हो कर दुबई चले गये थे उनका आगमन कबीर के यहाँ हुआ। आते ही न जाने किसके कपाल पर पढ़ लिया कि 'highly inflammable'। वो खुद एक माचिस बन कर आये थे। पहले ही दिन सुलगती दियासलाई जैसे शब्द फेंके:

"अरे कबीर! यह क्या, मानव? मानव! अरे बेटा, मोहम्मद नाम रखा होता। अल्ला ताला कितने खुश होते। और यह क्या? हिन्दू लड़की से शादी करके तो बड़ा नेक काम किया पर इसका नाम नहीं बदला! चलो यह काम हम कर देते हैं। वैसे भी उसके बाप के बहुत उपकार हैं हम पर। चलो उनकी बेटी को पाक बनाकर हम उपकार से मुक्त हो जाते हैं। क्यों सही कहाँ न मैंने, नाजिया बेटी!"

और रेवा के दिमाग की कमान में से तीर छूटे थे,

"बिलकुल नहीं। आप मेहमान बन कर आये हैं तो मेहमान ही रहें, बीच में मत आना, कह देती हूँ। मेरा या मेरे बेटे का नाम बदलने की जुर्रत कैसे की आपने? हम दोनों को इंसानियत पसंद है और कुछ नहीं समझे?"

कबीर बम की तरह फूटा था, "तूने मेरे चाचा का अपमान करने की हिम्मत कैसे की! वह कौन हैं तुझे पता है? दुबई के शेख के साथ उनकी बैठक है। तू क्या है उनके सामने?"

रेवा एक-एक शब्द पर वजन देते हुए बोली, "मैं सबसे पहले एक पढ़ी-लिखी स्वतंत्र औरत हूँ, बाद में उनके भतीजे की पत्नी। मैंने उनका नहीं बल्कि उन्होंने हम दोनों का अपमान किया है, समझे? मुझे नहीं तुम्हें कह देना चाहिए कि चाचा, हम सब हिन्दू-मुस्लिम तो बहुत खेले अब थोड़ा मानव-मानव भी खेल के देखें। यही बात अगर वो अब्दुल चाचा के सामने बोलते तो चाचा उन्हे यहां से धक्के देकर निकाल देते। अरे रेहाना चाची के सामने भी बोल कर दिखाए। चाचा ने तो बताया था कि पाकिस्तान तो बहाना था इब्राहिम और उनकी पत्नी के लिए, बाकी इतने बड़े परिवार की जिम्मेदारी से पीछा छुड़ाने के लिए ही भागे थे। तुम भूल गये! अपने बाप को पूरे परिवार की जिम्मेदारी ढोते हुए देखकर भी भूल गये! और अब्दुल चाचा को जब खबर मिली थी कि इब्राहिम पाकिस्तान से दुबई चला गया तब चाचा क्या बोले थे?- "गद्दार।" ये तुम्हारे वही चाचा हैं ना?"

कबीर ने रेवा को मारने के लिए हाथ बढ़ाया पर रेवा ने उसका हाथ मजबूती से पकड़ लिया और इब्राहिम चाचा के सामने देखकर बोली, "चाचा!

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
सिर्फ कबीर ही नहीं मैं भी अब्दुल चाचा की पाठशाला व अखाड़े में पढ़ लिख कर बड़ी हुई हूँ। मैंने आपके भतीजे से नहीं बल्कि देश के लिए जान कुरबान करने को तैयार अब्दुल चाचा के बेटे कबीर से प्यार कर के शादी की है। विभाजन की पीड़ा अभी तक शांत हुई नहीं है और आप जैसे लोगों की अभी भी धर्म के नाम पर इंसान को बाँटने की आदत गई नहीं! तोड़ने की बजाय कभी जोड़ने की सोचो और फिर देखो कितना आनंद मिलता है।" रेवा असल शिक्षक के रूप में आ गई थी।

चाचा डाढ़ी पर हाथ फिराते हुए बोले, "अरे यह आनंद तो ले रहा हूँ। बढ़ावा का आनंद, बीबी। तेरे द्वारा इस्लाम में एक मोमिन का जमा होना, बढ़ावा हुआ, यही आनंद तो मना रहे हैं।"

"गेट आउट ...आउट।" रेवा चिल्ला रही थी। कबीर ने उसके गाल पर चाँटा मार ही दिया। रेवा के कान में गड़गड़ाहट होने लगी। उसने अपने कान को दबाया। उसे लगा कि किसी ने उसे ऊँट के पाँव के साथ बाँध कर, ऊँट को मार-मार कर दुबई के रेगिस्तान में छोड़ दिया है और वह गर्म रेत में इधर-उधर घिसटती जा रही है और देखने वाले आनंद ले रहे हैं। उसे अपनी साँस डूबती महसूस हुई। वो तिनके का सहारा ले रही हो ऐसी आवाज में बोली, "कबीर! यह, यह तेरे ही हाथों अपने घर पर फेंका गया सुलगता अंगारा है।"

"तेरा घर, रख तू। मैं तो चला दुबई, चाचा का बिजनेस सँभालने और उनकी बेटी रेशमा से निकाह करने।"

"ना..ना, कबीर तुम ऐसा नहीं कर सकते, अभी हमारा मानव बहुत छोटा है। हम दोनों को ही तुम्हारी जरूरत है। तुम मुझे भूल सकते हो पर मानव को तो नहीं।"

कबीर उसे धक्का मार कर चला गया। मानो भूकंप के एक झटके से उसकी पूरी दुनिया तहस-नहस हो गई थी। उसे अपनी माँ के शब्द याद आये, मटके वाली बात याद आ गई। तनाव से वह बेहोश हो गई। कब तक बेहोश रही उसे पता नहीं जब वह होश में आई तो मानव के स्पर्श से, जो अंदर के कमरे में सोया हुआ था।

"मम्मी, यहाँ क्यों सोई हुई हो? पापा कहाँ हैं?" पापा शब्द सुनकर उसे ऐसा लगा मानो किसी ने मुट्ठी भर कर रेगिस्तान की मुलायम रेत उसकी आँखों में डाल दी हो। मानव का स्पर्श उसे ओएसिस जैसा लगा। मानव को

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

छाती से लगा कर दबाया। रेगिस्तान हो गई आँखों में आँसू न आए। छोटा-सा मानव रोज रेवा की छाती में अपना सर छुपाकर कहता कि, – "पापा की खुशबू आती है।" रेवा उसे कहती कि-"बदमाश, माँ की नहीं आती?" तब कबीर तूफानी अंदाज में कहता कि,- "ला जरा मुझे भी सूँघने दे, मेरा बेटा सही कहता है कि गलत, मुझे भी तो पता चले।" रेवा उससे भी कहती कि – "बदमाश!" फिर प्यार से बोलती, "कबीरा! मेरे में से तुम्हारी सुगंध तो मेरी चिता में से भी आयेगी। और कबीर उसे चूम लेता था और मानव को कहता कि, "मानव बेटे! मुझे तो तेरे में से तेरी मम्मी की सुगंध आती है।" तब रेवा जरूर बोलती कि,

"आप दोनों के होते मेरी सुगंध जैसा तो कुछ रहा ही नहीं न!"

और घर प्रेम की सुगंध से महक उठता।

अपनी मम्मी से अलग होते हुए मानव बोला, "मम्मी! आज तेरे में से पापा की सुगंध नहीं आ रही!"

रेवा दंग रह गई। वह चाँटा नहीं था आग थी, जिसमें कबीर के प्रति उसका प्यार जल कर खाक हो गया! "अच्छा हुआ, मेरी आँखें खुल गईं।" उसके मन में तो आया कि बेटे को बोल दे कि अब वह सुगंध कभी भी नहीं आयेगी। पर नहीं कहा। क्योंकि छोटे मानव को कहाँ कुछ समझ में आता। धीरे-धीरे बाप के बगैर जीने की उसे आदत पड़ जायेगी।

O

रेगिस्तान में उठती आँधी जैसे जीवन में ओएसिस जैसे बेटे मानव के सहारे जीवन के बीस साल निकल गये। कबीर छोड़ गया तब मानव पाँच साल का था वो अब पच्चीस साल का हो गया था। बीस साल पहले इब्राहिम चाचा ने जो विष उगला था उसे रेहाना चाची के ऊष्मा भरे प्यार के सहारे मानव की खातिर गले में ही रोक रखा था जिसे आज मानव ही निगल जाने को मजबूर कर रहा था। उसे लगा कि जिसे वह हरियाली समझती थी वो जिंदगी दुबई की सड़क पर सजाई गई कृत्रिम हरियाली जैसी थी। क्या हुआ? कहाँ चूक हो गई? कबीर के विरुद्ध मैं मानव के सामने जहर नहीं उगल पायी इसका परिणाम भुगत रही हूँ क्या?

"मानव, क्या बोला तू?"

"वही जो आपने सुना।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"मानव..."

"यस मम्मी, वो आप दोनों पति-पत्नी का मामला था और है। पापा तो आपको भी दुबई बुलाना चाहते थे और रेशमा अम्मी को भी कोई एतराज नहीं था। आप ही जाने को राजी नहीं थीं, वह आपकी मर्जी, पर आप मुझे नहीं रोक सकती, अब मैं बड़ा हो गया हूँ, पुख्त।"

रेवा को लगा कि सामने मानव खड़ा है कि रेत का टीला! हवा के साथ स्थान बदलता रेगिस्तान का रेत का टीला।

"तुझसे किसने कहा कि तेरे पापा मुझे भी बुलाते थे? और...और...वो" कबीर की दूसरी पत्नी रेशमा का नाम न बोल सकी। वैसे तो कबीर के चले जाने के बाद तुरंत उसने अपने उधड़ गये जीवन को फिर से मानव नाम के धागे से सिल लिया था। मानो कुछ हुआ ही नहीं था! पर फिर कभी मानव को छाती से लगा कर दबा नहीं सकी थी। उसे डर था कि छोटा मानव फिर कहीं सुगंध वाली बात छेड़ दे तो... और शुरू-शुरू में मानव भी अपने पापा को याद करके रोता तब घर की दीवारें भी सिसकियाँ भरने लगती धीरे-धीरे मानव अपने पापा को भूलने भी लगा और जैसे-जैसे बड़ा होने लगा बदलने लगा। रेवा खिन्न हो जाती। बीच-बीच में कबीर की माँ रेहाना चाची आती और थोड़े दिन साथ रह कर चली जाती थी। वो रेवा और मानव पर अपनी जान छिड़कती थी। कबीर ने दिया हुआ धोखा उनके रोम-रोम में चुभता था। वो कहती कि, "अच्छा हुआ कि इसके अब्बा नहीं रहे वरना बरदाश्त नहीं कर पाते। उनके लिए अंग्रेजों के सामने लड़ना आसान था पर अपने ही खून के सामने लड़ना मुश्किल, उनकी हालत अर्जुन जैसी होती, सच कहती हूँ। दुःखी हृदय से मानव को सामने देखकर कहती, "पुतली! हमारे मजहब में औरत की हालत...पूछो मत बेटी, क्या कहूँ?" और रेवा उनको बीच में ही रोक देती!

"चाची! हमारा मजहब मत बोलो, अपना धर्म बोलो। हमारा नारी धर्म! किस धर्म ने औरतों को अपने देह से ऊपर उठने दिया है?"

O

कासकर सिला हुआ मन फिर से उधड़ न जाये इस डर से वह मानव के सामने आई,

"मानव! कब से कबीर के संपर्क में हो?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"एकाध साल से था।"

"तूने सर्च किया?"

"नहीं, पापा की फ्रेन्ड रिक्वेस्ट आई थी। तब खबर नहीं थी, बाद में कन्फर्म किया तो पता चला कि मेरे पापा हैं! फिर तो रोज चैट करते हैं। रेशमा अम्मी से भी मेरी बात करवाई।"

रेवा के कानों में टैक्नोलॉजी का राक्षस अट्टहास कर रहा था।

"बस, मुझे और नहीं सुनना है।"

"मम्मी! आप न टिपिकल स्त्री हैं। 'दूसरी' को सहन ही नहीं कर सकती! आपसे तो..."

"मानव! स्टॉप, स्टॉप नाउ।" रेवा ने चिल्ला कर मानव को रोका। रेवा काँप रही थी। आँखें फट गई थी। थर्राती आवाज में बोली,

"उन लोगों को जन्मजात यह आदत है। वो रेशमा भी दो अम्मिओं के बीच बड़ी हुई है। हम नहीं, समझा?"

रेवा के न चाहते हुए भी बात धर्म-मजहब पर आ ही गई। वो अहम् पर आ कर बोली, "अपने बाप से पूछना कि वो मेरे दूसरे आदमी को सहन करता क्या? अरे अब तो तू बड़ा हो गया है, पूछ अपने आपको पूछ कि तू तेरी पत्नी के दूसरे आदमी को सहन कर पायेगा क्या?"

"मम्मी! वह उनको उनके मजहब से मिला हुआ अधिकार है।"

"वो पहले मजहबी नहीं थे। नहीं तो मैं उनसे कभी शादी नहीं करती। और वह मजहब हो या धर्म के फरमान करने वाले, हैं तो पुरुष ही ना? सब कुछ अपने पक्ष में लिख डाला!"

"फिर औरतों को किसने रोका था?" मानव दाँत, भींच कर बोला। बचपन से दोस्तों के ताने सुन-सुन कर वह टोली का आम आदमी बन गया था। और दुबई की चकाचौंध से चकित हो गया था।

रेवा मानव को धक्का देकर कर बोली, "तुम मर्द लोग हमारी गोद में बच्चों का कारवाँ रख कर हमारे ही विरुद्ध लिखते रहे! और हम भी तुम जैसे संपोलो को दूध पिलाते रहे! और..और तुमको लिखने में अंधेरा न हो इसलिए जात को जलाते रहे पर तुझे समझ में नहीं आयेगा, मानव! जा, तुझे जाना है न? जा।" रेवा ने दरवाजा बंद कर लिया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

O

बरसों में बिखरी जिंदगी को एक ही रात में समेट कर सुबह की बस पकड़ कर वह गाँव आ गई थी।

वो तस्वीर पोंछ रही थीं उसमें दिखा कि कोई पीछे आ रहा है। वो पीछे मुड़ी और दौड़ी, "चा..ची! बोलते हुए रेहाना चाची के गले लगी। वृद्ध चाची काँपते देह और काँपती आवाज में बोली,

"सबीर की मीरा ने बोला कि तू आई है। नहीं तो मैं तो तेरे ही पास आने को निकल रही थी। मानव का फोन आया था कि वह ...वो.." चाची बोल न सकी। छातीफाड़ रुदन से उनकी आवाज रुंध गई। रेवा एकदम सयंमता से बोली, "चाची! मत रो। इतिहास को आदत है पुनरावर्तन की। पहले आपका बेटा और अब मेरा बेटा! पैसे के लिए! कोई बात नहीं, चाची! आप वृद्ध हो गये हो। पाठशाला मैं सँभालूगी, मैं बच्चों को पढ़ाऊंगी। मेरे बापू और अब्दुल चाचा इस मिट्टी में ही पैदा हुए थे न? ऐसे अनेकों को मैं पैदा करूँगी हमारी पाठशाला में। मैं...अब अनेक मानवों की माँ बनूंगी, चाची! मैं मानवता की माँ बनूंगी।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

9.

फॉसिल

(आने वाले समय की कहानी)

"गजुबू, सिस्टम फेल हो जाने से फ्रिज ने मॉल में ऑर्डर बुक करवाया नहीं है, आज खाने की गोली से चलाना पड़ेगा, भेजती हूँ।"

अपने पी.सी. पर स्कूलिंग खत्म कर के गेम खेल रहे गजुबू को उसकी मम्मी बलाशी ने पी.सी. पर से मेसेज भेजा।

डिस्टर्ब हो जाने से गजुबू का डिजाइनर चेहरा पीला पड़ा और तन गया। उसने 'ओ.के.' का मेसेज लौटा दिया।

बलाशी ने अपने पी.सी. से कोने में खड़े रोबोट को ऑपरेट किया। रोबोट गति में आया, किचन की ओर बढ़ा और फ्रिज के पास अटका। उसकी आँखों में से लाल लाईट निकली और फ्रिज के सेन्सर पर पड़ी। फ्रिज खुल गया और बोलने लगा,

"खाने की गोलियों का स्टॉक दो-दिन का ही है। नींद की गोलियाँ तीन दिन चले इतनी ही हैं। ऑर्डर सिस्टम फेल हैं। ऑर्डर बुक करवा दो।"

रोबोट ने खाने की गोलियाँ ली। दो कदम पीछे हटा, फ्रिज बंद हो गया। रोबोट गजुबू के पास आया। उसकी आँख की लाल लाईट से गजुबू का पी. सी. ऑफ हो गया। गजुबू का डिजाइनर चेहरा फिर तन गया। उसने रोबोट के हाथ में से गोली लेकर अपने मुँह में रखी। गोली तुरंत पिघल गई। गजुबू ने डकार ली। रोबोट ने उसका पी.सी. ऑन कर दिया। गजुबू फिर से गेम खेलने लगा।

रोबोट बलाशी के पास आया। बलाशी ने भी खाने की गोली ली, साथ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
में जीभ को घूमती-फिरती रखने की गोली भी ली। आज-कल बलाशी को शिकायत रहती थी कि वह बोलना चाहे तो भी बोल नहीं सकती है उसने डॉक्टर को भी बताया था। डॉक्टर ने समझाया था कि जीभ में खून कम पहुँचने की वजह से ऐसा होता है। और जितना खून पहुँचता है वह भी अच्छे से घूमता नहीं है। इस कारण बोलना कम हो गया है। उत्क्रांति का नियम है कि जिस अवयव का इस्तेमाल कम होता है वह अवयव धीरे-धीरे निष्क्रिय होता जाता है। तात्कालिक राहत के लिए डॉक्टर ने दवाइयाँ दी थी और साथ में जीभ का व्यायाम बताया था जो बलाशी करती रहती थी। उसने डॉक्टर से पूछा था कि उसको ही ऐसा क्यों होता है? तब डॉक्टर ने समझाया था कि:

"देखो, आप अकेली को ही ऐसा होता है ऐसा नहीं है। कितनी औरतों की ये शिकायत है। पहले की औरतें बहुत बोलती थी। नौकरी के लिए या तो पेशे के लिए घर से बाहर जाना पड़ता था। वहाँ अन्य साथियों से गपशप होती रहती थी। शॉपिंग के लिए मार्केट में जाना पड़ता था, वहाँ चीजें खरीदते वक्त बार्गेनिंग करती थी। इसलिए बोलना तो बहुत होता था। घर में भी सास या बेटी से बातें होती थी, तू-तड़ाक भी होती रहती थी। इसी से जीभ को कुदरती व्यायाम मिल जाता था। इससे भी पहले के जमाने की बात करूँ तो तब लोग ज्वाइंट फेमिली में रहते थे। घरों में सास-बहू देवरानी-जेठानी, ननद-भाभी सब साथ में रहती थी। एक ही घर में इतनी औरतें! वे सब बातें करती, लड़ती-झगड़ती, प्रभाती गाती, प्रसंग-प्रसंग के गीत गाती रहती थी सो अपने आप जीभ का व्यायाम होता रहता था। औरतों की जीभ की रचना ही ऐसी है कि वह ज्यादा बोले! आपको पता होगा कि एक सर्वेक्षण के अनुसार मात्र मादा मच्छर ही गुनगुनाती हैं, यह उनका कुदरती स्वभाव है। नर में यह समस्या नहीं होती क्योंकि उनकी जीभ की कुदरती रचना ही ऐसी है कि वे कम बोलें। आज के सुपर माईक्रो हाई-टेक युग में सब काम कम्प्युटराइज्ड! बोलने की आवश्यकता ही कहाँ रही? एक स्विच के ऑन-ऑफ होने से ही तमाम काम हो जाते हैं। और बोलने के लिए घरों में कोई है भी कहाँ? बस, इसलिए कितनी औरतों को ये शिकायत रहती है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चिंता मत करना। व्यायाम से ठीक हो जायेगा। पहले के जमाने में लॉफिंग क्लब चलते थे, उन्हें पुनर्जीवित करना पड़ेगा और उनका नया नाम लॉफिंग टॉकिंग क्लब रखना पड़ेगा। आइये, बोलिये और हँसिये।"

डॉक्टर की सलाह के अनुसार बलाशी जीभ की कसरत करती रहती थी। बलाशी ने रोबोट को पूछ डाला,

"सयाको को खाने की गोली दी क्या?" उसकी आवाज के तरंगों से रोबोट का टेप एक्टीवेट हो गया :

"खाने की गोलियों का स्टॉक दो दिन का ही है। नींद की गोलियाँ तीन दिन चले इतनी ही हैं। ऑर्डर सिस्टम फेल हैं। ऑर्डर बुक करवा दो।"

शब्द खत्म होते रोबोट का मुँह खुला रह गया। सुनी हुई बात को फिर से सुनकर बलाशी को गुस्सा आ गया। उसकी जीभ की कसरत अटक गई। वो रोबोट को धक्का देने गई पर...... अटक गई। उसने पी.सी. को ऑपरेट करके रोबोट को उसके स्थान पर भेज दिया।

बलाशी को उकताहट होने लगी। बिजनेस डल लगने लगा। बगल के कमरे में अपने पी.सी. पर से ऑनलाइन सर्विस कर रहे अपने पति सयाको से बात करने का मन हुआ। बात तो क्या, वो मेसेज तक नहीं भेज सकती थी क्योंकि अभी कंपनी के वर्किंग अव्हर्स चल रहे थे। ऑफिस अव्हर्स में नौकरी के अलावा कोई भी मेसेज अलाउड न थे। सभी मैसेज तारीख और समय के साथ अपने आप हेड ऑफिस में फॉर्वर्ड हो जाते थे।

कुछ बोलने के लिए बलाशी व्याकुल हो उठी। उसकी जीभ की कसरत जारी थी। उसने अपनी अंगुली से जीभ को दबाकर देखा। अपनी जीभ उसे पुराने जमाने के पी.सी. के माउस जैसी लगी।

बलाशी को रोबोट का दिया हुआ मैसेज याद आया। वह पी.सी. से ऑन लाइन ऑर्डर बुक करवाने जाती थी और अटक गई, सोचा कि आज तो मॉल में जाकर शोपिंग कर आऊँ। वह जानती थी कि वहाँ भी सब कम्प्युटराइज्ड होगा सो बोलने की जरूरत नहीं पड़ेगी, लेकिन बाहर जाने को तो मिलेगा। फिर खाना भी पकाऊँगी और तीनों साथ में बैठकर खायेंगे। खाने की आदत रखनी पड़ेगी वरना पेट की हालत भी जीभ जैसी हो जायेगी। उसको यह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
सोच कर अच्छा लगा कि अभी भी लोग विशेष अवसरों पर घर में खाना पकाते हैं इसलिए सब सामान मिलता है वर्ना तो सिर्फ गोलियाँ और होटेल ही रह जाएंगे? क्या होगा आने वाली पीढ़ी का? उसने गजुबू की ओर देखा।

गजुबू, अभी भी कम्प्यूटर गेम में मशगूल था। वह खड़ी हो कर गजुबू के पीछे गई। एक पौराणिक गेम 'गुल्ली-डंडा', जिसे अब वर्च्युअली जीवंत किया गया था उसे गजुबू ने अपने पी.सी. पर डाउनलोड किया था और वह इस समय उसी से खेल रहा था। बलाशी को भी उसमें रस आने लगा, उसकी नजर भी कम्प्यूटर स्क्रीन पर रेंगने लगी। उसे याद आया कि जब वह अपनी दादी से मिलने वृद्धाश्रम जाती थी तब दादी ने एक बार बताया था कि उसकी दादी जब बच्ची थी तब बच्चे गलियों में कंचे, गुल्ली-डंडा, आँख-मिचौली जैसे खेल खेला करते थे। ऐसा सुना है, पर देखा कभी नहीं।

बलाशी को फिर से जीभ में स्टिफनेस लगने लगी। वह जल्दी-जल्दी जीभ का व्यायाम करने लगी, उसे लगा कि अब तो बोलना ही पड़ेगा। वह गजुबू से बात करने लगी :

"गजुबू, तुझे पता है कि पहले के समय में यह गेम, जो इस समय कम्प्यूटर पर खेल रहा है, उसे बच्चें गलियों में खेला करते थे! मैंने मेरी ग्रेंड मॉम से यह बात सुनी थी।"

"डोन्ट डिस्टर्ब्ड मी, मॉम।" गजुबू चिढ़ गया।

"प्ली.....ज गजुबू, मेरे साथ कुछ बातें कर। मुझे इसकी बहुत जरूरत है। मेरी जीभ को व्यायाम की जरूरत है, मैं गूँगे व्यायाम से थक गई हूँ", बलाशी ने अपने बेटे से घिघियाते हुए कहा।

"ओ...ह....मॉम, अभी मैं बातें नहीं कर सकता। आपसे बात करने लगूंगा तो मेरा पी.सी. मुझसे जीत जायेगा। और मुझे पढ़ाएगा आप दूसरी गोली ले लो न....." गजुबू ने अपनी मॉम के सामने देखे बगैर कह दिया। पूरा दिन कहीं न कहीं, "की" ऑपरेट करते रहने से उसकी उँगलियाँ छोटी रह गई थी।

"प्ली....ज गजुबू, प्लीज..... गोलियाँ खलास है इसलिए तो.....देख मैं तुझे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एक इन्टरेस्टिंग बात बताती हूँ। ये 'झापटु' और 'पीदी' शब्द गुजराती भाषा के काठियावाड़ी शब्द है जो ज्यों के त्यों, डायरेक्ट अंग्रेजी डिक्शनरी में लिये गये हैं। ऐसे ही बहुत सारे शब्द जो हिन्दुस्तानी भाषाओं के हैं जो अंग्रेजी में लिये गये हैं। ये जो तू गेम खेल रहा है वह 'गुल्ली-डंडा' हिन्दुस्तान भर के बच्चे एक जमाने में अपनी-अपनी गलियों में खेला करते थे। 'गुल्ली-डंडा' गलियों में से खो गये और कम्प्यूटर पर आ गये तो भी 'गुल्ली-डंडा' ही रहे! अंग्रेजी उसका नाम न बदल सकी! मेरी 'ग्रामो' ने मुझे जो बात बतायी थी 'गुल्ली-डंडा' की, वो मैं तुझे बताती हूँ, चल आ।"

अब गजुबू को रस आने लगा। उसने गेम रोक दी। अपनी 'मो' के सामने देखा और वह कान खड़े करे हुए खरगोश के बच्चे जैसा दिख रहा था। बलाशी की जीभ में जान आई :

"य...स गजुबू, मेरी ग्रामो ने ये गुल्ली-डंडा देखे थे, उनके घर के टाँड़ में पड़े। मेरी ग्रामो भी उनसे खेली न थी, क्योंकि तब बच्चों को घर से दूर स्कूल जाना पड़ता था। फिर स्कूल का होम-वर्क भी रहता था। और ट्यूशन भी जाना पड़ता था! बच्चों को गलियों में खेलने का समय ही नहीं रहता था। बाकी तब तो गलियों में खेलने के लिए एटमॉस्फिअर अच्छा था, ऐसा मेरी ग्रामो कहती थी। मेरी ग्रामो की ग्रामो गलियों में बहुत खेला करती थी, ये बात उसने मेरी ग्रामो को बतायी थी।

"ओ..ह मो, हाउ फनी! यू मीन..... इन ए स्ट्रीट? बट... हाउ केन ईट बी पॉसीबल?"

"य...स माय डार्लिंग, यस, पहले के बच्चे गलियों में खेलते थे। मेरी ग्रामो की भी ये सुनी हुई बात है पर यह बात है सच्ची, शत-प्रतिशत।" बलाशी खड़ी हो गई। उसके अंदर एक सिहरन फैल गई। अपने घर की अनब्रेकेबल काँच की सफेद दीवारों में से, जिसमें से बाहर तो दिखाई देता था पर बाहर से अंदर का नहीं दिखता था, वह बाहर ताकने लगी। पॉलीथीन के चिकने रास्ते पर इक्का-दुक्का ऑक्सीजन लीक-प्रूफ कारें दिखाई देती थी। आकाश में पुराने जमाने में दिखते थे ऐसे पंखियों जैसे टू-सीटर एयर बाईक और एयर बस दिखाई देते थे। कोई-कोई बिल्डिंग्स के फ्लेट ऊपर-नीचे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education,Bantalab Jammu

सरक रहे थे। छत पर पार्क किये हुए एयर-व्हीकल्स दिखते थे। सफेद काँच के ऑक्सीजन लीक-प्रूफ बिल्डिंग्स, खड़े कॉफिन जैसे दिखते थे! बलाशी सोच रही कि इन होम-ऑफिसेस में लेटेस्ट पी.सी. रहते हैं जो इंसानों से खेलते हैं। वह जीभ की कसरत करती हुई खड़ी रही। गजुबू आश्चर्य में डूबा हुआ कह रहा था :

"मो, वे लोग गलियों में खेलते थे तो फिर मर नहीं जाते थे? हम तो ऑक्सीजन मास्क के बगैर बाहर जा नहीं सकते! मैं डिस्कवरी चैनल पर ऐसे घरों को देखता हूँ तो मुझे आश्चर्य यह होता है कि ऐसे घर ऑक्सीजन लीक-प्रूफ कैसे हो सकते होंगे!"

"ओह... नो बेबी, तब ऐसी जरूरत ही नहीं थी। घने जंगल थे, बहती नदियाँ थी, इंसान संतोषी थे, सब-कुछ बैलेस्न्ड था, मास्क की जरूरत ही नहीं थी।" बलाशी की मुखर हुई नजर टाराटोरा की तरह गोल-गोल, ऊपर-नीचे घूमती थी। उसे फिर याद आया कि आज उसे शॉपिंग के लिए जाना है। वह मास्क-हेंगर की ओर बढ़ती हुई बोली :

"गजुबू, मैं थोड़ा शॉपिंग कर आऊँ।"

"मो, ऑनलाइन ऑर्डर बुक क्यूँ नहीं कराती हो?" ऑक्सीजन सिलिन्डर की शॉर्टेज है ऐसे में आप थोड़ा खत्म कर आओगी, फिर झट से नहीं मिला तो? आप सब सामान के साथ ऑक्सीजन सिलिन्डर भी बुक करवा दो।"

गजुबू आदेश जैसा देकर फिर से गुल्ली-डंडा खेलने में मशगूल हो गया। बलाशी एकटक मास्क को देखती रही। उसे एकाएक भूख का एहसास होने लगा। वह बावरी हो उठी, 'ओह', खाने को तो कुछ नहीं हैं घर में और खाने की गोलियाँ भी खलास हैं। वो झट से पी.सी. के सामने बैठी। खाने की गोलियाँ, नींद की गोलियाँ, दूसरी दवाएं, ऑक्सीजन सिलिन्डर, रसोई का सामान सब ऑन-लाइन बुक करवाया। उसके चेहरे पर कटु स्मित उभर आया, क्योंकि वो जानती थी कि उन दोनों, पति-पत्नी का रोमांस भी गोलियों का आभारी है!

वह फिर से खड़ी हुई, कमरे में टहलने लगी। बेचैनी उसे घेरे जा रही थी। अपने हाथों से उसने अपने कानों को ढक दिया, "लहू की लय सुनाई दे तो कैसा मजा आये!" अपनी हड्डियों के पोलेपन में उसे कुछ कराहता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हुआ सुनाई दिया। उसने गजुबू की ओर देखा। वह अभी भी पी.सी. में डूबा हुआ था। उसकी टहलने की गति तेज हो गई। वह जूरासिक-पार्क के नाजुक डायनोसोर जैसी दिखती थी।

ऑफिस अव्हर्स खत्म हुए, उसका पति सयाको अपने पी.सी. रूम में से बाहर आया। टी टेबल पर बैठ के उसने एक स्विच ऑन किया। टहलती बलाशी की ओर देखा, उसकी तेज गति देखकर उसे भी आश्चर्य हुआ :

"वॉट्स द प्रॉब्लेम, डियर? तेरे बिजनेस में कुछ गड़बड़? गजुबू तो ठीक दिखता है फिर.....?"

उसने गजुबू के सामने देखा। गजुबू ने 'हा...य, डे' किया और वापिस पी.सी. में घुस गया।

बलाशी सयाको के सामने आकर बैठी। सयाको की ऑन की हुई स्विच ने चाय बना दी थी। बलाशी उड़ती हुई भाप को पकड़ने का प्रयत्न करती हुई बोली:

"सयाको, मेरी समझ में नहीं आता है कि मुझे क्या हो रहा है। मुझे लहू की लय सुनने की इच्छा हो रही है और हड्डियों के पोलेपन में तो सचमुच कोई कराहता हुआ सुनाई देता हैं" बलाशी खड़ी हो गई। सयाको को चूम लिया और गजुबू की ओर बढ़ी :

"मुझे भूख लगी है, अजीब-सी.... मुझे इंसानों की भूख लगी है। उनके बीच में मैं होऊँ" उसने गजुबू को चूम लिया। गजुबू ने अपना कपोल पोछ लिया और बोला, "प्लीज मो, डोन्ट डिस्टर्ब मी" बलाशी ये सुनने को कहाँ रुकी थी, वह तो अपनी धुन में मगन बोले जा रही थी :

"मैं भीड़ में कहीं खो जाऊं, बहुत सारे लोगों से बातें करूं, कुछ उनके साथ लड़ना-झगड़ना हो जाए, मैं उनकी ईर्ष्या करूं, वे सब मेरी ईर्ष्या करें, हम एक-दूसरे की प्रशंसा करें, किसी का इंतजार करें.... ऐसी-ऐसी इच्छाएँ मुझे हो रही हैं। ओ..... सयाको डियर, ऐसा हो तो कैसा मजा आ जाये? तो मैं....... मैं......" बलाशी गोल-गोल घूमने लगी।

सयाको हड़बड़ाकर खड़ा हो गया,

"डेन्जर...... डेन्जर.... गजुबू..... डॉक्टर को बुला। तेरी मो को तात्कालिक ट्रीटमेन्ट की जरूरत है। उसे..... उसे..... ओह..... नो..... डॉक्टर ने उसे जीभ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
की दवा दी थी तब ही कहा था कि इसके साईड इफेक्ट में कदाचित पुरानी संवेदनाएँ रिवाईव (पुनर्जीवित) हो उठें। हर एक को ऐसा नहीं होता। पर जिस किसी में संवेदना के जीन्स बलवान हों तो ये जीवंत हो सकते हैं! उसकी भी दवाइयाँ हैं लेकिन वो इंजेक्शन लेने के बाद इसके साईड इफेक्ट में वो औरत कभी भी बोल नहीं सकती। हाँ.... वे पुरानी संवेदनाएँ निर्मूल हो जाती हैं, उसकी गारंटी है।"

सयाको ने जीभ की कसरत कर रही बलाशी को कंधे से पकड़ लिया। बलाशी उसके सीने पे अपना सर रखने गई, वह जोर से रोना चाहती थी। पर सयाको ने उसे ऐसा करने न दिया :

"नो......नो..... बलाशी..... नो...... कंट्रोल योर सेल्फ। वह पुराना मानवीय संवेदना का रोग, क्रॉनिक हो जाये तो फिर उसका कोई उपाय नहीं है। और फिर संक्रमक भी....... मोस्ट डेन्जरस....."

सयाको रोबोट की तरह बड़बड़ाये जा रहा था। लहू की लय सुनने को बेकरार बलाशी का लहू ठंडा होने लगा। वो बलात बोली : "नो.....नो... नो डॉक्टर....." वह खतरनाक तेजी से जीभ को घूमाने लगी।

टी.वी. पर डायनोसोर देखता हो ऐसे गजुबू बलाशी की ओर देखता हुआ बोला:

"डे, वह इन्जेक्शन लेकर ही आने का कहूँ ना?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

10.

देहली

"ए गीली! आ गई, तू! आ, आ जा, कहाँ खो गई थी? मैं रोज तेरी राह देखती हूँ, पर तुझे ढूँढ़ूँ भी तो कहाँ और पूछूँ भी तो किससे?" खपरैल के टेक के लिए रखे बाँस के पास आकर हाथ फैला कर वह खड़ी रही। बाँस पर धीरे-धीरे सरकती गिलहरी आकर उसकी हथेली पर बैठ गई। उसने गिलहरी के शरीर पर प्यार से हाथ फिराया। गले लगा लिया। रसोई में आकर उसे आटे के डिब्बे पर बिठाया। उसके सामने रोटी का टुकड़ा रखा। गिलहरी हिली नहीं, चुपचाप उसे देखती रही। और वह भी सामने बैठ कर उसे देखती रही।

"ओ बाप रे! गीली! तेरा एक पाँव कहाँ गया? इसलिए नहीं आती क्या? मैं भी सोचूं, कि पूंछ ऊँची करके बाँस पर दौड़ती मेरी गीली आज ऐसी मरी हुई सी चाल क्यों चल रही है!'

आँखें पोंछकर उसने गीली को धीरे से उठाया और गले लगा कर छाती से दबाया। जैसे बिछड़े हुए पलों को फिर से जी रही हो, ऐसे थोड़ी देर तक बैठी रही। और फिर रोटी का एक छोटा टुकड़ा गीली के मुँह के पास लाई। गिलहरी ने भी अपनी पूँछ ऊपर करके उसके गालों पर फिराई। जिस स्पर्श को पाने के लिए वह जिंदगी भर तरस रही थी, जैसे वह मिल गया हो, वैसे आँखें मूँद लीं। गीली को फिर से जरा जोर से छाती से दबाया। कुम्हला के लटक पड़ी छाती में फिर से जोश भर आया। और वह जोश आँसू बनकर बहने लगा, "तुम पंछी और प्राणियों का अच्छा है, गीली! घाव को चाट-चाट कर मिटा देते हो! हम इंसानों में ऐसा नहीं है। हमें तो दवा करनी पड़ती है और फिर भी ना मिटे तो रिसते घाव के साथ ही चिता पर सो जाना पड़ता है बस!"

जैसे गिलहरी उसकी बात समझ गई हो ऐसे पूँछ उछालकर च्वी..च्वी करने लगी! वह खुश हो गई। "न सिर्फ अकेली मैं बल्कि पीछे के अहाते में चिड़ियाँ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
भी तुझे ढूँढती हैं।" बाँस पर बैठकर मेरे सामने देख-देख कर चीं..चीं करती कूदते-कूदते पास आती और उड़ जाती हैं। वह भी जीव, मैं भी जीव और तू भी जीव। जीव, जीव को याद न करे तो और फिर किसे याद करे!' बोलते-बोलते वह पीछे के अहाते के खुले किवाड़ के पास गई और चिड़िया को बुलाया, 'ओ चिड़ी, आ तो जरा। देख, कौन आया है! तुझे याद कर रहा है।'

एक पाँव वाली चिड़िया फर..र करती आई और गिलहरी के सामने बैठ गई। और चीं..चीं.. करती आसपास देखने लगी। मानो गिलहरी से पूछ रही हो कि, 'इतने दिनों से कहाँ थी? दिख नहीं रही थी! तेरा भी एक पांव कहाँ गया? पतंग की डोर से कट गया क्या?' गिलहरी, चिड़ियाँ और उसको बारी-बारी से देखने लगी। वह फिर से डिब्बे के पास बैठ गई, 'माँय रे! कितने दिनों के बाद हम तीनों मिलें हैं! अब खाने लगो। कौन कहता है कि मुझे बेटी नहीं है? आप दोनों तो हो ना मेरी बेटियाँ।

O

वो चिड़ियाँ और गिलहरी के साथ बातें करती रहती। यह आदत उसे अपनी माँ से विरासत में मिली थी। उसकी माँ को भी ऐसी ही आदत थी कि किसी के भी साथ कुछ न कुछ बोलती रहती। कभी भी खामोश नहीं रहती थी! नदी, सागर, मछली, जाल बुनते समय जाल के साथ और नाव के साथ कुछ न कुछ बोलते रहना उनका स्वभाव था, बस! उनके बापू मछुआरे थे। समन्दर में खेने जाते तब कई-कई दिनों तक घर नहीं आते थे। वो भी अपनी औरत मतलब इसकी माँ को कहते थे कि 'तेरे साथ रह कर मुझे भी इन सबके साथ बातें करने की आदत जो पड़ गई है!' तब इसकी माँ जवाब देती कि, 'इन सबके साथ हम क्यूँ न बोलें? ये सब भी तो हमारा परिवार है। अपने माँ-बाप को हँसते हुए देख वह भी हँसने लगती।'

जब मछली पकड़ने दूर समन्दर में जाने का होता तब मछुआरे रात को ही तापी नदी में नाव लेकर निकल पड़ते। अन्य माछण आए या न आएं पर यह दोनों माँ-बेटी तापी नदी के किनारे जरूर आतीं ही। दूर जाती नाव के लालटेन के टिमटिमा रहे दिए को अँधेरे में भी हाथ ऊँचा कर के बोलती रहती, 'जल्दी आ जाना, बापू! जल्दी आना'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

○

उसे जब भी फुर्सत मिलती तब वह दीवार के टेक उकड़ूँ बैठती, उसे देखकर ऐसा लगता जैसे कि वह हमेशा किसी का हुकुम सुनने को तैयार है! वह हमेशा बीच के कमरे की उस दीवार का टेक लेकर बैठती जिसका दरवाजा रास्ते पर खुलता था। जिससे रास्ते पर आने-जाने वाले लोगों के मुँह उसे देखने को मिले। पर उसके नसीब में इन्सानों के कमर के नीचे के हिस्से की भीड़ थी! क्योंकि आगे के दलान के छप्पर पर नारियल के लंबे-लंबे पान लटका रखे थे जिससे बारिश की बौछार अंदर तक न आए। बगैर माथे के इंसानों के पाँवों की भीड़ देखकर उसे लगता कि- क्या वह भूतों के गाँव में, बस रही है, क्या! या बगैर दिल के इंसानों के गाँव में?

वो कदापि कोई फरियाद न करती। जब वह सात साल की थी तब तापी नदी के बाढ़ का पानी उसके गाँव में घुस आया था और उसकी माँ उस बाढ़ में डूब कर मर गई थी। और उन्हीं दिनों समुद्र में मछली पकड़ने गये उसके बापू फिर कभी लौट कर न आए। उसने लोगों के मुँह से सुना था कि- समन्दर में गये हुए मछुआरे पाकिस्तानी सरहद में चले जाते हैं तो पाकिस्तानी कोस्ट गार्ड उन्हें पकड़ लेते है। फिर पाकिस्तानी जेल में पड़ें रहते हैं, जीवन भर। तब तो उसे कुछ समझ में नहीं आया था। पर जब बड़ी हुई तब यह याद करके खुश हुई थी कि,-चलो, बापू कहीं तो हैं, कभी न कभी तो लौट कर जरूर आयेंगे। और उसने अपने बापू के आने की आस में एक अंतहीन राह देखना शुरू कर दिया था।

○

वो अपने मामा के घर में बड़ी हुई। मामा ने कुछ भी देखे सुने बगैर जो भी पहले उसका हाथ माँगने आया, उसी के साथ उसकी शादी करवा दी। और घर में थे जवानी में बेवा हुई सास और उनका इकलौता बेटा मतलब इस औरत का पति। उसके ससुर भी समन्दर में डूब कर मर गये थे। इसलिए तो इसकी सास ने पुरखों का मछुआरे का धंधा छुड़वा कर अपने बेटे को दर्जी बना दिया था। उसने सात साल की उम्र में देखा हुआ कुदरत का वो रौद्र रूप बाद में हमेशा इन्सानों में देखा! वो मूक हो गई, न कोई फरियाद न कोई माँग! बड़ी हुई तब एक बार मामी से अपने गाँव जाने की माँग की थी। उस दिन माँ की बहुत याद आई थी। दिन ही कुछ ऐसा था। खुद

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
को बिलकुल अपनी माँ जैसा महसूस करने का दिन! माँ की छाती में सर छुपाकर बिन बोले माँ को कुछ कहने का दिन! खुद में से माँ की सुगंध महसूस करने का दिन! जो दिन हर औरत के जीवन में आता है। वह आकुल हो उठी। माँ के पास नहीं जा सकती की समझ उसे अपने गाँव तक खींच लाई। कदाचित माँ के पैरों की छाप अभी तक तापी की रेत में...और सिर्फ तापी ही क्यो, हर नदी मानव की माँ है यही तो माँ ने समझाया था। और वह मामी के आगे अपने गाँव जाने की माँग कर बैठी थी। और मामी ने कुछ सोचे-समझे बगैर डाँट कर ना बोल दिया था:

'वहाँ क्या खजाना छिपाया है, तेरे माँ-बाप ने? किसी को भी छुए बगैर एक ओर बैठ जा।

उस दिन पहली बार वह दीवार का टेक लेकर उकडूँ बैठ गई थी। सर को दो घुटनों के बीच दबा दिया था, नजर के सामने माँ-बापू, घर-घर की दीवारें, दीवार पर ठोंकी हुई बड़ी सी कील, कील पर लटकती स्लेट, और स्लेट पर अपने हाथों से नया-नया सीख कर लिखा हुआ नाम 'चंदन' उभर आया। आँखें चुपचाप बहती रहीं।

उसकी बारात में गिन कर केवल पाँच ही लोग आये थे। उसे ये पसंद नहीं आया था कि उसका पति मछुआरा हो कर एक दर्जी का काम करे! उसे तो मछुआरा ही पसंद था। जिसके शरीर में से समन्दर की सुगंध आती हो, वैसी सुगंध, जैसी उसके बापू की छाती में से आया करती थी। पर... पर उसकी पसंद नापसंद कौन पूछे?

फिर भी ससुराल जाते समय वो रोमांचित हो गई थी। क्योंकि रास्ते में उसका अपना गाँव आने वाला था। गाड़ी खड़ी रहती और घूंघट के आरपार वो नजर को दौड़ाती थी। और...और... फट से वह खड़ी हो गई। दो सफेद खूँटों के सहारे पीले रंग के चौकोर बोर्ड पर काले रंग से लिखा हुआ गाँव का नाम, उसका गाँव। उसे अपने घर की दीवार पर ठोकी हुई कील पर लटकती स्लेट जैसा लगा। मन तो दौड़ गया था घर के रास्ते, पर ये वरमाला के बंधन में बँधा तन कैसे दौड़े?

उसके पति ने पूछा था, 'क्या हुआ? कुछ चाहिए?' उसने सर हिला कर ना कह दिया और गाड़ी चल पड़ी थी। नजर दूर तक लंबी होती रही और आंसुओं की बाढ़ घूँघट के आर-पार बहती रही।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रात को शर्माते हुए संकोच के साथ डरते-डरते उसने अपने गाड़ी में खड़े हो जाने का कारण कहा। उसके पति ने कहा था, अरे! पगली, कहा क्यूँ नहीं? जीभ तो है न? तुझे कह देना चाहिए था कि मेरा गाँव है। प्लेटफार्म पर उतरते न। मैं भी तेरे साथ नीचे उतरता जरूर। कोई बात नहीं, अब फिर जायेंगे तब जरूर तेरे गाँव जायेंगे।

वह जो सुन रही थी, वो उसके मानने में नहीं आ रहा था। पल दो पल वह चकित रह गई। फिर घाट तोड़कर उफान पर आती नदी की तरह बह गई।

'बहू'! पौष महीने में बरसते हिम जैसी आवाज सुन कर वह जहाँ की तहाँ खड़ी रह गई। देहलीज के बाहर गया हुआ पैर वापस अंदर ले लिया। पीछे के अहाते में खटिया पर बैठी हुई सास की नजर ने बीच के कमरे की खिड़की में से उसे दौड़ते हुए देख लिया था। वो आगे के बरामदे में बैठ कर सिलाई कर रहे अपने पति को कहने जा रही थी कि मछुआरिन समंदर में गये अपने पति को याद करके समंदर के गाने गाती रहती है। आप तो मछुआरे से दर्जी बन गये! अब मैं किसके गीत गाऊँ? इस सिलाई मशीन के? उसे मन ही मन हँसी आ रही थी, इसलिए तो दौड़ कर यही बताने जा रही थी। और...

'जी, माँ जी! मुझे बुलाया?'

हाँ, तुझे ही। दूसरी कोई और बहू है इस घर में?' माँ जी की आवाज में हिम घुला हुआ था, 'बैठ जरा'। वह खटिया पर बैठ गई। उसका चेहरा हिम से मुरझाए हुए पौधे जैसा हो गया। माँ जी से नजर मिलाने की उसकी हिम्मत नहीं होती थी। इधर-उधर देखते हुए उसकी नजर खिड़की पर गई, उसमें से होकर ठेठ रास्ते पर का दरवाजा दिखता था। वो समझ गई कि उसकी चुगली इस खिड़की ने ही की है! उसे खिड़की पर गुस्सा आया, -इसे तो चुन देना चाहिए। किसी काम की नहीं है। उसने आँखे मूंद लीं।

'बहू!' उसने सास के सामने देखा। उसे सास की आँख पुराने जमाने के रेलगाड़ी के डिब्बे की कतार जैसे घर के बीच वाले कमरे जैसी लगी, ठंडी, अंधेरी और सूखी। उसे लगा जैसे कि वह खुद इस कमरे जैसी आंखों में बंद हो गई है। सास ने टोकना शुरू कर दिया, 'बहू! स्त्री की जात को चंचल रहना शोभा नहीं देता। हम कैसे रहे होंगे कभी सोचा है?' वो क्या बोले! नजर झुकाए बैठी रही। सास फिर से बोली, 'और यह काँच की चूड़ियाँ... क्या कहूँ तुझे?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
बाजार में प्लास्टिक की चूडियाँ भी मिलती हैं।' सास का इशारा वह समझ गई। शरम के मारे आँख बंद करने गई और नजर सास के हाथों पर चिपक गई–मानो पतझड़ की डालियाँ! वह कुछ बोले इससे पहले हुकुम आया, 'जाओ अब।' वो धीरे से खड़ी हुई, जैसे पाँव में डोरी बाँध दी हो ऐसे अटक-अटक कर चल कर घर के अन्दर चली गई।

बाद में तो नंदु की किलकारियों में वह चूड़ियों की खनखनाहट भूल गई। उन्हें यह भी पता नहीं रहा कि कब काँच की जगह प्लास्टिक ने ले ली! नंदु जब चार साल का हुआ फिर माँ जी पीछे पड़ गयी, 'बहू! दो बच्चे तो चाहिए। उन्होंने भूवा, साधु, ज्योतषी, जंतर मंतर, पीर-फकीर किसी को नहीं छोड़ा। परिणाम न मिलने पर अपनी बहू पर गुस्से होती थी। बहू चंदन का कहने का मन होता था कि- 'माँ जी! काँच की चूड़ियाँ पहनूँ तो... ' पर ऐसी मर्यादा के कवच को चूर-चूर करने की हिम्मत उसमें कहाँ! वो तो सास के हाथों पर गोदा हुआ राम ही पढ़ती रहती और राम ..राम.. ही जपती रहती। और किसी न किसी बहाने सास से दूर ही भागती रहती। सास का डर कम करने के लिए वह नंदु से बातें किया करती। घर में आती चिड़ियाँ और गिलहरी को वह नंदु की सहेलियाँ कहती। और नंदु को समझाती कि प्राणी-पंछी को अगर हम प्यार से बुलाते हैं और प्यार से उनके शरीर पर हाथ फिराते हैं तो वो भी हमारी बोली समझने लगते हैं, पालतू हो जाते हैं। नंदु चिड़ियाँ और गिलहरी के पीछे दौड़ता रहता और माँ जी बड़बड़ाते रहती कि बेटे को भी अपने जैसा ही बना देगी ये पागल! और नंदु को उसकी माँ से दूर रखने के लिए वह उसे अपनी गोद में बिठाकर अपने और अपनी माँ के गुनगान गाती रहती। वह सुना करती पर कुछ बोल न पाती। शुरू की उस एक अदृश्य डोर ने उसके पाँव तो बाँधे ही थे, साथ में उसके होंठ भी सी दिए थे। अपने नंदु को अपने आसपास रखने के लिए वह नंदु के लिए कुछ न कुछ यत्न किया करती।

'ए नंदु! देख तो, वहां ऊपर देख जरा, गिलहरी के बच्चे!' वह पाठशाला से आये नंदु को गिलहरी के बच्चे दिखाने के लिए बुला रही थी। खपरैल के टेक की बाँस की पट्टियाँ सड़ जाने से नीचे झुक गयी थी, कहीं ऐसा न हो कि, अब पूरी नीचे गिर जाये इसलिए कमरे के बीचों-बीच घर चुनाई के समय ही खपरैल और बाँस की पट्टियों को टेका देने जो बाँस खड़ा रखा था इसी बाँस पर टेके हुए दूसरा बाँस तिरछा करके दीवार से सटा दिया

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

था। उसमें बनी कोटर में गिलहरी ने बच्चों को जन्म दिया था। अब चंदन ने गिलहरी के बच्चों को भी अपना बना लिया था। बच्चे को अपनी माँ की हथेली में बैठे देख नंदू की आँखों में तूफान उमड़ आया, बच्चे को अपनी हथेली में लेने के लिए वो कूदने लगा। आवाज से माँजी जाग गई। जैसे खपरैल के बाँस की पट्टी झूल गई थी या खटिया की डोर झूल गई थी वैसे ही माँ की गले की चमड़ी भी झूल गई थी। और उस झूली हुई चमड़ी में कंपन स्पष्ट दिख रहा था। फिर भी आवाज तो पहले जैसी ही, हिम घुली हुई थी! 'क्या है, नंदु?' नंदु अपनी मम्मी के पल्लू को मुँह में ठूँस खड़ा था, वह बोला, 'दादी! गिलहरी के बच्चे, मम्मी की हथेली पर बैठे हैं!'

'बहू! तेरा पागलपन बढ़ता ही जा रहा है! पहले चिड़ियों के साथ बातें, और अब गिलहरी के साथ! पूरी सटक गई हो क्या!'

नंदु ने पल्लू छोड़ दिया। नंदु का छोड़ा हुआ पल्लू उसने खुद ने पकड़ लिया-जाने सोच रही हो कि- मैं इसे कैसे छोड़ूँ!

मुँह के अंदर रहती गिलहरी जैसी जीभ अंदर ही अंदर कुछ बोलने को छटपटाने लगी- 'जा चंदन जा, खींच ले तेरे नंदु को। पर वह खंभा हो गई थी। नंदु की आँखों में वह पढ़ सकती थी -पागल! और वह नंदु को खींच लेने की हिम्मत न कर सकी। जैसे बाढ़ में खिंच गयी माँ को देखा था इसी तरह नंदु को किसी अदृश्य बाढ़ में खिंचता देख रही। किसी की वाणी माँ बेटे के बीच पानी की दीवार चुनने का काम कर रही थी। दोनों माँ बेटा एक-दूसरे को देख सकें पर सुन न सकें! सिलाई मशीन की सुई जैसे तीक्ष्ण शब्द उसके दिमाग को बींधने लगे,

'मेरी माँ को जवाब नहीं देने का बस, बात खत्म। समझी न? उन्होंने मुझे राई पर काली मिर्च ठूँस कर बड़ा किया है। उनके विरुद्ध में मुझे कुछ नहीं सुनना है, बात खत्म।'

वो मन ही मन में उबलती रहती, 'आप तो पूरे दिन जीभ को मुँह में सीकर कपड़े सिया करते हो और यहाँ घर में आपकी माँ मुझे उधेड़े रहती है। मैं जाऊँ तो जाऊँ कहाँ? वह कुछ बोल न पाती पर मन में उधेड़-बुन चलता रहता। पानी की दीवार थोड़ा प्रतिघोष करती है! उसे कई बार लगता कि वह ऐसी जाल में फँसी मछली है, जो मर तो न पाई पर किसी ने जाल को उठा कर खाड़ी के पानी में फेंक दिया है। और यह पानी न तो उसे मरने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

देता है न ही जीने देता है! मछली याद आते ही माँ-बापू की याद आ जाती। बाढ़ में माँ-बेटी डूब रहे थे तब उसकी माँ ने उसका हाथ किसी और को थमा दिया था। और वह किसी और के कंधे पर बैठी बाढ़ में डूबती खिंची जा रही अपनी माँ को देख रही थी।

उसने अपनी माँ से भारत के मछुआरे और पाकिस्तानी जेल के बारे में सुना था। माँ का कोई अपना सगा जब बूढ़ा हुआ तब पाकिस्तानी जेल से छूट कर वापस आया था। यह बात याद रखकर उसके मन में एक आशा ने घर बनाया था कि कभी तो -मेरे बापू भी वापस आयेंगे। और आयेंगे तब उनसे जरूर कहूँगी कि- बापू! आपने मछलियों को जाल में फँसाया न, इसलिए ये आपकी अपनी मछली जाल में फँस गई है। बापू! निकालो मुझे इस जाल से। छुड़ा लो।

वह तुलसी के पास दीपक जलाते वक्त हाथ जोड़कर विनती करती कि- "हे पाकिस्तानी जेल के देव! मेरे बापू को छोड़ दे, मुझे उनसे बहुत कुछ कहना है, बहुत कुछ बताना है।" और उसके आसुओं से तुलसी के पत्ते भीग जाते। कभी-कभी कोई याद तापी नदी का रूप ले कर आँखों को बहने को मजबूर करती तब नंदु की स्लेट लेकर एक ओर अपना नाम और दूसरी ओर अपने गाँव का नाम लिखती। फिर जैसे खुद को ही मिटा देना चाहती हो, इस जोश से दोनों नाम मिटा देती।

O

आदत से मजबूर आज भी वह दीवार को टेके उकडूँ बैठी थी। लंबे पतले पाँव के घुटनों के बीच उसका चेहरा खिड़की के सरियों के बीच फंसाया हुआ रसोई के मैले कपड़े के पिंडे जैसा लगता था। खपरैल समेत बाँस की पट्टियां टूट कर नीचे आ गई थीं, तो कमरा ऊपर से खुला हो गया था। उसके टेके के लिए रखा बाँस खपरैल से बाहर जैसे गरदन निकाल कर खड़ा हो ऐसा लग रहा था। बाँस में हवा भरने से घर गूँजता रहता था। वो सोचती कि -चलो, यह हवा नई सहेली बनकर आई है, दिखती नहीं है पर बोलती तो है! ठंड, धूप और बारिश को कहती कि- चलो, आप सब जीते, आखिर घर में आ ही घुसे। ठीक है। पर मैं अभी भी हारी नहीं हूँ रे! अब उसे एक संतोष था कि घर में उसे अब कोई पागल कहने वाला नहीं था; जो बाद में तो उसने उस संबोधन को शरीर पर की रसोली की तरह स्वीकार कर लिया था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नंदु अमेरीका से आया था। पुरखों के किराये पर रखे घर की पगड़ी वसूलने! चंदन ने लीप पोत कर घर को स्वच्छ बना दिया था। लीपते समय बरसों के बाद एक विचार मन में कौंध गया था, -'नंदु को बोलूंगी कि एक बार मुझे मेरे गाँव ले जा। मरने से पहले एक बार मुझे अपना गाँव देखना है। तापी नदी में नहाना है!' और उसने ताजे लीपण पर सलाई से अपना और अपने गाँव का नाम लिखा था। इस समय वो उसी पर ही हाथ फेरते बैठी थी। उसके कान बाहर नंदु और बिल्डर की बातों पर लगे थे। उसने सुना,

'नंदन भाई! इस घर के बदले में आप को यहीं बनने वाले कॉम्प्लेक्स में एक फ्लैट मिल जायेगा। बिलकुल जर्जर हो गया है आपका घर। कब क्या हो जाए कह नहीं सकते। डॉलर कमाते हो डॉलर, फिर भी मरम्मत नहीं कराते! आपकी माँ अभी उसमें रह रही है, फिर भी!'

'कभी न कभी तो यह होने वाला ही था वह मालूम था। फिर क्या मरम्मत करानी? और मुझे वापस इण्डिया आना नहीं है। यहाँ है ही क्या? गंदगी,करप्शन..! और हाँ, मुझे फ्लैट नहीं पर सोसायटी में स्वतंत्र टेनामेन्ट चाहिए। जिसको मैं अपनी पसंद का नाम दे सकूँ 'मणीबा कृपा।' मेरी दादी का नाम। उन्हीं से तो यह सब है। यह सब वो ही तो संभालकर बैठी थी।

चंदन को जैसे आग लग गई! उसने अपने कान बंद कर दिये। दिमाग में बुदबुदाते लावा का घूघू सुनाने लगा। उसे सहन नहीं हुआ। लीपण पर लिखे अपने नाम पर हाथ रखकर, टेका ले कर खड़ी हुई- 'जा चंदन जा, बोल दे। बरसों से तू तो सब कुछ सँभालकर बैठी है। बोल कि सोसायटी में नहीं पर यहीं पर एक फ्लैट चाहिए और साथ में थोड़े रुपये भी; जिससे बची-खुची जिंदगी किसी के सहारे बगैर जी सकूँ।

वो बाँस के टेक के पास आई। ऊपर देखा। खपरैल के टेके के लिए रखा बाँस अपने हाथ जैसा लगा, जिसके नीचे सब स्वतंत्र थे एक वो ही बँधी हुई थी। दरवाजे की चौखट पकड़ देहली लांघने को पैर उठाया, अनायास मुड़ के देखा। बीच के कमरे की खिड़की में से अहाते का खुला किवाड़ दिख रहा था। उसके कान गूँज उठे,- 'बहू...!' आँखों के आगे से पूरा जीवन पसरा हो गया। फिर से बाँस के सामने देखा। बाँस में भराई हवा से घर गूँज रहा था। उसे अपने हाथ सुन्न होते लगे। नजर आकुल-व्याकुल होने लगी। पाँव सुन्न हो जाये, उससे पहले जल्दी से वह देहलीज लाँघ गई।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

11.

जाले से छनती धूप

नीचे के पूरे घर जितनी ही बड़ी मियानी पर लगाए गए, छप्पर के कोने में से पड़ रही धूप की किरणें लीपी हुई जमीं पर से सरक कर पूर्वी दीवार पर चढ़ गईं। वह समझ गई कि सूर्यास्त होने वाला है। उसकी नजर पूरी मियानी में घूमकर आयी। एक कोने में, कभी काम आयेगी ऐसा सोच कर रखी गई चीजों का अंबार लगा था। बीच में पुरानी खटिया पर गदेले-गद्दियों का गंज पड़ा था, आमने-सामने की दीवारों में लगाई गई गोख जैसी खिड़कियाँ सख्त बंद थीं, बरसों हो गये कभी खोलने की जरूरत ही न पड़ी थी।

वह खड़ी हुई। खिड़की के पास आई। पूरी खिड़की मकड़ी के जालों से भरी थी। छोटी-बड़ी मकड़ियां जाल बुनने में व्यस्त थी। खिड़की की दरार से धूमिल उजाला आ रहा था। मकड़ी के शिकार हो गये कीड़े जाले में लटक रहे थे। जाले में लगी धूल से वो मलमल जैसा दिख रहे थे। उसकी नजर जाले में उलझती रही, फिर तंतू के सहारे ऊपर देखा, किरन में उड़ती रज को वो देखती रही। सरक कर धूप की किरन के नीचे आकर खड़ी हो गई। आँख झीनी करके प्रकाश की पीली भूरी असंख्य किरणों को देखती रही, किरण धीरे-धीरे खिसक रही थी, आँख के ऊपर से हट गई। उसने फिर से मकड़ी की ओर देखा, जावेद के शब्द कानों में गूँजने लगे:

"सूरज तो मकड़ी की जात। हारे-थके बगैर किरणों का जाल बुने जा रहा है! जैसे पृथ्वी को पकड़ना-फँसाना चाहता हो! इसलिए तो करोड़ों सालों से चढ़ता है, गिरता है, फिर वही.... फिर वही... कभी तो पृथ्वी लटक पड़ेगी जाले में लटकते कीड़ों की तरह!"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जावेद के शब्दों से बचने के लिए उसने अपने दोनों कान खुजला डाले, वह बोल पड़ी:

"मैं तुम्हें सूरज नहीं होने दूँगी जावेद, और न ही मैं पृथ्वी बनूंगी।"

बाहर से आ रहा उजाला अँधेरे में पलट गया। उसे लगा कि वो कोई अनजानी गुफा में उतरे जा रही है। आगे क्या है? कहाँ पहुँचेगी? जैसे सवालों के जाले में वह फँसती चली गई। कानों में चमगादड़ की फड़फड़ाहट गूँज रही हो ऐसा उसने महसूस किया ।

'आयशा.... चल, खाणेकु, अम्मी बुला रही है।' सेंडसी के हत्थे को गर्म करके उस पर बालों की लटें लपेट के नली जैसी की हुई कपाल की लटों को उँगली से खेलती हुई नसीम 'आयशा' शब्द के एक-एक अक्षरों पर वजन देकर, आँखों को नचाती हुई उसे बुला रही थी। सामने की दीवार पे लटक रहे टूटे आईने में नसीम का प्रतिबिंब दिख रहा था। उसने कुछ जवाब नहीं दिया। नसीम ने नजदीक आ कर उसके कंधे पर हाथ रखकर फिर से कहा:

'आयशाबानु...... चलिए..... खाणेकु।' वो सिहर उठी, जैसे कंधे पर चमगादड़ आकर बैठ गया उसे ऐसा महसूस हुआ! एक झटके से नसीम का हाथ झटक दिया, दूर हो गई। नसीम आगबबूला हो गई, 'भाड़ में जा.....' बड़बड़ाती हुई दीवार पर थूक कर, पाँव पछाड़कर सीढ़ियाँ उतर गई।

जैसे हवा को पकड़ना चाहती हो ऐसे उसने अपना हाथ घुमाया, 'हवा और हव्वा! एक आधा अक्षर बीच में घुसने से कितना अर्थ बदल जाता है? एक को पकड़ ही न पावो और दूसरी कायम पकड़ में, पिता की या पति की।'

वो सीढ़ी की ओर देखती रही। सीढ़ियाँ चढ़ते वक्त रस्सी इधर-उधर जोर से हिल रही थी। वह समझ गई की नसीम ने अपनी खीज रस्सी पर निकाली है। थोड़ी देर पहले आँखों से पी हुई प्रकाश की पीली-भूरी किरणें लाल होकर आँखों से उगलने लगी, दांत किटकिटाने लगे, साँप की फूँकार जैसी आवाज निकल आई। खूँटी पर टँगा आईना हाथ में लिया। खुद उसमें दिख न पड़े ऐसा ध्यान रखकर, आईने को फेंका, खास कुछ आवाज न आई। एक तो पहले से टूटा हुआ काँच, ऊपर से फ्रेम जड़ा और नीचे लीपी हुई जमीन! टूटने की आवाज कैसे आती!

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वह सोच रही थी कि पहली दफा ही टूटने की आवाज आती है...... बाद में तो थोड़ी ज्यादा दरारें और छोटे-छोटे टुकड़ों में बिखरते रहना, जिंदगीभर दरकते रहना....

उसने खुद को खटिया पर फेंका। सीढ़ी पर धीरे-धीरे, एक-एक करके चढ़ती पद चाप वो सुनती रही:

'चल बेटी..... चल, तेरी राह देख रही थी। चल खाणेकु, सभी ने खा लिया, तू और मैं ही बाकी हैं, चल खाणा खाले...... तुझे तो अभी बहुत.....' अम्मी बोलती हुई अटक गई।

उसने अम्मी के सामने देखा, अम्मी के बूढ़े चेहरे पर मकड़ी के जाले जैसी झुर्रियां पड़ने लगी थीं। बीते हुए जमाने का अनुभव आँखों में मोतियाबिंद बनकर बैठा था। दृष्टि धुँधली हो गयी, पर आँखों से टपकता प्यार धुँधला नहीं हुआ था। बंद मुट्ठी कुछ सँजोये रखने की कोशिश व्यक्त कर रही थी। चिकन के कपड़े सलवार-कमीज परंपरा के प्रति उसका लगाव व्यक्त कर रहे थे। अम्मी ने उसका हाथ थामा, 'चल...'

वह बिल्कुल हिली नहीं। अपना हाथ छुड़ा लिया: 'मुझे नहीं खाना है,' आवाज रुँधी हुई थी।

'ऐसा नहीं करते बेटी, चल.... तू नहीं खायेगी तो मैं भी नहीं खाऊँगी, ठीक है....'

उसका आक्रोश पिघलने लगा। अम्मी ने उसका हाथ फिर से थामा, 'चल....' वह अम्मी के पीछे चली। लकड़ी की सीढ़ी उतर के दोनों नीचे आये। अम्मी ने थाली परोस कर उसके सामने रखी:

'नसीम बुलाने आई तो क्यों नहीं आई? आ जाया कर बेटी, ये सीढ़ी मुझसे चढ़ी नहीं जाती' अम्मी हाँफते हुए बोल रही थी। वो गुबार निकालती हुई बोली:

'वह मुझे क्यों आयशा कहकर बुलाती है? कितनी बार कहा कि मेरा नाम आयेशा नहीं आयुषा है। आ...यु...षा...। अपने नाम के एक-एक अक्षर पे वो वजन डालकर बोली।

''यु' बोले या 'य' बोले क्या फर्क पड़ता है बेटी?' अम्मी समझाते हुए बोली, 'आयुषा या आयशा क्या फर्क पड़ेता है?'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'कुछ फर्क नहीं पड़ता तो फिर नसीम को बोलो न कि वह मुझे आयुषा ही कहकर बुलाए। वह क्यों मुझे आयशा कहती है? मुझे पसंद नहीं बिलकुल। मैं क्यों अपना नाम बदलूं?'

'नसीम नहीं मानेगी, तू अपने मन को मना ले। हालात को स्वीकार ले बेटी, उसी में भलाई है।

'नहीं बिलकुल नहीं, वह मेरा स्वभाव नहीं। अगर ऐसा ही स्वभाव होता तो मैं जावेद से शादी कर ही नहीं पाती। तब भी हालात मेरे विरुद्ध थे। मेरे माँ-बाप और मेरा समाज नहीं चाहता था कि मैं एक हिंदू होकर एक मुस्लिम से शादी करूं। फिर भी, सबके खिलाफ जाकर मैंने वो किया। तब हालात को स्वीकार किया होता तो आज मेरी ये हालत न होती' श्लोक बोल के हाथ में लिया हुआ निवाला उसने फिर से थाली में रख दिया। उसका गला रुँध गया था, शरीर में झुरझुरी दौड़ गई।

'देख बेटी, औरत कभी भी आयुषा या आयशा नहीं होती है। औरत.... सिर्फ औरत होती है। बदला लेने का साधन मात्र। तू देख, जितने भी युद्ध हुए उनमें औरत कहीं भी न थी, पर.... हर एक युद्ध के बाद जीत का जश्न या हार का बदला औरतों के साथ ही लिया जाता है। जिसे युद्ध से कुछ लेना-देना नहीं, जिसने कभी एक भी हथियार बनाया नहीं, वो औरतें लहुलुहान हो जाती हैं हर एक युद्ध के बाद। मर्दों को मिले हुए हथियार से। पूरी दुनिया पर शस्त्रों का गंज लगा देने वाले मर्द, औरतों को भी अपना हथियार बना देते है।' अम्मी ने लंबी साँस ली, फिर बोली, 'नसीम ऐसा ही एक हथियार बन गई हैं। हथियार प्यार की भाषा नहीं समझता। तू नसीम की बातों पर ध्यान मत दे।' अम्मी की व्यथित आवाज अनुभवों के गलियारों से आ रही थी, 'चल खाने लग..... खाना शुरु कर'

आयुषा चुपचाप खाने लगी। नसीम मँजे हुए बर्तनों की तगारी लेकर अंदर आई। आयुषा को खाते देख तगारी जोर से पटकी:

'क्यों आणा पड़ा ना खाणेकु? सीधे-सीधे आया कर समझी? अम्मी को ऊपर जाना पड़ता है। देखती नहीं कि कितना हाँफ रही हैं? और अम्मी को क्या कह रही थी? तेरुकुं मैं आयुषा कहुं ऐसा? अब रह क्या गया आयुषा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

में? तुझे जावेद ने बिस्तर पे तो ले लिया, 'अब तू अपने आप आयशा हो गई समझी? शौहर के मजहब को अपणा ले अब। वो तो तुझे करणा नहीं है और आई है बड़ी प्यार करणेवाली।" नसीम ने कपाल तक ओढ़नी खींचकर उसके किनारों को कानों के पीछे दबाकर आयुषा के सामने उकड़ूँ बैठकर खड़कते बर्तन जैसी आवाज में बोली।

आयुषा खाते-खाते खड़ी हो गई। हेंगर पर टँगे कपड़े जैसे ही उसके शरीर पर ड्रेस लटक रहा था। आँखों के आसपास हो गये गहरे काले धब्बों से आँखें धुंधले तारे जैसी लग रही थीं। कपाल पर उभरी हुई भूरी नस ज्यादा भूरी लग रही थी। मुट्ठी सख्त बंद थी। पलभर के लिए नसीम सहम गई। अम्मी खड़ी हो गई, दोनों के बीच में आ गई। आयुषा दाँत किटकिटाकर बोली:

'तू क्या बोल रही है कुछ भान है? कब की बिस्तर पर....बिस्तर पर... बके जा रही है। क्या औरत कोई चीज है, कि जिसका इस्तेमाल हो सके? मैं और जावेद पति-पत्नी हैं। हमने कानूनन शादी की है। हमारा आपस में बराबर का रिश्ता है, हिस्सा है, हक और फर्ज है समझी? पर....नसीम तुझ जैसी अनपढ़, गँवार को ये बात समझ में नहीं आयेगी।'

अनपढ़-गँवार के ताने से नसीम बौखला गई। वो हाथ बढ़ा के आयुषा को मारने दौड़ी। अम्मी चीख पड़ी। आयुषा रसोई घर से बाहर अहाते की और दौड़ी।

रात गहराती हुई मुखर हो गई थी। अहाते में उगे सहिजन के पेड़ पर लटक रहे चमगादड़ रह-रहकर पंख फड़फड़ा रहे थे। सहिजन के तने पर चढ़ी हुई जूही की बेल खुशबू फैला रही थी। उसमें गोठे में बँधी गाय के गोबर की बू भी शामिल थी। गाय अपनी पूँछ से मच्छर उड़ाते वक्त जोर से साँस भरती थी। उसी से विचित्र आवाज उठ रही थी। पूरा माहौल भयावह था तो आह्लादक भी था। अम्मी और नसीम की तू...तू...मैं...मैं... जारी थी।

और कोई दिन होता तो आयुषा जरूर कह उठती कि कोई आर्ट मूवी जैसा माहौल खड़ा हुआ है। पर आज कुछ कहने-सुनने-सोचने की ताकत रही न थी, उसमें। आज वो खुद ही एक किरदार हो गई थी किसी नौटंकी की। चमगादड़ फिर से फड़फड़ाया। आयुषा ने अपनी फड़फड़ाती छाती पर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हाथ रखा। छाती में दफन कितनी जहरीली-विकराल यादें फुफकार भरने लगीं। नसीम की बातों ने उन यादों को कुरेदने का काम किया था।

'शा...बा...श जावेद, तू हिंदू की लड़की को भगा लाया। तू एक सच्चा मुसलमान है। तू काफिरों की इज्जत से खेलेगा। तू सच्चा मर्द है। पर.... तुझे अपने धर्म वाली से भी शादी तो करनी ही पड़ेगी, अपनी बुआ की बेटी से। हम तो चार को रख सकते हैं। हमें कौण रोकनेवाला होता है?' जावेद के अब्बा अपने हाथों से मेंहदी लगाई हुई अपनी दाढ़ी को सहलाते हुए, आयुषा की ओर देखकर बोले थे।

'अब्बू..., ये आयुषा है। मेरी वाइफ- मेरी लाइफ यानी मेरी जिंदगी-बंदगी, अगर वो अपने माँ-बाप की इज्जत है तो मैं भी आपकी इज्जत हूँ। इज्जत को सिर्फ बेटियों के हवाले करके हम बेटों को बिन्दास-बेपरवाह घूमने के लिए छोड़ नहीं सकते, और औरत कोई खिलौना नहीं जिससे जब मन चाहा खेला जा सके। हम दोनों साथ रहकर आप जैसे कट्टरवादियों की सोच को बदलेंगे, ये हमारा आपस में तो वादा है ही पर आज आपसे भी ये वादा करता हूँ। हमें विश्वास है, जीत प्यार की होगी। वैसे ही आयुषा कभी आयशा नहीं बनेगी जैसे मैं जावेद से जयेश नहीं बन सकता।'

अब्बू हँसे थे। खौफनाक हँसे थे। उनकी हँसने की आवाज आयुषा को ड्रील मशीन जैसी लगी थी उसे याद आया कि किस तरह उसके पड़ोसी के जवान लड़के के पूरे शरीर में ड्रीलिंग करके उसे मार डाला था। फिर से वही दृश्य सामने घूम गया ऐसा लगा जैसे उस की आँखें फट गई हो और उसे देखकर जावेद की आँखें नीची हो गई थीं। काले नकाब के पीछे से दो आँखें तरेर रही थी अब्बू की ओर जिसमें भय नहीं विद्रोह था।

जावेद-आयुषा ने अलग से अपना घर बसाया था। जो न हिंदू का था न मुस्लिम का। मानवता उस घर में साँस लेती थी। सूर्य नमस्कार के साथ नमाज कदम ताल करती थी। पूरे शहर में जब एक-दूसरे के धर्म चिह्न उखेड़ डालने की होड़ लगी थी तब इस घर में रूमी और नरसी की कविताएं चिड़िया की तरह चहक रही थीं। पूरा शहर कर्फ्यू से त्रस्त था तब आयुषा-जावेद अपने में मस्त थे:

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'आयुषा आज कोई नया प्रयोग करना है'

'क्या? फिर कोई नया तूफान सूझा क्या?'

'केनवास पे तो पेंटिंग्स बहुत बार की, आज बॉड़ी पेंटिंग्स पर हाथ आजमाऊँ तो....कैसा ख्याल है?' जावेद की आवाज में शरारत के साथ घुला तूफान था।

'मुझे भी लगता है कि कागज पर तो बहुत लिखा, मैं भी चाहती हूँ कि कुछ नया करूँ। तुम पर ही कुछ प्रयोग करूँ तो...?' आयुषा किसी भी तरह से जावेद से कम नहीं थी। एक चित्रकार था तो दूसरी पत्रकार। जावेद के व्यंग्य चित्र पर आयुषा आफरीन थी तो आयुषा की लिखाई पर जावेद कुरबान था।

'पहले मेरी बारी, चलो निकालो अपना कुरता....'

'ए..ए..य, क्या कर रही हो? जावेद चमका था। आयुषा खिलखिलाकर हँसी थी।

'जावेद तुम मुसलमान तो मिट सकते हो पर पुरुष.... तुम्हें किसी भी शरारत का अंत एक ही दिखता है...तुम...' आयुषा जावेद के कुरते के बटन खोलने लगी। जावेद की समझ में नहीं आ रहा था कि आयुषा क्या करना चाहती है। आयुषा मार्कर पेन ले आई। जावेद के पीछे बैठकर एक हाथ जावेद के गले में डालकर उसकी पीठ पर लिखने लगी,

'मेरा वेद.... जावेद'

'क्या लिखा? पागल.... शेखचिल्ली..... या कुछ नया नाम? बता' जावेद ने आयुषा को बाँहों में भर लिया। आयुषा आँखें नचाकर बोली :

'जरा सोचो.... दौड़ाओ अपनी कल्पना को, देखती हूँ तुम अपनी कल्पना को कहाँ तक दौडा़ सकते हो।'

'क्या सोचना....? तुमने जो इल्काब दिये हैं वो सर आँखों पर, इसमें एक और, बंदे को मंजूर है हुजूर।'

आयुषा ने पढ़कर सुनाया। जावेद में उफान आ गया। वह खिलखिलाती हुई आयुषा को खींचकर ले गया अतल गहराईयों में। शांत कोलाहल में मग्न दोनों बाहर की खड़खड़ाहट से बेखबर थे। समाधि टूटी एक मित्र के फोन से:

'जावेद-आयुषा बी केयरफुल। आपके मोहल्ले तक दंगा पहुँच चुका है।'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दोनों हँसे थे। पर..... धर्म से जले हुए दोनों ने अपने-अपने भगवान को याद कर लिया। क्षणभर पहले का शांत कोलाहल अशांत निस्तब्धता में बदल गया।

मँडरा रहे डर को कम करने का प्रयत्न करते हुए आयुषा बोली:

'चलो, चलो... अब तुम्हारी बारी, तुम्हारे वाले प्रयोग का क्या?'

शून्य हो गया जावेद आयुषा को अपलक देख रहा था। आयुषा ने जावेद को कंधे से पकड़ कर हिला दिया। हवा के झोंकों से बचाने के लिए दिये के आसपास हाथ धरते हैं, इसी तरह आयुषा ने जावेद के बुझते चेहरे पर अपने हाथ रखा, फिर बोली:

'जावेद किस चिंता में डूब गये? भूल गये कि मारनेवाले से बचाने वाला ज्यादा ताकतवर होता है। चलो चिंता छोड़ो, ऊपरवाले पे भरोसा रखो। मुझे पूरा विश्वास है कि हमारा कोई कुछ बिगाड़ नहीं सकता। चलो....चलो... तुम्हारे वाले बॉड़ी पेंटिंग्स का क्या? मुझे....' पर थोड़ी देर पहले की तूफानी आवाज सपाट हो गई थी।

अनजाने भविष्य की गुफा में से जावेद की आवाज आ रही हो ऐसा लग रहा था:

'नहीं, आयुषा, मरने से कौन डरता है? मेरे या हमारे मरने से अगर दोनों कौमों को शांति मिलती तो मुझे मरने में भी कोई दिक्कत नहीं है। पर....ये सड़े-मरियल विचार कितनों को खा जायेंगे। आयुषा क्या बोलती, वह खुद भी यही सोच रही थी।

जावेद अत्यंत भावुक हो गया था :

'आयुषा कोई चित्रकारी नहीं। अब सिर्फ पूजा। मुझे वेद कहनेवाली और कोई नहीं माँ जगदंबा ही हो सकती है। उनकी पूजा ही हो सकती है। मैं हिंदू धर्म से आकर्षित हुआ इसका कारण यही है कि इस धर्म में औरत को शक्ति का स्वरूप माना गया है। देवों की ढाल भी जगदंबा ही बनी थी न? कोई भी पुरुष कमजोर पड़ता है तब उसकी माँ, बहन या पत्नी ही उसे सँभालती है, उसका ढाढ़स बढ़ाती है। जगदंबा के कपाल पर पूजा का टीका ही होगा।'

जावेद खड़ा हुआ। रंग और ब्रश लेकर आयुषा के सामने बैठा। आयुषा की चिबुक पकड़कर उसकी आँखों में देखता हुआ बोला : 'या देवी सर्वभूतेषु

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्राणी नाम संस्थिता, नमस्तस्यै....नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः। वो आयुषा के कपाल पर कलात्मक टीका चितरने लगा।

बाहर की भीड़ कम्पाउंड वॉल कूद के अंदर आ गई थी। खिड़की-दरवाजे खड़कने लगे:

'बाहर निकलो.....सा.....'

टीका अधूरा रह गया। दोनों हक्के-बक्के रह गये। समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें! उनको पता था कि जो दरवाजा खटखटा रहे हैं वो इंसान नहीं बल्कि साक्षात मौत थी। पुलिस का नंबर एंगेज दिखा रहा था.... और दोस्तों की जान वो जोखिम में डालना नहीं चाहते थे।

छत का दरवाजा भी खड़कने लगा। आयुषा हिम्मत करके ऊपर गई, पहचानी आवाज सुन आँखों का बाँध टूट गया। उसने दरवाजा खोला, पड़ोसी की मदद से छत पर से ही भाग निकले जान पर खेल के। और सीधे जावेद की बुआ के गाँव पहुँचे ।

आयुषा को बुआ के घर पर छोड़कर जावेद वापस शहर को लौट गया। जाते-जाते उसके द्वारा बोले हुए शब्द 'सा.... काफिर...' आयुषा को आर-पार बिंध गये थे। वह जावेद को कुछ कहे इससे पहले ही जावेद निकल गया। आयुषा अजनबी आँखों के घेरे में फड़फड़ा उठी। बुआ की बेटी नसीम बोली:

'ये टीका पोंछ दे, यहाँ रहणा है तो। अभी जावेद के शब्दों के आघात से बाहर भी नहीं आ पाई थी कि तभी नसीम के इन शब्दों से उसका हृदय बैठ गया। हिंदू संस्कारों में पली-बड़ी हुई आयुषा 'टीका पोंछ दे' बरदाश्त न कर सकी। कभी न सोचा था उस अपशगुन का खयाल उसे आ गया। वैसे भी आफत में ही सुषुप्त मन में पड़े विचार उछलकर सामने आ जाते हैं। वह चित्कार उठी:

'नहीं.....ना....ना..... मैं अपनी बिंदी नहीं पोछूंगी। जावेद को आने दो..... हम चले जायेंगे। यहां से आपके लिये हम आफत नहीं बनेंगे।' वह नसीम और उसकी अम्मी के सूने कपाल को देख, चुप हो गई। अपना टीका उसे अपनी गोद के बच्चे जैसा लगा, जिसे नसीम की नजर लग रही हो। पहले कभी भी महसूस न की हुई लाचारी वह महसूस कर रही थी। वह बाहर जाने को दौड़ी, नसीम ने उसे पकड़ लिया:

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'यहाँ पर फ़जिता करणे आयी हो क्या? अपने साथ हमको भी मरवा डालोगी। देखती नहीं दोनों कौमों को एक दूजे के खून की प्यास लगी है? वे लोग हम सब को पी जायेंगे। सुणा नहीं तूने? वो तेरे वाले लड़के ने हमारेवाली लड़की से शादी की थी तो उसे कैसे मार डाला था! गले में ड्रिल किया था! तेरे जैसी औरतें ही ये आग लगाती हैं। तुझे क्या, जावेद का जो भी हो, नहीं? आ गई हमारी छाती पर...'

आयुषा बंद होते दरवाजे को देखती रही। जावेद पर शंका और जावेद की चिंता, दो विरुद्ध भावनाओं में वो पिस रही थी। तभी बुआ का प्यारभरा हाथ उसकी पीठ पर फिरा:

'चल बेटी, रात बहुत हो चुकी। सो जाते हैं। जावेद अपणे अम्मी-अब्बा को लेणे गया है, फिकर मत करणा आ जायेगा।'

पहली बार आयुषा को अपने मम्मी-पापा की फिकर हो आई। पापा के शब्द कानों में गूँजने लगे-

'बेटी! मैं भी मानता हूँ कि इंसान की जात या धर्म नहीं देखना चाहिए। यही आदर्श परिस्थिति है। पर वास्तविकता कुछ और ही है। वास्तविकता को तो हम अनदेखा कर नहीं सकते ना। ये शादी का मामला है, पूरी जिंदगी का। हमने कितनी हिंदू लड़कियों को मुस्लिम लड़कों से शादी करके पछताते हुए देखा है क्योंकि वे बाद में या तो दूसरी शादी कर लेते है या फिर पहले से ही शादीशुदा होते हैं, ऐसी लड़कियों की जिंदगी त्रिशंकु बन के रह जाती है। न घर की न घाट की।' पापा के शब्द सच्चे साबित होंगे ....क्या? उसने अपनी आँखें मूंद लीं, जहां खड़ी थी वहीं बैठ गई। इंसान बन के जीने का सपना भाप बनके उड़ते देख रही थी। औरत होने का मतलब समझ में आने लगा था।

जावेद को गये हुए आज दूसरा दिन था। उसकी कोई खबर न थी। पड़ोसियों की नजर से बचाने के लिए नसीम ने आयुषा को मियानी में छुपाया था। वो आयुषा को सम्हालती भी थी और सताती भी थी क्योंकि आयुषा उसकी दुश्मन जो थी, जावेद को उससे छीन लेनेवाली।

अम्मी आयुषा को अहाते की चौकी पर से जगा रही थी, 'उठ बेटी ऊपर जा के सो जा।'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आयुषा ने बोझिल आँखें खोली, वास्तविकता को वह पलभर भी नहीं भूली थी। वह खड़ी हुई, झीनी आँख कर अम्मी के सामने देखती हुई सोच रही थी, 'वह यहाँ क्यों पड़ी है? भाग क्यों नहीं जाती?' अम्मी ने मुड़कर उसके सामने देखा, वह अम्मी की आँखों में देखती रह गई .... चुंबक आँखों में भी हो सकता है?.... अपनी नजर चुरा ली। पक्के निराधार के साथ, रस्सी के पकड़े बिना मुठ्ठी बाँध के सीढ़ी चढ़ने लगी।

ऊपर आकर खिड़की के पास आई। दरार में से आ रही चांदनी में जाले ज्यों के त्यों दिख रहे थे। विचार तंतु आगे बढ़ा।

'मेरे और जावेद के बीच भी ऐसे ही जाले हैं। जो पहले कभी न दिखाई दिया वह इन दंगों ने दिखा दिया। दोनों अपने-अपने धर्म के जालों में अपनी जानकारी से बाहर बुने हैं। इसलिए तो जावेद सा...काफिर...' बोल पड़ा। जावेद You too?'

उसने हाथ बढ़ाया, जाले को चीरकर खिड़की की चिटकनी खोलने लगी। थोड़ी मेहनत लगी पर खिड़की खोल दी। चाँदनी का टुकड़ा उसके पाँव में बिखर गया। नजर दूर दौड़ाई..... वह देखती ही रह गई। दूर से आ रही मानव आकृतियों के चलने के ढंग से वो पहचान गई।

'जावेद, तुम...तुम...अपने अम्मी-अब्बा के साथ मेरे मम्मी-पापा को भी ले आए...!'

जाले की परवाह किये बिना वह खिड़की में बैठ गई। मूसलाधार अश्रुधारा में हाथ पर चिपके जाले घुलने लगे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

12.

अँधेरे का रंग

ड्योढ़ी की दरार के आसपास हाथ रखकर, एक आँख चुँधियाकर जुबेदा अंदर झाँकने लगी। आँगन के सामने के कोने में पड़ी खटिया दिख रही थी। उसकी भीगी निवार के पीछे हो रही हलचल से वह समझ गई कि जीवी भाभी नहा रही है। उसने धीरे से, बिना आवाज किए ड्योढ़ी की कुंडी खोली। और दबे पाँव आँगन में आकर, खटिया लेकर भागी। खटिया की आड़ में नहा रही जीवी भड़क उठी। और लोहे का तसला उठाकर उससे अपना बदन ढकने लगी। जुबेदा खटिया में पड़ी-पड़ी खिलखिलाकर हँस रही थी। तसला ओढ़े बैठी जीवी कलपने लगी:

"ए झूबली.... तेरु कुं मैं मार डालूंगी...... बेशरम, कहाँ से आ पड़ी? चैन से नहाने भी नहीं देती! मरती भी नहीं है ना......! ला मेरा ओढ़ना दे दे तो.... ला.... वरना....।"

जुबेदा ने जीवी के ओढ़ने का गोला बनाया और उस पर फेंका :

"चिल्लाती क्यूं हो? मैंने तुम्हें कुछ कहा? मुझे लेटना था इसलिए खटिया ले ली, इसमें इतनी चीखती क्यूं हो? ये खटिया क्या तेरे गुसलखाने की किवाड़ है कि उसे अड़ा के नहाने बैठ जाती हो? नहाना है तो नदी पर क्यूं नहीं जाती हो? घर के पीछे ही तो है।" तसले में घूमते कंचे की तरह जुबेदा की आँखें घूम रही थी। जीवी अपने भीगे घाघरे पर ओढ़ना डालकर जुबेदा के पास बैठते हुए बोली:

"जुबेदा बानु, अभी कोई मरद न आये, समझे? बस्ती के सभी मरद गये हैं खेत पर। अभी तो बस कुत्ते-बिल्ली ही आये, आये तो।"

जुबेदा ने जीवी को मारने के लिए हाथ उठाया: "मुझे कुत्ती कही! यों. .....?" जीवी उसका हाथ पकडते हुए बोली: "नहीं... रे, बिल्ली कही। क्यूं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तू बिल्ली की तरह दबे पाँव न आई? और तेरे गाँव की नदी में पानी होता है क्या? निपट रेत और चट्टाने तो हैं! यहाँ के मरदों जैसी ही।"

जुबेदा जीवी का भीगा घाघरा खींचते हुए बोली: "ए जीवली, मेरे गाँव की नदी को कुछ कहा ना तो ये घाघरा खींच लूंगी हाँ..... नदी हमारी माँ जो है।" दोनों खिलखिलाकर हँसने लगी।

"भाभी तू सूख गई है। अपना चेहरा तो देखो कैसा फीका पड़ गया है।" जुबेदा जीवी का हाथ, अपने हाथ में लेकर उसे सहलाते हुए बोली।

"ये देखना, मेरा मगन बीमार ही रहता है। कित-कितनी दवाइयां की, मन्त्र पढ़े, डोरे भी बाँधे, मन्नतें भी लीं, अब बस एक ताजिया ही बाकी है। उसके नीचे से निकालना बाकी है। ए झूबी, ताजिया कब आयेंगे?".....

नींव से सड़े हुए दरवाजे में एक-एक बित्ता जितनी जगह हो गई थी। उसमें से अंदर आने की कोशिश करते हुए पिल्ले की वजह से ओठडे हुए दरवाजे की बार-बार कुंडी खड़क रही थी। बैठे-बैठे झोंके खा रही जुबेदा 'आई.....' कहती हुई खड़ी हो गई। उसे खड़े होता हुआ देख पिल्ला कान खड़े करके स्थिर हो गया। पिल्ले की वजह से मनभावन सपना उड़ जाने से जुबेदा चिढ़ गई:

"मर जा रे, मरे हुए...... मेरे पीछे रोनेवाला...... इस वक्त कहाँ से आ पहुँचा? जा.... चला जा... ह....ई...ड..."

पिल्ला उलटे पाँव निकलकर भागा। थोड़ी देर के लिए जुबेदा दरवाजे के नीचे से आ रही कुत्ते की जीभ जैसी खुरदरी धूप को देखती रही :

"अ...र...र... बैठे-बैठे ही आँख लग गई थी! जाने कैसे-कैसे सपने आते है! कहाँ है जीवीभाभी? कहाँ है उसका बेटा मगन और उसका पति जीवन?" जुबेदा ओठंगे हुए दरवाजे को खोलकर चबूतरे पर आई। भूकंप से खंडहर हो गये खेतहरों के बाँस को देखने लगी:

"जीवीभाभी की कैसी-कैसी खिल्ली उड़ाते थे और हँसते थे! जीवण को तो चैन से बैठने नहीं देते थे।" जुबेदा के कानों में ढोल बजने लगा: "ढम....ढम....ढम... केसरीया वाघा पेर्या हीरजी भाथी ए... केसरीया वाघा पेर्या रे....." (सिंदूरी चोगा पहना हीरजी भाथी ऐ... सिंदूरी चोगा पहना रे....)

वह पिल्ला वापस आकर जुबेदा के पाँव चाटने लगा। जुबेदा की ओर से रोज मिलता रोटी का टुकड़ा आज मिला न था इसलिए पिल्ला बार-बार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जुबेदा के पास आ रहा था। फिर से जुबेदा की आँखों के सामने चल रही फिल्म का परदा चीर गया। जिस तरह कुत्ता हड्डी को चाट-चाटकर सुख पाता है इसी तरह जुबेदा भूतकाल को चाट-चाटकर मजा ले रही थी। इसमें ये पिल्ला बार-बार आकर उसकी भूतकाली हड्डी को छुड़ा देता था, जुबेदा को पिल्ले पर क्रोध आया। उसने हो सके इतना जोर लगाकर पिल्ले को लात मारी। तीन फूट ऊँचे चबूतरे पर से पिल्ला नीचे गिरा। का....ऊँ...का...ऊँ... करता वह भागा और थोड़े दूर जाकर जुबेदा के सामने देखकर पट-पट दुम हिलाने लगा। जुबेदा को दया आ गई:

"अ...र...र..., ये बेचारे को क्यूं मार रही हूँ? वह तो जब उसका आाने का समय होगा तब आयेगा ही। उसकी माँ के मरने के बाद से मैंने ही उसे पाला और अब मैं ही उसे मारने लगी? थाली में से रोटी का टुकड़ा देकर मैंने ही हिलाया-मिलाया तो मैंने और आज....! पर आज मैं उसे दूं क्या? सलीम सुबह से चला गया है, बाद में मैंने कुछ पकाया ही नहीं तो उसे क्या दूं?"

उसने पिल्ले को 'तू..तू..तू..' करके बुलाया। वह भी दुम हिलाता हुआ आकर जुबेदा के पाँव से लिपटने लगा। जुबेदा ने उसे सहलाया, फिर बोली:

"जा अब... आज कुछ पकाया नहीं है, रोटी का टुकड़ा तुझे कैसे दूँ? इसलिए जा....।" पिल्ला भी मानो उसकी बोली समझ गया हो और वहां से चला गया।

जुबेदा वापस घर में आई। सुबह से लेकर दोपहर तक, कितनी बार वह अंदर-बाहर हुई थी। उसने मन में निश्चय किया था कि आज चरखा नहीं चलाना है। जुबेदा टी.वी. को चरखा ही कहती थी।

वह कमरे के बीच खड़ी रही। खपरैल में से आती धूप से कमरे में किरणें बिखर रही थीं। वह बचपन में ये किरणें पकड़ने की बेकार कोशिश करती रहती थी। और जब किरन पकड़ में न आये तो किरण में उड़ती रज को फूँककर उसकी गति बढ़ा देती थी। और उसे देखने में मग्न हो जाती थी। यह उसका प्रिय खेल था।

इस समय उसकी नजर किरण पकड़कर गोह की तरह फर्राटे से ऊपर चढ़ गई। उसके दिल में लटकती यादों की तरह टूटी हुई बल्लियाँ लटक रही थीं। बँड़ेरी में भौंरों के बनाये मिट्टी के बिल चिपके हुए थे। एक भौंरा बँडेरी में किए हुए सुराख में गु...न...गु..न.. करता हुआ घुस गया। जुबेदा की नजर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नीचे झुकी। चारों दीवारों पर घूम आई। जहाँ-तहाँ कीलें ठोकीं हुई थीं। कुछेक पर कुछ लटक रहा था। बरसों से जिसे उसने छुआ तक नहीं था। एक कीले पर उसके अब्बु की टोपी धूल खाती हुई लटक रही थी। उसके अब्बु की ऐसी आदत थी कि कील हाथ में आयी नहीं कि बस घर की दीवारों पर ठोंक दें, ऐसा कहकर कि कभी कुछ टाँगने के लिए काम आयेगा। उसकी अम्मी खीजकर कहती कि क्या टाँगोगे? मेरा सिर? ये अंगड-खंगड़ का ठेला फेरकर पेट में भटकती भूख को तो मुश्किल से उन कीले पर टांग सकते हैं, और इसमें नया क्या लाकर इन कीलों पर टाँगोगे? हम खुद ही क्यों न इन कीलों पर टंग जाएं। या फिर हो सके तो कम से कम इस भूख पर ही एक कील ठोक दे। जिससे यह फिर खड़ी न हो पाये! ये भूख तो बिलकुल कुत्ते की जात की तरह सुबह-शाम लार टपकाती खड़ी हो जाती है।"

अब्बू कुछ भी बोले बगैर अपनी लुंगी को समेटकर दीवार से सटकर उकडू बैठकर दीवार में पड़े बड़े से सुराख में संभालकर रखी हुई, आधी पी हुई बीड़ी को जलाकर, कश लेकर धुआँ निकालते रहते। उनकी नजर दूर दिखती नदी पर चील की तरह चक्कर काटती रहती। जुबेदा को भी वही आदत लग गई थी। उलझ जाये तब नीचे के होंठ में तंबाकू भरकर अपने अब्बु की जगह ठीक उसी तरह उकडूँ बैठकर अपनी नजर को चील की नजर बना देती थी।

जुबेदा सर पकड़कर 'या खुदा' कहकर बैठ पड़ी:

"सलीम अब तक न आया! कब आयेगा?" वह कीलें गिनने लगी, "एक, तो, तीन... दस।" वह रुक गई। फिर से गिनना शुरू किया और फिर से दस पर आकर अटक गई। दस से आगे की गिनती उसे आती ही नहीं थी। वह कभी भी स्कूल नहीं गई थी। मदरसे में जाती थी तो कुरान पढ़ने। उसे दस के आगे की गिनती की जरूरत भी कभी नहीं पड़ी थी। उनके जमाने में दस रुपया तो बहुत होता था। दस में तो क्या-क्या आ जाता था! और दस में वह क्या-क्या बेच भी देती थी।

वह फिर से खड़ी हुई, चबूतरे पर आई। दूर तक देखा, शायद सलीम आ रहा हो। पर.... रास्ते पर चिड़िया भी नहीं फड़क रही थी, पूरा माहौल सुनसान था। वह सोच रही थी कि, जब रास्ते चलने के लायक हुए तो कोई चलनेवाला न मिले और जब कच्चे थे तब यहां कितनी हलचल रहती थी! चबूतरे पर खड़े रहते थे तो कोई न कोई बातें करने के लिए रोकता था। रास्ते पर रहनेवाले सभी लोगों को जुबेदा पहचानती थी और वो सभी जुबेदा को।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जुबेदा चबूतरे पर खड़ी-खड़ी ही पीछे मुड़ी। गढ़ के दरवाजे से दिख रही नदी पर उसकी नजर जाकर टिक गई। जिसमे शिलाएँ ज्यादा और पानी कम रहता था। उस नदी पर छोटा बाँध बाँधने से पानी चिक्कार भरा था। तैरती चट्टाने ऐसी लगतीं चार-पाँच भैंस पानी में तैर रही थी। दो-तीन बगुले उसे टोंच रहे थे। बाकी सब वही.... सुनसान! जुबेदा बड़बड़ा पड़ी: "सब कुछ उलट गया। पहले जब अकाल की वजह से नदी में पानी नहीं रहता था तब नदी औरतों और बच्चों से उफनती रहती थी और अब पानी भरी हुई रहती है तब बिलकुल खाली! रास्ते जैसी ही सुनसान!

उसकी नजर चारों तरफ चक्कर लगा के सामने किनारे पर पहुँच गई। शिवजी का मंदिर भी दोपहर की नींद ले रहा था, आसपास बन गयी सोसायटियों की ही तरह। उसकी नजर चक्कर काटकर वापस चबूतरे पर आ गई। फिर से ठहरी हुई नजर रास्ते पर दौड़ी। सलीम...सलीम... बड़बड़ा कर लू जैसा नि:श्वास छोड़ा। जिस तरह हम चटाई का बीड़ा बनाते हैं उसी तरह उसकी नजर रास्ते का बीड़ा बनाने लगी:

"ओ...हो...हो... नीचे तो कितने पैरों के निशान गड़े हैं! लगभग सारे जाने-पहचाने! वह पैरों के निशान गिनने लगी। दोनों हाथ भर गये। किसे छोड़े? उसने अपनी ओढ़नी बिछाई। बिने हुए पैरों के निशान उसमें डाले और बाँधी गठरी! आस-पास देखा, गठरी सर पर चढ़ानेवाला कोई नहीं था। पहले तो नदी में धोये हुए कपड़ों की बाल्टी को उसके सिर पर चढ़ाने के लिए जाने कितने-कितने लड़कों के बीच छीना-झपटी हो जाती थी, पर....जुबेदा की आँखें जिसे कहे सिर्फ वही हाथ बाल्टी को छू सकता था। नदी पर आने वाली दूसरी औरतें ये सब जानती थी पर जुबेदा को कुछ कहने की तो दूर उसके सामने देखने तक की हिम्मत तक किसी में न थी।

जुबेदा हाँफ रही थी। फिर उसे सलीम याद आ गया। वो होता तो उससे कहती कि चल ये गठरी घर में ले चल, कहीं फिर से गड़ जायेंगे। क्या.... सलीम ये पैरों के निशान घर में लाने देता? वो तो आगबबूला होकर कहता कि ये काफिरों के पैरों के निशान क्यूं घर में डालने है? फेंक इन्हें। कहाँ से उखाड़ लाई? अब मैं उसे कैसे समझाऊँ कि कहाँ से लाई हूं? और फिर पैरों के निशान तो पैरों के निशान होते हैं, वह थोड़े न हिंदू या मुसलमान होते हैं! हाँ, अगर वह कहे तो मरद के पैरों के निशान और औरतों के निशान तो अलग-अलग करके दिखा सकती हूँ। औरतों के पैर ज्यादातर सीधे ही पड़ते हैं। शायद ही कभी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
कोई पैर आड़ा पड़े। फिर तो उसे जीवनभर आड़ा ही पड़ना पड़े या फिर मिट्टी में मिल जाना पड़ता। या तो जुबेदा हो कर रह जाओ या सलीम की माँ जैसे मिट जाओ। जब कि मरद के पैर तो इधर-उधर हो जाते हैं! उसे कौन पूछनेवाला, देखनेवाला! और.... मरद के पैर तो वाचाल होते हैं! जिसकी बोली सिर्फ झुबेदाएं ही समझे! अब सलीम को कैसे समझाऊँ कि तू अपने को मुसलमान समझता है पर तू मुसलमान है नहीं और अपने आप को हिन्दू तू स्वीकार नहीं कर पाएगा। जुबेदा को कितनी बार आश्चर्य होता था कि ये सलीम इतना कट्टर कैसे हो गया? उसका वहम टी.वी. पर ही जाता है। वह खीजकर कहती कि ये टी.वी. में घुसकर बैठे हुए चूहे ही दोनों कौमों को कतरते हैं। इन्सान हैं कभी कभार लड़ भी पड़े पर ये चूहे काँव-काँव करते हैं, ऐसे फूँक-फूँककर काटते हैं कि दोनों कौम को पता भी नहीं चलता। इसलिए तो जुबेदा टी.वी को चरखा कहती और उसे 'चरखा' पसंद न था। सलीम की कट्टरता देख जुबेदा का मन करता था कि वह उसके जन्म की बात सलीम को कह दे, पर पूरी बात को मन ही में गाड़ देने के लिए मजबूर हो जाती थी। उसके नाना जी द्वारा किये जिंदगीभर के दाना-पानी के जुगाड़ की बात। पर जुबेदा कह नहीं पाती थी क्यूंकि वह जानती थी कि फिर सलीम न घर का रहेगा न, घाट का।

जुबेदा के अम्मी-अब्बू कब्र बन गये। जुबेदा ने सलीम को बेटा मानकर पाल-पोस कर बड़ा किया था। जब सलीम छोटा था, तब लगातार पड़ते अकाल से गाँव खाली होने लगा था। जुबेदा को वह परिस्थिति अच्छी लगी थी क्योंकि सलीम को सच बतानेवाले जितने भी कम होंगे उतना ही अच्छा। हुआ ये कि धीरे-धीरे बिखर रहे गाँव को भूकंप ने एक झटके में ही खलास कर दिया। पूरा गाँव खंडहर हो गया था। बचे-खुचे लोग भी शहर चले गये। रह गये जुबेदा जैसे गरीब-बेहाल लोग। जुबेदा का पूरा पड़ोस जमीन में गरक हो गया था। सलीम और जुबेदा बच गये थे। फिर भी..... अकेली पड़ गयी जुबेदा के मन में तब भी ये ख्याल आया था कि चलो सलीम की सच्चाई भी जमीन में गर्क हो गई।

जुबेदा के धीरे-धीरे पकते बालों की तरह सलीम भी बड़ा होता गया। और साथ-साथ अमरबेल जैसा पीला, जड़ विहीन धार्मिक जुनून उसके दिमाग पर सवार होता गया।

ढल रहे सूरज के आड़े हाथ धरके जुबेदा फिर से दूर तक देखने लगी: "सलीम तू आया क्यूं नहीं? शहर जाता हूँ कहकर गया सो गया, कितना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
रोका तुझे! वहाँ जाते हैं क्या, जहाँ इन्सान, इन्सान को मारे! पर मेरी बात तो तू सुनता ही कहाँ है? और उस दिन कैसे बड़बड़ा रहा था कि एक-दो को काटकर आऊंगा। जैसे किसी सुअर को काटना हो!" जुबेदा अंदर तक थरथरा गई।

दूर से दो लड़के आते हुए दिखे। जुबेदा की जान में जान आई, ये सोचकर कि सलीम ही होगा। वह नजदीक आये, "इन सालों को खत्म कर देना चाहिए" यह सुनकर जुबेदा पसीने से तर हो गई,

"या अल्ला, ये इन लड़कों को क्या हो गया है? मारो-काटो की ही बातें करते हैं, बेकार कहीं के...."

उसे सलीम की फिकर होने लगी: "माँ आशापुरा, तेरे सलीम को सही सलामत लौटा देना माँ। मैं तेरी चौखट पर दिया जलाऊंगी, सलीम के आने के बाद ही पानी पिऊंगी माँ।" वह सलीम के लिए जब भी मन्नत लेती तब आशापुरा माताजी की ही लेती, सलीम को यह पता न था। वह खुद से कहती, "जो भी हो लेकिन वह है तो हिंदू का ही खून, फिर उनके भगवानजी की ही मन्नत माननी चाहिए, और दूसरा, हिंदू भी ताजिये से मन्नत माँगते तो हैं न?"

वैसे देखें तो जुबेदा के घर की तीन ही दीवारें थीं, चौथी दीवार के रूप में गढ़ की दीवार थी। और उस दीवार की दूसरी ओर था माँ आशापुरा का देहरा, जिसके चबूतरे पर वह बचपन में खेलकर बड़ी हुई थी। कितनी सारी सहेलियाँ थी उसकी....कुसुम, आयेशा, रीना, भावना, झरीना....

सलीम जब छोटा था तब उसे सुलाते वक्त जुबेदा खास ध्यान रखती थी कि उसके पाँव माताजी के देहरे की ओर न रहें। सलीम बड़ा हुआ और जब उसे इस बात का पता चला तो वह जान बूझ कर उस ओर पाँव रखकर ही सोता। घर की चौथी दीवार के रूप में खड़ी गढ़ की दीवार पर थूकता। जुबेदा काँप उठती। वह सलीम को डाँटती और अंदर ही अंदर काँप उठती थी, बड़बड़ाती,

"अड़ियल, तुझे पता नहीं कि उसके पीछे देहरा है? अब्बु भी कभी गढ़-दीवार पर कील नहीं ठोकते थे। और तू?" जुबेदा आग बबूला हो जाती। सलीम उसकी भावना पर कील मारते हुए उसे पूछता: "ये तेरे अब्बू को काफिरों के मंदिर के पहलू में घर बनाने का कैसे सूझा?"

बिल्लाती हुई जुबेदा जीभ पर आई हुई बात को निगलकर कहती: "ऐसे नहीं बोलते बेटा! ये माँ आशापुरी ने ही हमें बचाया है। तू देखता नहीं कि

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
इतना बड़ा भूकंप आया तब सिर्फ इस मंदिर की दीवार को छोड़ पूरा गढ़ ढह गया, देखा ना? इसलिए तो हम बच गए। वरना हम भी जाते. जुबेदा आकाश की ओर इशारा करके बोली। सलीम फिर से एक बार गढ़ की दीवार पर थूककर घर से बाहर निकल जाता था। जुबेदा और तेज बड़बड़ाती जाती-

"बेशर्म, उच्छेदिया, जनमते ही माँ को खा गया, अब मुझे भी मार डाल, जिससे तेरे एक दो को मार देने के अरमान पूरे हो जायेंगे।"

जुबेदा बड़बड़ाती हुई गढ़ के दरवाजे में आकर खड़ी हो जाती। दूर पानी में पड़ी भैंस की आँखों को उसकी नजर टोंचने लगी। टोंचते-टोंचते आँखों के तह में से दारुण अकाल को खींच लाई:

शाम के आकाश में दो-तीन चील चक्कर काट रहे थे। सामने के किनारे के टीले पर कौए की टोली काँव...काँव... कर रही थी। सूखे थूहर की बाड़ के पीछे अस्त हो रहा लाल सूरज, कौए की उड़ाउड़ के बीच माँस के लौंदा जैसा दिख रहा था। सूखे-दरारोंवाले नदी के भाठे में खोदे हुए कुएँ के काँठे पर दो-चार औरतें पानी खींच रही थी। नजदीक की शिला पर बैठ के जुबेदा कपड़े धो रही है। दोनों काँठों से भरी हुई नदी की तरह उसका बदन हिल्लोरे ले रहा था। गले में ओढ़नी डालना तो जैसे वह सीखी ही नहीं थी।

.....सामने के किनारे पर बने मंदिर में आरती होने लगी। इसके प्रतिघोष के रूप में इस किनारे पर बनी मस्जिद में अजान उठने लगी। पानी से भरी हुई नदी पर से होकर आती ठंडी हवा जुबेदा को अंदर तक थरथरा गई। वह भूतकाल के कुएँ से निकल कर वापस सलीम की फिकर से घिर गयी। सफेद हो गये उड़ते बालों को हाथों से सँवारा। मुँह पर हाथ फिराया। उसे लगा मानो कि सामने के थूहर उसके अपने हाथों में उग आये हो! गिरने की हालत में खड़े, जर्जरित देहरे की ओर उसने देखा। देहरे के अंदर अँधेरा उतर रहा था। टूटा हुआ मिट्टी का दिया, जैसे बाती की राह देखता हो ऐसे जाली के पास पड़ा था।

वह निःश्वास के साथ वापस घूमी। चबूतरा चढ़ के घर में आई। घर में भी अँधेरा छा गया था। वह बड़बड़ाई :

"सलीमिया आजा... तू आये तो तुझे दिखाऊं कि देख माता के देहरे में और अपने घर में अँधेरे का रंग तो सरीखा ही है... देख....।"

और वह अँधेरे में ही अपनी जगह पर उकडू बैठकर नदी की ओर देखने लगी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

13.

कमु लकड़ी

"गर मेरे कहे पर भरोसा न हो तो अपने भांजे से पूछ लेना। आपका भांजा है, आपसे झूठ नहीं बोलेगा" कमु का बोलना पूरा हुआ तभी पीछे से आवाज आई, "क्या मामी! मुझे याद किया जा रहा है न! भांजा आप दोनों का ही हूं, हाँ, बचपन में मामा के डर से कभी उनके सामने झूठ बोला होगा पर आपके सामने तो कभी नहीं, कदापि नहीं। और आपको ऐसा लगे!"

"ठीक पहुंचा भांजा, ये तेरी मामी मेरा भेजा खा गई है, कोई बात समझती ही नहीं है।"

"मुझे खबर मिली इसलिये तो आया"

दोनों कुछ समझ पाये इससे पहले तो कमु दौड़ी, "हेई..हट..हट..हीई..."

"देखा न, भांजे! देखा तूने? पूरे दिन ऐसे ही दौड़ती रहती है, थकती नहीं है, बोल! जितनी लंबी उसके हाथ में लकड़ी है उतनी ही लंबी छलांगें भरती दौड़ती रहती है, इस मेंड़ से उस मेंड़ तक। क्या पता कैसे उसे दूर से ही नीलगाय की गंध आ जाती है! लकड़ी ले कर दौड़ती रहती है हट.. हट ही..ई, करती। और लगता है नीलगायों को भी इसकी गंध आती लगती है, इसकी, 'ए ही.हट.. हट.. हट' आवाज सुनकर वो झुंड भी दूर से ही भागता है। कहाँ गाँव का घर छोड़कर यहाँ खेत में रहने को आ गए वही समझ में नहीं आता। गाँव के रखडू लड़कों ने उसका नाम रख दिया है कमु लकड़ी! वैसे तो कमु पूरे गाँव की लाड़ली थी पर जब भी देखो उसके हाथ में लकड़ी होती ही होती है, तो लाड़ली का लकड़ी हो गया! "

"मामा! अब छोड़ो न वो पुरानी बातें। गाँव की सीमा में तो है खेत। बाकी मामी तो उस घर से भी आती, इन नीलगायों को खदेड़ने, बोलो कुछ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
कहना है? ये नीलगायें भी गिर का जंगल छोड़ कर यहाँ तक आ जाएँगी, यह कभी किसी ने सोचा भी था क्या?"

मामा चुप हो गये। मन ही मन में सोच रहे थे कि खेत में से होकर कभी सरकारी पक्की सड़क निकलेगी यह भी कहाँ सोचा था! लकड़ी जितने लंबे डग भरती आती हुई मामी को भांजा देखता रहा। वो हँस पड़ा। वह कमु ने देख लिया। नजदीक आकर हांफते हुए बोली,

"क्यो रे! क्यों हँस रहा था, भांजे? तेरे मामा ने कुछ कहा होगा। "

"ये तेरा वेश देखकर किसी को भी हँसी आये रे!" कमु का पति चिढ़ कर बोला।

कमु लकड़ी का टेका लेकर खड़ी थी। खींचतान कर बनाये हुए बालों के जुड़े से उसका कपाल ज्यादा बड़ा और उभरा हुआ लगता था। और पीछे गर्दन से जुड़े बाल झड़ गये थे, इसलिये जुड़ा लटके हुए नारियल जैसा लगता था। गुजराती ढंग से पहनी हुई साड़ी का पल्लू बगल से अंदर लेने की बजाय वो हमेशा बाहर से लेती थी और साड़ी की पटलियों को हमेशा धोती की तरह कच्छ लगाये पीछे खोंस देती थी। (साडी को) मतलब दौड़ लगाने की तैयारी में ही रहती। और हाथ में खुद के कद जितनी ही लकड़ी थामे रहती। इसलिये तो उसका नाम कमु लकड़ी पड़ गया था। ठेठ चौथे या पाँचवे खेत से नीलगायें खेत में घुसने लगी कि आवाज उठती और कमु लकड़ी लेकर दौड़ पड़ती। उसे दौड़ते हुए देखना अपने आप में एक आनंद है, ऐसा गाँव वालों का कहना था। उसकी चपेट में कोई न आ जाये इसका ख्याल रखते हुए सारे एक ओर खड़े रह जाते। वह जब नीलगायों को खदेड़ कर वापिस आती तब हँसती हुई आती और कहती कि, "मेरी गंध से ही भाग जाती है निठल्लियाँ।" और उसके हँसने में दूसरे भी जुड़ते थे। कमु के चेहरे पर पड़ी हुई झुर्रियां थोड़ी ओर गहरी होती, गाल के खड्डे ओर गहरे हो जाते, पकी लौकी के बीज जैसे दाँत ज्यादा बाहर दिखते। और उसका चेहरा खेत में पड़े मिट्टी के ढेले जैसा लगता, खुरदरा।

"क्या, मामी! नीलगायों को खदेड़ आयी? क्या दिन आए हैं! पहले घर की गाय-भैंस को चारागाहों में ले जाना पड़ता था और अब ये नीलगायों को खदेड़ने जाना पड़ता है!"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भांजे ने मौका देखकर निशाना साधा। कमु अभी भी हाँफ रही थी। इस मौके का फायदा मामा ने भी लिया, "सुनती कहाँ है किसी की, ये भी कोई उमर है इसकी दौड़ने की? कमु लाड़ली थी पूरे गाँव की, अब कमु लकड़ी हो गई सभी के लिये पर..." मामा थोड़े रुककर फिर बोले, "तीन-तीन पीढ़ियों से घुट्टी हुई लुगइयाँ हठ है यह।"

कमु की साँस सामान्य हुई थी। भांजा समझ न पाया पर कमु न समझे ऐसा हो सकता है भला! यह बात तो उसने अपने पति के मुँह से कितनी बार सुनी थी।

बात ऐसी थी, कि कमु, उसकी माँ और नानी, तीनों अपने माता-पिता की इकलौती बेटियाँ थी। तीनों के वर घर दामाद बनके आये थे। तीसरी पीढ़ी में कमु को लड़का हुआ था। इस बात का उसके वर को बड़ा घमंड था! कमु को गर्व से कहता कि, "ले तेरी तीन पीढ़ियों को तार दिया। बेटियों से तो क्या पीढ़ी चलती होगी!"

कमु खीज कर कहती, "क्यों न चले? आप झख मारकर आये न? वो तो बेटा हुआ इसलिये, अगर बेटी होती तो आपके जैसा कोई न कोई तो आता ही, समझे?"

"वो तो तेरे खेत को देखकर। बाकी तेरे चेहरे में रखा ही क्या है?"

"किसे पता नहीं, हं? सब जानते हैं। और आप अकेले थोड़े हो! सब मरदों की नजर ससुर की मिलकत पर ही होती है। इसलिये तो दहेज माँगते हैं।" कमु का पति यह सुनकर चुप हो जाता।

O

भांजे ने अपने मामा-मामी की ये सब बातें बहुत बार सुनी थीं इसलिए कोई आश्चर्य न था।

"देखो मामी! खेत तो सरकार को देने ही पड़ेंगे। वह तो श्रीसरकार के होकर ही रहेंगे। यह कानून है कि जन कल्याण के लिये सरकार खानगी जमीन पर कब्जा कर सकती है, इसमें किसी की एक नहीं चलेगी।"

"क्यों? खेत क्या सरकार के बाप के हैं? कौन जाने कितने पुरखों के पसीने से सींचे गये हैं ये खेत, तब जाकर नरम मक्खन जैसे हुए हैं। जो भी डालो वह उग आये वह यूँ ही नहीं, भांजे!

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"इस बात से कौन इन्कार करता है, मामी! पर सरकार जमीन संपादित करे तो खेत देने ही पड़ते हैं। बदले में तय किया हुआ भाव तो मिलेगा ही।"

कमु की आँखों में गुस्सा उबल रहा था, उसमें हंसिए जैसे काट देने वाली धार खड़ी थी। भांजे ने नजर फेर ली।

"सुन, भांजे! तू ही तो कहता था न कि जिसने खेत बेच डाले वे किसान मालामाल हो गये। रात ही रात में मोटरियां और फटफटिया के शो रूम आ गये गाँवों में, और सराफे और फ्रिज और वॉशिंग मशीन ..ऐसा सबके शो रूम तो बेहिसाब! तूने ही तो बताया था, बताया था कि नहीं, बोल?"

"मामी! उसमें और इसमें फर्क है। वह तो अमरबेल जैसे बिल्डर्स को खेत बेचे उसकी बात अलग थी। और यह तो सरकार को देने की बात है।"

"वो सरकार भी अमरबेल तो है भांजे! जहाँ नजर डाले वहाँ सब कुछ साफ!" दोनों हथेलियों से साफ का इशारा करते हुए कमु बोली।

मामी-भांजे की दलीलबाजी से उकताए हुए कमु के पति को चाय याद आ गई:

"छोड़ यह बार-बार की झंझट, चाय बना ला जरा।"

"थोड़ा थम जाओ मामी! दूसरे भी आ रहे हैं। आये तब चाय रखना। अगर सरपंच के ऑफिस पर ही इकट्ठा होने का हुआ तो फिर वहीं पियेंगे।"

"मतलब? दूसरे कौन, भांजे?" कमु ने लकड़ी को एक हाथ से दूसरे हाथ में लेते हुए पूछा।

"सरकारी बाबू लोग। कमु के मिट्टी के ढेले जैसे चेहरे की झुर्रियां और ज्यादा गहरी हो गई, आँखें बाहर निकल आईं और वह गुर्राई: "मैंने कितनी बार कहा कि मैं अपने खेत नहीं दूंगी। कभी नहीं। आप समझते क्यों नहीं, करण के पापा?"

इतने में करण भी वहाँ हाजिर हो गया। करण कॉलेज में पढ़ता था और शहर में पेइंग गेस्ट की तरह रहता था। सरकार के जमीन संपादन में उनका खेत भी जा रहा है यह जानकर वो खुश हो गया था। वो जानता था कि वह खुद तो खेती करनेवाला है नहीं। सामने रुपये का ढेर है पर बीच में मम्मी डंडा लेकर खड़ी है। यह जानकर उसके गुस्से का कोई ठिकाना नहीं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

था। पापा तो तैयार ही थे। उन्हें इस खेती की ढोर मेहनत से छूटना जो था। अकाल या भारी बारिश और ऊपर से सरकार के भाव के बारे में टालमटोल के कारण वो भी दूसरे किसानों की तरह खेती से थक चुके थे। और उन्हें इस खेत के लिये कोई मोह-माया न हो वह भी स्वाभाविक बात थी, क्योंकि घर जमाई जो ठहरे। लेकिन कमु के लिये यह खेत सिर्फ जमीन का टुकड़ा न था। कमु के लिये तो यह उसकी आदिमाता थी, जिनकी वजह से इनकी न जाने कितनी पीढ़ियाँ पली-पोसी और बड़ी हुई थीं! उन्हें सरकार कैसे ले सकती है!

जीन्स और गॉगल्स पहने बैठा करण किसी फिल्मी हीरो की अदा से बाइक पर से उतरा। गॉगल्स को माथे पर चढ़ाते हुए बोला: 'कैसे हो दिनेश भाई? मम्मी के साथ बात की?'

'क्या करे, मिट्टी और ढेला? तेरी माँ नीलगाय को हाँकने से फुर्सत ले तो बात करे न?"

कमु के पति मगन भाई बोले पर उनके भांजे दिनेश ने उनको हाथ के इशारे से चुप रहने को कहा तो मगनभाई चुपचाप चलने लगे।

"हेय, मामा! चले कहाँ? अभी आएंगे सब। सरपंच के साथ मीटिंग रखी है। आज फैसला हो जायेगा।"

"ले जाना ये तेरी मामी को और करण को। मेरी जमीन नहीं है और मेरा चलता भी क्या है? तू ही बोल, भांजे।"

भांजा ठहाके से हंस पड़ा। कमु को, करण को या तो मगनभाई को कुछ समझ में नहीं आया कि वह क्यों हँस रहा है!

"हँसा क्यों, भांजे?"

"मेरे मामा बोले वह सुना नहीं! जैसे लुगाइयाँ बोलती हैं ठीक इसी तरह से ही तो बोले मामा, कि मेरा चले भी क्या?" वो फिर से हँसने लगा। मगनभाई और करण भी हँस पड़े। कमु ताली बजाकर बोली: "अच्छा लो, एक मरद को तो समझ में आया कि ससुराल का मतलब क्या होता है और अपना कुछ भी नहीं यह मतलब भी समझ में आया?" बोलते हुए कमु ने साड़ी का खोंसा हुआ पल्लू निकाला, खींचा और फिर से खोंस दिया। कुछ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
भी ढीला-ढीला उसे पसंद नहीं था। इसलिए तो बाल भी खींच खींच कर बाँधती थी इसलिये तो बाल झड़ गये थे।

"मामी! आप कहाँ तक पढ़ी हो?" मामी की यह नारीवादियों जैसी बात सुन भांजे को आश्चर्य हुआ। वैसे तो वह भी नारीवाद के बारे में कुछ ज्यादा नहीं जानता था पर फेसबुक के जरिये उन्हें पता चला था कि नारीवाद क्या है। इसलिये तो मामी की बात सुनकर उसे आश्चर्य हुआ था।

"दसवीं पास बाद में हरि हरि.." कमु दोनों हाथ ऊँचा करके बोली। और वो तीनो लोग कमु की बात पर हँस पड़े।

"मामी! अगर पास हुई तो फिर आगे क्यों नहीं पढ़ी?"

अरे, भांजे! दस के बाद की पढ़ाई गाँव में नहीं थी इसलिए आगे की पढ़ाई नहीं कर सकी। माँ-बाप के साथ मैं भी लग गई खेत के काम में। खबर नहीं थी कि मेरे ही हाथों यह मेरी माँ की मिट्टी जैसे खेत यूँ .." कमु रो पड़ी। करण और मगनभाई के मुँह बिगड़ गये, दोनों की आँखों में गुस्सा आ गया पर अभी इस समय कमु को छेड़ने में कोई मतलब नहीं है। यह बात दोनों जानते थे इसलिये दोनों चुप रहे। कमु का विरोध करण को कँटीली बाड़ जैसा लग रहा था। सामने ही लहराती फसल दिख रही थी पर वह फसल काटने बाड़ में छेद नहीं कर सकता था, इसलिये तो बुआ के बेटे को बुलाया था।

भांजे ने पानी लाकर कमु को दिया। पानी पी कर कमु फिर लकड़ी का टेका ले कर खड़ी हो गयी।

कमु के पति मगन भाई कुछ बोलने जा ही रहे थे, कि तभी इतने में एक लड़का बुलाने आया तो वो सरपंच के ऑफिस की ओर चलने लगे। कमु वहाँ पड़ी हुई खटिया पर बैठ गई। उसकी नजरें पूरे खेत पर घूमने लगीं। और खेत की मेंढ़ पर उगाई नागफनी में ऐसी उलझी कि घायल हो कर लहूलुहान हो गई। मानो आंखों में से रक्त टपक रहा हो! उसने मुट्ठी भींच ली। उसे लगा कि मेरा भी अगर एक भाई होता, तो यह झंझट मेरे पर न होता। अपने ही हाथों अपनी माँ को.. इससे आगे वह सोच न सकी। अचानक कुछ याद आया और वह खड़ी हो गई। घर में जाने को चली और वो लड़का वापिस आया कमु को बुलाने,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"कमु मौसी, आपको बुला रहे हैं सरपंच चाचा।"

थोड़ी देर कमु ऐसे ही खड़ी रही। इसके हाथ की लकड़ी की पकड़ ढीली होती जा रही थी। नजरें घूम-घूम कर खेत को आँखों में भर रही थी जाने कितने-कितने अकाल इस खेत ने झेले होंगे! कितनी मूसलाधार बारिश और कातिल ठंड! तो भी खेत तो खेत ही रहा! अरे टिड्डे के झुण्ड आये, पूरी फसल को रात ही रात में नष्ट कर जाते पर खेत को लेकर उड़ न पाये! खेत तो यहां का यहां ही रहा। और यह इन्सानों के झुण्ड कहाँ से उतर आये मेरे खेत में! कहते हैं कि सरकार को रास्ते चौडे करने हैं, विकास करना है, बोल! मुए! फिर क्या कारखानों में अनाज उगाएंगे?"

लकड़ी की पकड़ फिर मजबूत हुई थी। खुद में जितनी ताकत थी सारी इकट्ठी करके लकड़ी को सरपंच की ऑफिस की ओर फेंकते हुए वह बोली, "अपनी माँ के खसम! लकड़ी थोड़ी दूर पड़ी और वह गुलाटी खा कर ओंधी गिर पड़ी। कमु फिर खेत को देखने लगी। जैसे हाथ में मिट्टी का ढेला लेकर नमन करती हो ऐसे सिर पर चढ़ाया, सूंघा और आंखें मूंद ली। आंसू ढेले पर पड़े। मिट्टी की सौंधी सुगंध उसके नाक में गई। माँ की छाती जैसी चिर-परिचित सुगंध से उसने फिर से आँखें खोली, हाथ फैलाकर लकड़ी को फंफोसा। थोड़ी दूर पड़ी लकड़ी नजर आई। खुद को घसीटते हुई लाठी के पास आई। लाठी को पकड़ा, धीरे-धीरे लाठी के सहारे खड़ी हुई। अपनी ठोड़ी को लकड़ी पर टिकाते हुए अपने खेत की ओर एकटक देखने लगी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

14.

पोस्ट मास्टर

पोस्टमास्टर दौड़े। गाड़ी के आने का समय हो गया था, और अभी तक वे घर पर ही थे। जिस तरह कोई बच्चा अपने माँ-बाप के साथ गाड़ी में मुसाफिरी कर रहा होता है जब किसी स्टेशन पर गाड़ी रुकती है और उस के पिता गाड़ी से नीचे उतरते हैं प्लेटफॉर्म पर, तब वह बच्चा घबरा जाता है कि कहीं गाड़ी छूट न जाए और पिताजी रह न जाएँ, अगर रह गए तो? बस, ऐसी ही घबराहट आज पोस्टमास्टर को हो रही थी कि कहीं उनके पहुँचने से पहले गाड़ी आकर निकल न जाए?

ओह! पाँच-पाँच साल तक वह चक्कर काटता रहा और हम निर्दय होकर उस पर हँसते रहे! पर हम ऐसा कर कैसे सके! मैं! मैं उसकी पीड़ा समझ न पाया! लानत है मुझ पर!

गाड़ी की सीटी सुनाई दी और हंसा का स्थान मरियम ने ले लिया। "मरियम....ये आया, बेटी बस पहुँचा ही। वहीं पर खड़ी रहना, बेटी!"

प्लेटफॉर्म पर पंजाब मेल और पोस्टमास्टर साथ-साथ ही पहुँचे। एंजिन में से निकलती भाप की तरह उसकी साँसें चल रही थीं। फिर भी उन्हें राहत महसूस हुई। वे मरियम को ढूँढ़ने लगे। व्याकुल हो उठे थे मरियम से मिलने के लिए। भले ही पहले कभी मरियम को देखा न था पर बगल में तीन साल के बच्चे वाली मुस्लिम महिला पहचानी तो जाती है। वे खुद ही खुद को आश्वस्त कर रहे थे। गाड़ी में से कोई ज्यादा मुसाफिर उतरे तो न थे। फिर भी मरियम दिखायी न दी! मन ही मन बड़बड़ा पड़े, "बेटी मरियम मैं आया हूँ, हं...चली मत जाना मेरी माँ!"

वे अपनी सुध-बुध खो बैठे थे। मानो बूढ़े अली की आत्मा उनमें प्रवेश कर गई हो।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गाड़ी छूटने की सीटी बजी। और उनके मुँह में से चीख निकल गई, "म...रि...य...म...।" गाड़ी चल दी। आसपास खड़े लोग उनकी ओर देखने लगे पर उनका ध्यान कहाँ था! नजर को इधर-उधर दौड़ाते हुए दो कदम आगे चले। गाड़ी ने प्लेटफॉर्म छोड़ दिया था। उनका मन काँप उठा। मरियम आई ही नहीं क्या? उन्होंने ऊपर आकाश की ओर देखा, हाथ जोड़े, प्रार्थना की, "प्रभु मेरे! इस बुड्ढे की लाज रखना। वह नरसी मेहता की बेटी का मामेरा (शादी के समय मामा की ओर से दिए जाने वाले कपड़े-गहने) किया था तो क्या मेरी बेटी का इतना सा काम नहीं करेगा?"

जितने जोश से दौड़ते आये थे उतना जोश अब पाँव में नहीं रहा था। पाँव जैसे झूठे पड़ गए थे। वे बाँवरे हो गए। फिर बड़बड़ाने लगे, "मैं ही पापी हूँ। मेरा भगवान मेरी थोड़ी सुनेगा। कृष्ण मुरारी...हरि...हरि...कान्हा सुन...थोड़ी मेरी भी सुन...।"

इतने में आँखों के आगे आ गए आँसू के परदे के आर-पार उसने देखा कि दूर पीपल के पेड़ के तने से सटकर चुनाई किए हुए सीमेंट से बने चबूतरे पर कोई औरत बैठी है और उसके पास में छोटा-सा बच्चा खेल रहा है। फिर से उनके पाँव में जोश आ गया। जान में जान आ गई। उन्होंने आवाज दी, "मरियम...मामूद..."

वह औरत खड़ी हुई। आवाज की दिशा में देखने लगी। देखा कि कोई दौड़ता आ रहा है। पर नहीं, यह तो अब्बू तो नहीं हैं। मेरे बिरह में अब्बू मर जाएँ पर इतने मोटे तो न हो जाएँ! तो फिर आवाज किसने दी? या मुझे ऐसा लगा कि किसी ने आवाज दी! मेरा खत नहीं मिला होगा अब्बू को? पोस्ट के घोटाले कौन नहीं जानता? कभी-कभी सुनते हैं न कि बरसों बाद चिट्ठी मिली। पंजाब की सरहद पर तैनात अपने शौहर के शब्द याद आए, "सरकारी कर्मचारी मतलब सरकारी ऑफिस में बरसों से धूल खाते हुए गट्ठे। खुद ही खुद को गठरी बना देते हैं फिर निवृत्त हो कर भी छूट नहीं पाते। डाकिए को कहाँ पता होता है कि वह सिर्फ डाक नहीं बाँटता पर बिरह में तड़पते इंसानों की आँसुओं में सराबोर भावनाएँ भी बाँटता है।"

पोस्टमास्टर नजदीक आए। उसे देख मामूद मरियम के दो पाँवों के बीच छुप गया और कनखियों से देखने लगा। मरियम भी टकटकी लगाकर देखने लगी। उसे तो विश्वास हो गया कि उन्होंने ही आवाज दी थी। पर उसकी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
नजर दूर...प्लेटफॉर्म पर अपने अब्बू को ढूँढ़ने लगी। मुझ से रूठ गए क्या? ना...ना...नहीं, मेरे अब्बू मेरे से रूठ नहीं सकते। हो ही नहीं सकता। क्या मैं मामूद से रूठ पाऊँगी? न तो! फिर तो अब्बू जरूर बीमार होंगे। उसका दिल अब घबराने लगा। पोस्टमास्टर कुछ बोले उससे पहले तो वह बोल पड़ी, "अब्बू?"

यह एक शब्द का बना प्रश्न पोस्टमास्टर को पहाड़ जैसा लगा। मुश्किल से उसे लाँघते हुए बोले, "मरियम, अब्बू नहीं आ पाएँगे।"

"क्यूँ? बीमार हैं क्या? मैं नहीं मानती। अरे! मैं आ रही हूँ यह जानकर खटिया से तो क्या कब्र में से भी खड़े होकर दौड़े आएँगे। मैं न पहचानूँ उनको?"

पोस्टमास्टर का हृदय धड़कना जैसे बंद हो गया। उन्हें लगा जैसे कि अली ने करवट बदली। अपने आप को सँभालने के लिए थोड़े झुके और मामूद को गोद में उठाने लगे। मामूद अपनी अम्मी को जोर से चिपक गया।

"वह नहीं आएगा, अनजान लगते हो न इसीलिए। मैं खुद भी आपको नहीं पहचानती हूं। आप कौन हो? पहले कभी हम मिले हैं ऐसा मुझे याद नहीं आता।" पोस्टमास्टर क्या जवाब दे? मरियम ही आगे बढ़ी, "आप. ..आप..." कुछ याद करने लगी। याद नहीं आ रहा था, क्योंकि मन तो अब्बू...अब्बू की माला जप रहा था। कैसा-कैसा, क्या-क्या सोचकर रखा था कि जाकर मामूद को उनकी गोद में थमा दूँगी। अब्बू एकदम पहचान जाएँगे। मामुदिया को चुम्मियों से नहला देंगे। फिर मुझे भी अपनी बाँहों में भर लेंगे। पर...अब्बू तो आए ही नहीं। भले-चंगे तो छोड़कर गई थी। कितनी बार बोलती थी कि अब्बू दूसरी शादी कर लो, मेरे बाद आपका कौन है? पर नहीं। किसी की भी सुने तो अब्बू अब्बू कैसे?

"मरियम मैं..."

मरियम उनको रोकते हुए बोली, "आप वही व्यापारी हो न जिसे अब्बू पंछी बेचा करते थे? वही हो न आप? दूसरे और तो कोई याद में नहीं है।"

पोस्टमास्टर मन ही मन बोले, "तूने सही पहचाना। मैं शिकारी ही हूँ, दूसरों की भावनाओं का शिकार करनेवाला। भावनावश किसी को तड़पता देख पिशाची आनंद लेने वाला शिकारी।"

"मरियम मैं तुझे लेने आया हूँ। तेरा अब्बू मुझे कहकर गया है।" कहते हुए उसने थैला उठाया। मरियम को थोड़ा विश्वास बैठा तो वह मामूद को उठाकर उनके पीछे चल पड़ी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तीनों तांगे में बैठे। मरियम की नजर पाँच साल पहले के गाँव को ढूँढने लगी। साथ ही मन में छुपी आस भी सही कि शायद किसी पेड़ के पीछे से या किसी मकान की आड़ में छिपे अब्बू दिख जाएँ और...

पलकों पर ठहर गए आँसुओं को ओढ़नी से पोंछते हुए बोली, "सब कुछ बदल गया है, है न चाचा?" फिर बड़बड़ाई, "अब्बू भी!"

"हाँ बेटी, पाँच साल तो बहुत लंबा समय है।, दुनिया तो पलभर में बदल जाती है।"

"सच में।"

तांगा गाँव के फाटक के अंदर जाने की बजाय सीधा ही चलता रहा तो मरियम से रहा न गया, "उधर कहाँ लेते हो? मेरे घर जाने के लिए फाटक में से जाना पड़ता है।"

"हाँ...हाँ...बेटी, पर पहले मेरे घर तो चल। बाद में चलते हैं न, तुम्हारे घर अपने अब्बू से मुझे क्या डाँट दिलानी है?" पोस्टमास्टर हो...हो...कर हँसे। "तुझे तो बहुत याद है।"

"ये...लो...! बचपन को कौन भूल सकता है? इस गाँव और इस जगह को जिया है मैंने जन्म से लेकर आज तक। सपने में भी इन्हीं गलियों में ही दौड़ती-भागती रहती हूँ। काँच के कंचे जैसा समय, मनरूपी जेब में खड़खड़ाता रहा, पर खेल न पाई। कब्र में भी यह सब याद आएगा, कयामत के बाद खुदा जाने..."

"लेकिन चाचा, मुझे पहले अपने घर जाना है। अब्बू आएं जब तक तब तक मैं घर की सफाई कर लूँ, कौन जाने पाँच साल में अब्बू ने घर की क्या हालत बना डाली होगी! कोई कहनेवाला, देखनेवाला तो है नहीं।"

मरियम की हर एक बात में अब्बू का अकेलापन प्रतिबिंबित हो रहा था। दूर रहकर भी अपने परिवार के साथ-साथ वह अपने अब्बू के अकेलेपन को भी जीती थी यह साफ दिखाई दे रहा था।

"वैसे भी अब्बू को ताला लगाने की आदत तो है नहीं। कहते हैं कि हमारे पास है भी क्या कि कोई ले जाए? बस अल्लाताला की मेहरबानी है, इसे कौन ले जा सकता है।"

इतने में तांगा दूर निकल गया। मरियम चुप हो गई। उसके चेहरे पर लिपा दुःख पढ़ा जा सकता था कि, दौड़कर अब्बू तो न आए पर...दौड़कर घर में समाने का सुख भी नसीब नहीं?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पोस्टमास्टर फिर से हंसा के पास पहुँच गए।

हंसा को ससुराल विदा करते समय की घुटन आज फिर से हृदय में उमड़ने लगी, गले में खखार बैठ गया। लगा कि अगर आज ये आँसू नहीं बहे तो हृदय बंद हो जाएगा। पत्नी के शब्द याद आए, "आप तो बहुत ज्यादा नरम दिल निकले। आपकी बेटी ही अकेली ब्याह के विदा हो रही है क्या? मैं भी आई थी न? सब की बेटियाँ जाती हैं न?" अपने पिता और पति के दुःख को जोड़कर, उसने दुःख को आधा कर लिया और पति के कन्धे पर माथा रखकर रो पड़ी थी। पोस्टमास्टर की आँखों ने भी आँसुओं का बाँध छोड़ दिया था। पुरुष जिंदगी में एक बार ही रोता है, वह बेटी की विदाई के समय।

तांगा पोस्टऑफिस के सामने रुका। वे नीचे उतरे। मामूद के सामने हाथ धरे, मामूद तुरंत उनके पास चला गया। "चल बेटी! घर आ गया।" मरियम यंत्रवत नीचे उतरी। पोस्टऑफिस को देखती रही। शायद विस्मृति की कोई परत गिरे और पीछे से कोई स्मृति झाँक आए। पर ऐसा कुछ न हुआ और वह पोस्टमास्टर के पीछे-पीछे उनके घर में चली गई।

पोस्टमास्टर ने चौकीदार रामजी को आवाज दी फिर मरियम से बोले, "बैठ बेटी! बैठ बेटी! बैठ। थक गई होगी। और बता दामादजी कैसे हैं, कहाँ हैं?"

"ठीक हैं। अभी पंजाब बॉर्डर पर पोस्टिंग है।"

"नाश्ता पानी करके तू भी नहा ले और मामूद को भी नहला दे।"

"अब्बू?"

मरियम की घुटती आवाज पोस्टमास्टर को बींध गई। वे विह्वल हो उठे। मरियम का एक शब्द का प्रश्न "अब्बू?" यह एक शब्द उनको नचिकेता के प्रश्न जैसा लगा जिसने यमराज को हैरान-परेशान कर दिया था। यहां उन्होंने खुद को यमराज की स्थिति में पाया।

"मरियम बेटी ! बैठ। तूने मुझे चाचा बोला है, तेरे अब्बू का दोस्त हूँ, अब्बू ही समझ मुझे। इसे अपना घर समझ बेटी, बैठ।"

रामजी पानी लेकर आया। मरियम बैठी, मामूद को पानी पिलाया बाद में खुद एक ही घूँट में पूरा गिलास पी गई। अब्बू की छाती को सराबोर करने के लिए जो आँसू पाँच साल तक सँजों के रखे थे दिल में, वे भी पानी के एक घूँट के साथ पी गई।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"मरियम तू और मामूद नहा लो, बाद में खाना..."

"नहीं, अब्बू आएँगे तब। घर जाकर।" मरियम कुछ सुनने को तैयार न थी। पोस्टमास्टर को उसके स्वभाव में बूढ़े अली की झलक दिखी। राह ताकते रहना कभी, न थकने वाली।

"अरे! आएगा जरूर आयेगा, तेरा तो अब्बू है पर मेरा तो दोस्त है न, तेरे जन्म के पहले से पहचानता हूँ उसे। उसका कहाँ कोई ठिकाना होता है? पहले से बेफिक्र, अब तो तू भी यहाँ नहीं रहती ज्यादा...।"

पुरानी पहचान दिखाने के लिए पोस्टमास्टर ने ऐसा बोल तो दिया पर अपने खुद के शब्दों का खोखलापन उन्हें काँच बनकर चुभने लगा।

खिड़की में से पोस्टऑफिस की सीढ़ी और सीढ़ी पर माथा टेककर बैठने की अली की आदत से दीवाल पर माथे के आकार का पड़ा हुआ धब्बा उन्हें दिख रहा था। वह धब्बा उन्हें गाँव के बीच में खड़े शहीदों के स्मृति स्तंभ जैसा लग रहा था जिसके नीचे अशब्द शैली में अपने आप छप आया "बेटी के खत की राह देखता हुआ एक बाप यहाँ शहीद हो गया।"

आँखों में आए आँसू पता भी न चले ऐसे पोंछ डाले। पर नजर वहाँ चिपक गई थी। उन्हें लगा जैसे कि वह खुद वहाँ बैठे हैं बेटी के इंतजार में, जो किसी की भी बेटी क्यों न हो। फिर उन्होंने मरियम की ओर देखा। वह गुपचुप बैठी थी पर आँखों में इंतजार खचाखच भरा था। उन्होंने ठंडी साँस ली और छोड़ी। फिर मन ही मन बोले, "बेटी! तुझे मालूम नहीं कि पाँच साल तक राह तकने का मतलब क्या होता है? और वह राह भी जब अपनी बेटी की हो...तब...?" जैसे माला जपते हों, ऐसे उनके होंठ फड़फड़ा रहे थे। मामूद को गोद में उठाया और रसोई में से बिस्कुट ला कर दिया। मामूद अपने छोटे से मुँह पर अपनी हथेली की थपकी लगाकर बोल रहा था, "अ...ब्बू...अ...ब्बू..."

मामूद को लेकर वे पीछे की खिड़की के पास गए, "देख मामूद, तेरी अम्मी और तेरी हंसा मौसी जब छोटी थीं तब उस पेड़ के नीचे खेला करती थी।"

मरियम को जिज्ञासा हुई। वह खड़ी होकर पीछे आई। सामने विशाल बरगद का पेड़ दिखाई दे रहा था। उसने दिमाग पर जोर डाला पर याद न आया कि कभी वो यहाँ खेला करती थी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"चाचा! आप से, चाची से या हंसा से मैं कभी भी मिली हूँ ऐसा मुझे याद नहीं आता। और चाची और हंसा कहाँ हैं?"

"हंसा को बच्चा होनेवाला है, तेरी चाची उसके पास गई हैं।"

"अब्बू...अब तक न आए?"

"अरे बेटा आएगा, दूर गया है, आते-आते वक्त तो लगेगा न? बाकी रोज आकर ऑफिस की सीढ़ियों पर बैठ जाता है, तेरी राह तकता रहता है। पूरा गाँव जानता है कि बूढ़ा अली कहाँ मिलेगा। कोई पूछे तो कहते हैं कि पोस्टऑफिस की सीढ़ी पर। वह बस जैसे उसका ठिकाना बन गया है।"

मरियम की नजर पोस्टऑफिस की सीढ़ी देखने के लिए बाँवरी हो गई। पोस्टमास्टर अपनी गलती को समझ गए। बात बदलने के लिए बोले, "गाँव-गाँव घूमा हूँ, नौकरी के चक्कर में। अब जब निवृत होने को हूँ तो वापिस अपने गाँव आ गया हूं। अली के साथ मजा आता है। वह तेरे और मैं हंसा के बचपन की बातें करते हैं, अपनी जवानी के दिन याद करते हैं, और क्या करें हम बूढ़े लोग?" "तेरी खबर पूछी तो पता चला कि पाँच साल हुए ब्याह को, पर न कोई खत न कोई खबर! बेटी ससुराल में हो और कोई खबर खत न आए तो मान लेना चाहिए कि मजे में होगी। और चाहिए भी क्या?"

"बेटियों को दूर ब्याह दो और कोई खबर न आए तो मान लेना कि सुखी होगी! मन मनावन अच्छी ढूँढ ली है आप लोगों ने! बाकी अपने बाप को अकेला छोड़कर जानेवाली बेटी कभी सुखी नहीं होती। बाप की चिन्ता उसके ससुराल के सुख को खा जाती है। आपको क्या समझ में आएगा कि बेटी होने का मतलब क्या होता है? आने दो अब्बू को, अच्छे से समझाती हूँ।"

जब कुँआ खोदा जाता है तब आखिरी में गेती की एक ही चोट से पानी का फव्वारा फूटता है उसी तरह मरियम के शब्दों ने सुबह से रोके हुए पोस्टमास्टर के आँसुओं का बाँध तोड़ दिया। मामूद अ...ब्बू... करके रोने लगा। पोस्टमास्टर बाथरूम की ओर भागे।

मरियम लाचारी से खिड़की के सरिये पकड़कर आकाश की ओर देखने लगी। उसका मन चिल्ला उठा, "अ...ब्बू..." सरिये पर माथा टेककर रोने लगी।

रामजी थाली रख गया। पोस्टमास्टर मुँह धोकर आए, "चल मरियम खा लेते हैं।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"मुझे भूख नहीं है। मामूद को खिलाती हूँ।" मरियम ने पोस्टमास्टर की ओर देखा। उसकी आँखों में पोस्टमास्टर के प्रति स्नेह की किरण फूटती दिखाई दी।

"चाचा आप और मामूद खा लो। मैं अब्बू के आने के बाद ही खाऊँगी। मुझे आग्रह मत करना। अब्बू अपने मन में समझते हैं क्या? लो, चल पड़े.. .! कहाँ जाते हैं? कब आएँगे कुछ भी नहीं बताते! माना अब्बू शिकारी थे। पर मेरे लिए भी कुछ दया नहीं बची उनके हृदय में? मामूद को कभी देखा नहीं है तो उसको देखने का मन भी नहीं हुआ! सुना था ज्यादा दूरी मन का अंतर बढ़ा देती है, आज अनुभव किया।"

"मुझसे भी ज्यादा जरूरी कोई काम है क्या अब्बू को, यह मन नहीं मानता अभी भी, चाचा।" मरियम ने पहाड़ जैसा निःश्वास छोड़ा और मामूद को खिलाने लगी।

"चाचा, आप ही कहो आज मेरी अम्मी होती तो?" मरियम को सालों पहले गुजर गई अपनी माँ की याद आ गई। जिस अब्बू ने उसे माँ-बाप दोनों का प्यार दिया था आज वो मरियम की नजर में पीछे रह गए।

पोस्टमास्टर थाली हाथ में लिए खड़े हो गए। मामूद भी उनके पीछे भागा। पोस्टमास्टर ने घड़ी में देखा। उन्हें याद आया कि डाक बाँट दी गई होगी। अली के पास जाने का समय हो गया। इसी समय वह जर्जरित जीवन की गठरी को लकड़ी के सहारे उठाता प्राणप्रिय बेटी की चिठ्ठी की प्रतीक्षा को आनेवाले कल पर टालता डगमगाता चला जाता, कल फिर आने को। और...और नागफनी जैसे वे सब ठहाका मारकर हँसते। अली के कानों में वह हास्य काँटे की तरह चुभता होगा और उसकी भावनाओं को लहूलुहान कर डालता होगा पर न अली भगवान बुद्ध की तरह अपनी बेटी के ध्यान में मग्न चला जाता! उनकी नजर स्मृतिस्तंभ जैसे उस धब्बे पर गई और वहाँ से उड़कर कब्रिस्तान के आकाश पर चक्कर काटकर फिर मरियम पर आ अटकी। उन्होंने सोचा था कि शाम को मरियम को बताऊंगा पर मरियम की पीड़ा और आक्रोश और यह न बह पाते आँसुओं का बोझ शाम ढलने नहीं देंगे! वे खुद झुलस रहे थे पश्चाताप में। मरियम की तड़प कील बनकर उनकी छाती में ठुक रही थी। हाथ हृदय पर रखकर बोले,

"चल मरियम....."

"कहाँ? मेरे घर? अब्बू आ गए?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"हाँ, अब्बू के पास।"

मरियम बच्ची की तरह उछल पड़ी।

"चलो...चलो..मामूदमियाँ चलो...मेरे बड़े मामूद के पास...तेरे नाना...भी तेरे जैसे ही। कहाँ छुप गए थे?"

मरियम की आवाज में पंजाब मेल की तूफानी गति थी। वह पहले घर से बाहर निकल गई, सीधी पोस्टऑफिस की तरफ। पोस्टमास्टर ने आवाज दी,

"मरियम इधर...पीछे।" उन्होंने लक्ष्मीदास को बुला लिया था। वह भी अली की दी हुई पाँच गिनी लेकर आ गया था।

मरियम वापस मुड़ी। "पीछे से? अब्बू ने घर बदल दिया? अच्छा किया। मुझे कहते थे कि तेरे बिना यह घर खाने को दौड़ेगा। मैंने कहा था कि घर बदल लेना और घरवाली भी ले आना...अरे! चाचा, इसलिए तो अब्बू मेरे सामने आने से शरमा तो नहीं रहे न? ओये माँ!"

मरियम जोर से हँस पड़ी। मामूद को बोली, "मियाँ, नानी भी है, मेरी नई अम्मी! वाह भै वाह..."

मरियम आगे निकल गई। बगल में मामूद था वरना तो खूब तेज दौड़ती। पोस्टमास्टर को अपने पाँव पत्थर जैसे[2] होते लगे। बलपूर्वक पाँव को कब्रिस्तान की ओर लिए और लड़खड़ाती आवाज में चिल्लाये, "मरियम इस ओर..."

पोस्टमास्टर को कब्रिस्तान की ओर जाते देख मरियम जैसे खंभा हो गई। लक्ष्मीदास ने मामूद को उठाकर मरियम का हाथ पकड़कर उसे खींचा। पोस्टमास्टर कब्र के पास खड़े थे, उनके आँसू आँखों में दफन हो गए थे। मरियम कब्र को बाँहों में भरकर कब्रफाड़ रोने लगी, "मेरे अब्बू....मेरी राह भी न देखी? इतनी जल्दी?" पोस्टमास्टर बैठ गए। मरियम को छाती से लगाकर बोले, "मरियम! चल बेटा, अली को सोने दे, तेरी राह देख-देख कर तो वह थककर के यहाँ सोया है! उसे चैन से सोने दे बेटा....।" मरियम मामूद को लेकर कब्र पर माथा रखकर खामोश हो गई।

(गुजराती लेखक धूमकेतु की कहानी 'पोस्ट ऑफिस' का प्रकाशन वर्ष 1926 है। भारत की किसी भी प्रादेशिक भाषा में लिखी गई पहली कहानी है जिसे विश्व स्तर पर मान्यता प्राप्त हुई है। इसका समावेश ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय द्वारा चयनित श्रेष्ठ दस कहानियों 'टेन टेल्स' में तथा अमेरिका द्वारा 'स्टोरीज ऑफ मेनी लैन्ड्स' में किया गया है। इस संग्रह में शामिल 'पोस्ट मास्टर' कहानी इसकी अनुवर्ती कहानी है।)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

15.

कड़ुआ दरिया

कड़वी अपने देवर वालजी के दोनों हाथ पकड़ कर बच्चे की तरह पाँव पटक कर जिद कर रही थी, "मैं तेरे साथ आऊंगी ही, देखूं तो कैसे ना बोलता है!" इसकी देवरानी लीली अपने पति लालाजी से बिनती कर रही थी, "बहन को ले जाओ न, क्यों ना बोलते हो? बेचारी इतने सालों में पहली बार तुमसे कुछ माँग रही है।

वालजी पत्नी की बात को अनसुना कर के और दोनों को छोड़ कर पौरी के बाहर निकल कर किवाड़ बंद करके निकल गया।

कड़वी वहीं ओसारे में बैठ गई। लीली कुछ बोल न सकी। उसे अपने पति पर गुस्सा आ रहा था। उसे यह समझ में नहीं आया कि वालजी को बहन को साथ ले जाने में समस्या क्या थी? अगर वह मेरी बहन है तो उनकी भाभी भी तो है। और मुँह फुला कर वह रसोई में घुस गई।

बच्चे कब किवाड़ खोल कर अंदर आ गए, ये कड़वी के ध्यान में ही न रहा। रात हो गई थी।

"चल बहन! खा लेते हैं।" लीली ने पल्लू से हाथ पोंछते हुए ओसारे में बैठी अपनी बहन कड़वी से कहा। कड़वी की नजर अभी भी बंद किवाड़ पर ही टिकी हुई थी। लीली ने नजदीक आकर उसके कंधे पर हाथ रखकर फिर से कहा, "चलो ना बहन! बच्चों ने खा लिया है" कड़वी की नजर किवाड़ पर से हट कर लीली पर गई, "तू खाना खा ले, मुझे नहीं खाना, अब तो.." बोलते हुए अटक गई। लीली उसके पास बैठ गई,

"ऐसे तो जीवन में कुछ ना कुछ चलता ही रहता है पर खाए बगैर कैसे चले! अब तो सुख की रोटी खाने के दिन आये हैं, चल। तू देख तो सही,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
अभी पाँच दिन में ही वालजी मेरे जेठ जी को ले कर आ जायेंगे। अब तेरे सुख के दिन आये हैं, चल चल, मेरी बहन।" लीली ने कड़वी का हाथ पकड़कर खड़े करने की कोशिश की। कड़वी समझ गई कि लीली उसको छोड़ने वाली नहीं है इसलिए खड़ी हुई और लीली के पीछे रसोई में चली गई।

धुएँ की गंध फैली हुई थी। चूल्हे में जलाए हुए ईंधन पर राख जम गई थी, भूभल में से अभी भी थोड़ा-थोड़ा धुआँ उठ रहा था। कड़वी ने सोचा- ऐसे ही मेरे दहकते अरमानों पर भी राख छा गई थी, और ऊपरवाले की एक फूँक से.." इससे आगे वो ज्यादा सोच न सकी। अचानक उसकी नजर ऊपर गई। परछत्ती पर पड़े पीतल के बर्तन समंदर की खारी हवा लगने के कारण काले पड़ गए थे। दीवारों में सीलन लग गई थी। ऊपर खपरैल को टिकाने के लिए रखी बाँस की पट्टी के साथ बंधी सफेद रस्सी पर इतनी मक्खियाँ बैठी थीं कि रस्सी काली लग रही थी। कड़वी ने सोचा कि जरा रस्सी को हिला दूँ तो...

और उसके दिमाग में मक्खियों की तरह विचार भिनभिनाने लगे।

थाली में रोटी रखी हुई थी, मिट्टी की हाँडी में रखी छाछ जम गई थी। कढ़ाई में साग ठेठ तलिए पर चिपका हुआ था। सिलबट्टे पर लहसुन की ताजी चटनी पड़ी थी। लीली ने कटोरी में छाछ ली, रोटी के निवाले पर साग लिया, थोड़ी चटनी ली और निवाला कड़वी के मुँह में रखने के लिए हाथ लंबा किया। कड़वी ने चुपचाप मुँह खोला, और निवाला चबाने लगी।

कड़वी और लीली दोनों सगी बहनें थी। और एक ही घर में दो भाइयों के साथ ब्याही गई थी तो इस रिश्ते से दोनों देवरानी-जेठानी हुईं। ऐसा कहा जाता है कि माँ जनी दो बहनें अगर देवरानी-जेठानी बनें तो आपस में बनती नहीं है, पर यहाँ तो बात कुछ और ही थी।

खा-पी कर कड़वी फिर बाहर आई। आँगन में पड़ी खटिया पर दोनों बच्चे सो गये थे। दोनों लीली और वालजी के थे। उनका तो दिन चढ़ने से पहले सूर्यास्त हो गया था! उसने बच्चों को ठीक से सुलाया, चादर ओढ़ाई। फिर बाजू की खटिया पर खुद भी सो गई।

उसकी आँखों में मानो पूरा आकाश उतर आया। तारों के झुण्ड में वह ध्रुव तारा ढूँढ़ने लगी। अपने पति के शब्द उसे याद आये,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"ध्रुव को देखना है तो सीधा उत्तर में देखना। बिलकुल अकेला और तेजस्वी दिखता है ध्रुव। और देख, ये जो ऊपर दिखता है न चार तारों का चौक और उसकी पूँछ में तीन तारे लाइन में हैं वह है सप्तर्षि और उसके नीचे के दो तारों के दायें तरफ जरा दूर देख, तेजस्वी और अकेला, वह है ध्रुव। ध्रुव को ढूंढ़ना एकदम सरल है, बस सप्तर्षि को याद रखना। शादी के मंडप में तेरी माँ ने और मेरी माँ ने पंडित जी के कहने पर तेरे कानों में कौन-सा आशीष दिया था? वह याद कर 'वशिष्ठ-अरुंधती का सौभाग्य प्राप्त हो, ऐसा कहा था न? वे दो जोड़ी में दिखते हैं वे वशिष्ठ-अरुन्धती हैं।

कड़वी ने सप्तर्षि को ढूँढा और बोल पड़ी- 'वशिष्ठ-अरुन्धती का सौभाग्य!' उसके चेहरे की ध्रुव जैसी अचल उदासी और गहरी हो गई। फिर से पति के शब्द कान में गूँज उठे,

"यह दिशासूचक यंत्र तो अब आये हैं। हमारे पुरखे तो दरिया में रात को इस ध्रुव तारे को देखकर ही दिशा पहचान लेते थे। कभी भी भूलते नहीं थे। मूए इस दिशासूचक यंत्र के भरोसे कभी-कभी दरिया में भूल हो जाती है। यह है भी तो इंसान का ही बनाया हुआ न! कभी बिगड़ भी जाये। लेकिन यह कुदरत का बनाया हुआ होकला यानी ध्रुव तारा कभी भी न बिगड़े। यही तो फर्क है इंसानों में और कुदरत में।

कड़वी अपने पति के सामने अहोभाव से देखती रहती और वह सोचती कि कितना पढ़ा-लिखा है! कितना कुछ जानते हैं। उसे अपने पति कानजी के प्रति प्यार उमड़ आता। आँखों का प्यार का दरिया तूफानी हो उठता। और वह मन ही मन बोल उठती- 'दरिया में रहता है फिर भी कितना मीठा है!' और कानजी तो अपनी पत्नी कड़वी को मुँह पर कहता कि, "तेरा नाम कड़वी किसने रखा? तेरी बुआ ने तुझे चखा नहीं होगा वरना कड़वी नहीं तुम्हारा नाम मीठी रखती। यह तो मैं ही जानूँ कि तू कितनी मीठी है!" कड़वी शरमा जाती।

तारों में घूमते हुए कड़वी यादों के दरिया में डूबने लगी।

नजर के सामने आसमाँ को छूती हुई मौजें उमड़ने लगी। जहरीला साँप जैसे घायल होकर फन पटकता और मुँह से जहरीली झाग उगलता है वैसे ही दीव का दरिया आकाश को छूने की होड़ में उछलता था और फिर पहुँच न सकने के कारण खिसयाना होकर किनारे आकर ऐसे मत्था ठोकता था,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
जैसे पूरे दीव को निगल जाना चाहता हो! दीव के किल्ले की दीवार लाँघ कर ठेठ रास्ते पर आ जाता था। ऐसे तो कितने ही तूफानों की चाँटे-लातें खा-खाकर जीर्ण हो चुका। किला फिर भी डटकर खड़ा था।

दरिया का विकराल रूप देखकर किनारे पर छप-छपाक कर रहे सैलानियों ने दीव छोड़ दिया था। तट पर जो खड़े थे वे दीव के मछुआरे थे, जिनकी रग-रग में समन्दर उछल रहा था।

युवा मछुआरे आधुनिक दूरबीन लेकर दूर-दूर तलक दरिया को टटोल रहे थे। दरिया को बाँहों में लेकर जीने वाले इन नरबाँकुरों की आँखों में भी आज भय और बेबसी दिख रही थी।

जिनके पति सरकारी चेतावनी को अनसुना कर दरिया में मछली पकड़ने गए थे उनकी घरवालियाँ हृदय फट जाए ऐसे रो रही थीं। दरिया के खारेपन के सामने आँसू का खारापन जंग पर चढ़ा था - कौन ज्यादा खारा, कौन किसको डुबाता है? देखते न बन रहा था।

इस टोली में कड़वी भी थी। रो-रो के उसकी आँखें नारीयली पूनम पर समन्दर को चढ़ाई जाने वाली माताजी की लाल चुनरी जैसी हो गई थी। उसकी सास उसे मछुआरों के साहस, हिम्मत और शौर्य की बातें सुना-सुना कर उसे गौरवान्वित करते हुए ढांढ़स बँधा रही थी।

"इसमें क्या रोना! मछुआरिन हो कर दरिया से डर गई! दरिया तो देव है। वो हमारे छोरों को कुछ नहीं करता। और मेरा कानजी भी कैसा बहादुर है, ऐसे तूफान से डरे नहीं हाँ। वह तो नाव भी कैसे खेता है, जैसे कोई राजपूत घोड़ा चलाता है! कैसा भी तूफान क्यों न हो, मेरा बेटा इसमें से भी नैया पार कर निकाल लाये ऐसा है। रो मत, बहू।" बोलते हुए उसकी आवाज फट गई। आँखें बरस पड़ीं। वह कड़वी के हालात को अच्छी तरह समझ सकती थी। उनका पति भी ऐसे ही एक तूफान में दरिया में गया था जो कभी लौट कर न आया। दरिया में गये मछुआरे वापस आये तब सही माने कि आया है।

कड़वी की परिस्थिति उसकी सास से अलग थी। उसके ससुर जब दरियाई तूफान में फँसे और डूब मरे तब उन्हें दो बेटे थे। और यहाँ कड़वी की तो अभी पिछले साल ही शादी हुई थी। बच्चा हुआ नहीं था इसलिए दुल्हन का रूप भी अभी फीका नहीं हुआ था।

शाम हो चुकी थी। मत्था पटक-पटक कर दरिया भी थक कर शांत हो गया था! न करने वाला काम करके जैसे फिर शरमा रहा हो ऐसे धीरे-धीरे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh,Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गरज रहा था। मछुआरों की बस्ती सुनसान थी। आकाश की ओर देख कर कुत्ते लम्बी आवाज में भौंक रहे थे, उन्हें हट कहने वाला आज कोई न था। कोस्ट गार्ड ने पूरे भारत का दरिया छान डाला था पर कहीं कोई अता-पता नहीं था। दीव के छः युवा मछुआरें समाचार बन गये थे।

बस्ती के रहनेवाले लोग लापता मछुआरों के घर के आगे जमा हो गये थे, कड़वी पागलपन की हद पार कर गई थी, "काना..काना! मुझे छोड़ कर न जाना रे.. मैं भी आई.." बोलती हुई समन्दर की ओर भागी। इकट्ठा हुए लोगों ने उसे पकड़ लिया। डॉक्टर को बुला कर नींद का इंजेक्शन लगा कर सुला दिया। उसकी सास की स्थिति भी बेहद खराब थी। जवान बेटे का कोई पता नहीं था और जवान बहू पागलपन की कगार पर! क्या करें? उसने एक बार फिर अपने आपको सँभाल लिया था।

और दिन, महीने, साल गुजरते गये। लोगों की नजर में तो कड़वी के आँसू सूख गये थे पर आँखों से जो न बह पाये वे आँसू मौन का पहाड़ बन कर उसकी जीभ पर जमा होते जाते थे, वह एकदम चुप हो गई! सौदामिनी जैसी कड़वी सूखी नदी बन गई! सास ने प्यार देने में कुछ कमी न रखी। रिश्तेदारों ने इकट्ठे होकर तय किया कि कड़वी की शादी उसके देवर वालजी के साथ कर देते हैं। सास भी खुश हो गई। देवर से शादी वैसे भी उनकी जाति में सामान्य सहज बात थी। वालजी था अट्ठारह का और कड़वी बीस की। यह सुनकर कड़वी विलाप कर उठी,

"ना..ना, देवर से शादी नहीं। वालजी मेरे भाई जैसा है। आज बोले तो वो फिर कभी मत बोलना।"

अपनी छोटी बहन लीली के साथ देवर वालजी की शादी रचा दी। वालजी और लीली के बच्चे बड़े होने लगे थे और कड़वी की आँखों में रण फैल रहा था। उसकी चिंता में सास भी गुजर गई। सास की ही तरह वालजी और लीली ने भी कड़वी को सँभालने में कोई कमी न रखी। बच्चे भी बड़ी माँ के साथ ही खाते-पीते और सोते थे। कड़वी उन चारों पर अपना स्नेह बेशुमार उँड़ेल रही थी।

समय ने सब कुछ बदल डाला, पर न बदली कड़वी और न बदला दरिया। रात होते ही कड़वी आकाश की ओर देखती रहती। ध्रुव के तारे में कानजी के चेहरे को ढूँढती रहती।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

○

एक दिन डाक आई, कड़वी का हृदय दरिया की तरह उछल गया। कानजी था.. जिन्दा था! पाकिस्तान की जेल में सड़ रहा था। उस तूफान ने उसकी नाव को पाकिस्तान की सरहद पार पहुँचा दिया था। चारों मछुआरों को पाकिस्तानी कोस्ट गार्ड ने पकड़ कर जेल में डाल दिया था। उस बात को आज पंद्रह साल हो गये थे।

पूरे गाँव में खबर फैल गई। लोग कड़वी से मिलने आने लगे। कड़वी के अंदर एक नई कड़वी उगने लगी- कानजी की मिट्टी! उसकी आँखों में आशा तैरने लगी थी- कभी तो कानजी वापस आएगा। वो जानती थी कि पाकिस्तानी जेल में भारतीय कैदियों की क्या हालत होती है। बचपन से वह यह सब बातें जानती थी। उसका हृदय खौफ से भर गया। उसने मन्नत मांगी, "माँ शिकोतर! मेरे कानजी को उन राक्षसों की जेल में से छुड़ा ला, माँ! तेरी देहरी पर आकर कुंआरी कन्याओं को भोजन कराऊंगी।"

दरिया के आगे नारियल फोड़ा, मथ्था टेक कर माफी मांगने लगी, "मेरे माँ-बाप! माफ करना। उस दिन तुझे क्या-क्या कह डाला था! माँ-बाप हो हमारे, माफ कर देना।"

पंजाब की वाघा बॉर्डर से मछुआरे आने वाले थे। उनके परिवार वालों को पत्र से जानकारी दे दी गई थी। वालजी वहीं गया हुआ था। इसलिए तो कड़वी भी साथ जाने की जिद कर रही थी। पर उसकी एक न चली थी। ओसारे में निराश हो कर बैठ गई थी। पन्द्रह साल निकाले थे उसने अब पाँच दिन भी निकालना बेहद मुश्किल था। वालजी भी भाभी की पीड़ा समझता था पर क्या करें, घर में से किसी एक को ही जाने की इजाजत थी। यह जानकर लीली बोल पड़ी थी कि, "मुए! सरकारी लोग क्या जाने कि पन्द्रह साल का विरह क्या होता है? मत माँगने आते हैं तब तो नहीं कहते हैं कि घर में से कोई एक ही आना। तब तो, "आओ आओ..और वोट दे सको इतने आओ !" लीली के हाव-भाव देख कर वालजी हँस पड़ा था। बड़ा भाई आ रहा है इस बात से उनमें भी जोश आ गया था। दोनों बहनों को छोड़ कर वह चला गया था।

दो दिन बाद पड़ोसी के घर फोन आया था। कड़वी और लीली बच्चों की तरह दौड़ी थी। फोन वालजी का था। उसने कड़वी को कहा, "ले भाभी! मेरे भाई से बात कर।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कड़वी की आवाज में पंद्रह साल घुटन बन के बैठ गया। उसका मन पति की आवाज सुनने को बेचैन हो उठा। चेहरा लाल-लाल हो गया। आँखें बंद हो गई थीं और मन भूतकाल के गलियारों में भाग गया था। 'मीठी' शब्द सुनने को अधीर हुए कान में जाने कीड़ा घुसा हो ऐसे काँप उठी। उधर से खाँसी की खोखली, गले में खखार और हाँफते हुए बोला गया शब्द, 'क.ड़.वी..वी।

प्यार में सराबोर कड़वी चिंता में डूब गई। आवाज कांपने लगी, "क.का. .ना.." ऊधर फोन पर फिर से वालजी आ गया था, "भाभी! मेरे भाई को सिर्फ कफ है। यहाँ आकर सब ठीक हो जायेगा। मेरा हाथ पकड़ कर उसने सबसे पहले तेरा हाल पूछा। बस अब तो दो दिन हैं, मिलते हैं।

बगैर सुने लीली बहुत कुछ समझ गई थी। कड़वी का चेहरा पत्थर होता देख उसकी धड़कनें तेज हो गई थीं। बहन का हाथ पकड़ कर वह घर आई। दोनों सुख और दुख की मिश्र भावना में पिस रही थीं। लीली के दिमाग की नसें तंग हो गई थी। उसे अपनी बहन की चिंता खाये जा रही थी, 'पागल तो नहीं हो जायेगी न!' वह डॉक्टर से कड़वी के लिए नींद की गोलियां लाई, कड़वी को खिला कर सुला दिया। बच्चे सो गए थे। लीली को नींद नहीं आ रही थी। इतने में मुंडेर पर बैठा उल्लू बोल उठा। लीली का शरीर सिहर गया। उसने टी.वी. लगाया, समाचार आ रहे थे, "पाकिस्तान की जेल में से पन्द्रह साल के बाद छुटकारा पा कर घर आ रहे दीव के मछुआरे कानजी टंडेल की ट्रेन में ही मृत्यु।"

लीली की आँखें पथरा गई, गले में से घरर.. आवाज आने लगी, मुँह में से गाली निकल गई, "अपनी माँ के खसम पाकिस्तान, तेरी तो.." उसकी आँखों में पागलपन सवार हो गया था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

नाम : वंदना शांतुइन्दु

Gandhi Memorial College Of Education Bantala

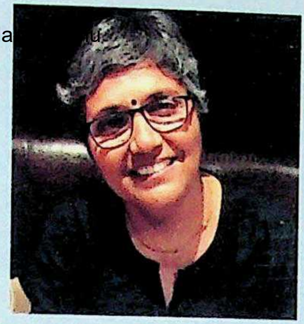

वतन : कालावड (शीतला), जिल्ला-जामनगर, गुजरात।

हाल निवास : वडोदरा, गुजरात।

प्रकाशित पुस्तकें-

1. 'झंखना परोढनी - (गुजराती कहानी संग्रह), गुजराती साहित्य परिषद का भगिनी निवेदिता पुरष्कार।
2. 'कोलाज वर्क' (हिन्दी कविता संग्रह)
3. 'एकडा बगड़ा आराम करे छे' (बाल गीत संग्रह)
4. पेट्रो... पेट्री...पम' (बाल कहानीसंग्रह)
5. डॉ क्षमा कौल का हिन्दी उपन्यास 'दर्दपुर' का गुजराती अनुवाद 'दर्दपुर-कथा कश्मीर की'। जिसे गुजराती साहित्य अकादमी का द्वितीय पुरस्कार।

'दर्दपुर-कथा कश्मीर की गुजरात की भक्त कवि नरसिंह महेता युनिवर्सिटी के TYBA के अभ्यासक्रम में है।

6. अंधेरे का रंग' : गुजराती कहानी संग्रह
7. 'हलमा' गुजराती उपन्यास (विश्व कोष भवन अंतर्गत 'विश्वा' द्वार आयोजित उपन्यास स्पर्धा में विजेता)
8. 'समय साक्षी है' : क्रान्ति कनाटे की हिन्दी कविताओं का गुजराती अनुवाद।
9. अखिल भारतीय साहित्य परिषद द्वारा भारतीय भाषा के लेखकों के सम्मान समारोह में गुजराती लेखक के तौर पर मा. श्री मोहनजी भागवत के हाथौ सम्मानित।

गुजराती व हिंदी साहित्य के विभिन्न पत्र- पत्रिकाओंमें कहानियां प्रकाशित।

कथादेश(हिंदी) की अखिल भारतीय लघुकथा प्रतियोगिता में 'गंध' लघुकथा को दूसरा पुरस्कार प्राप्त।

कुछ कहानियों का पंजाबी में अनुवाद पंजाबी लेखिका मीना नवीन ने किया है, उस पुस्तक का शीर्षक है 'गुजराती झलकारें।

संपर्क- वंदना शांतुइन्दु,

1,कल्याण नगर, दिवालीपुरा, जे.पी.रोड, बड़ौदा-7

(गुजरात)

मो.9662059806

Email:vandanaibhatt@gmail.com

डायमंड बुक्स

Shop online at www.diamondbook.in

ISBN 978-93-5599-704-3

SHORT STORIES

₹ 175

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant